अथ

श्रावणमासमाहात्म्यम् ।

भाषाटीका सहितं प्रारभ्यते ।

प्रकाशक–भार्गवपुस्तकालय, गायघाट, बनारस १. (ब्रांच–कचौड़ीगली, बनारस) ।

इन मासों से कोई श्रेष्ठ मास आप को सम्मत हो ।४।। क्योंकि ईश्वर को सदा धर्म प्रिय है इस समय उसको आप कहिये जिसके सुनने से फिर मेरी अन्यत्र सुनने की इच्छा न होवे और वक्ता (व्यास) लोग श्रद्धालु श्रोता से तो कोई बात गुप्त ही नहीं रखते हैं ।।५।। सूतजी बोले। आप समस्त मुनि लोग श्रवण करें, आपके वचनगौरव (कहने) से मैं प्रसन्न हुआ और आपके लिये मेरे को कोई भी गोप्य वस्तु नहीं है ।।६।। दम्भ रहित होना, आस्तिक बुद्धि होना, शठता का न

॥४॥ धर्म ईशप्रियो नित्यं तं त्वं कथय साम्प्रतम् ॥ यच्छ्रुत्वा पुनरन्यत्र श्रोतुमिच्छा न नो भवेत् ॥ श्रद्धालोः श्रोतुरग्रे तु वक्ता गोप्यं न कारयेत् ॥५॥ सूत उवाच—शृणुध्वं मुनयः सर्वे भवतां वाक्यगौरवात् ॥ तुष्टोऽहं न च गोप्यं मे भवदग्रे तु किञ्चन ॥६॥ अदाम्भित्वं तथास्तिक्यमशठत्वं सुभक्तता ॥ ७ ॥ शुश्रूषत्वं विनीतत्वं ब्रह्मण्यत्वं सुशीलता ॥ ध्रुवत्वं च शुचित्वं च तपस्वित्वानसूयते ॥ ८ ॥ एते द्वादशसंख्याका गुणाः श्रोतुः प्रकीर्तिताः ॥ ते सर्वेऽपि भवत्स्वेव तुष्यंस्तत्त्वं ब्रवीम्यतः ॥ ९ ॥ सनत्कुमारो मेधावी धर्मजिज्ञासुरानतः ॥

होना, ईश्वर में भक्ति का होना ॥ ७ ॥ श्रवण की इच्छा होना, नम्रता का होना, ब्राह्मणों का भक्त होना, सुशील स्वभाव का होना, धीरता (धैर्य) का होना, पवित्रता (बाह्य शुद्धि) का होना, तपस्वी का होना और असूया (दोषारोपण) से रहित होना ॥ ८ ॥ ये सब १२ बारह गुण श्रोता के कहे गये हैं सो वे सब गुण आपलोगों में ही विद्यमान हैं इससे मैं प्रसन्न होता हुआ आप से तत्त्व बात को कहता हूँ ॥ ९ ॥ धर्म जानने की इच्छा से

बुद्धिमान् सनत्कुमारजी ईश्वर को नमस्कार करके परम भक्ति से पूछते भये ॥ १० ॥ सनत्कुमारजी बोले। हे देवों के देव ! हे महादेव ! हे योगियों के ध्येय चरणकमल वाले ! आपसे बहुत से व्रत और समस्त धर्मों को सुना है ॥ ११ ॥ फिर भी इस समय मेरे हृदय में एक सुनने की इच्छा वर्तमान है कि जो बारहों मास में अधिक श्रेष्ठ मास कहा गया हो

ईश्वरं परिपप्रच्छ भक्त्या परमया युतः ॥१०॥ सनत्कुमार उवाच—देवदेव महादेव योगिध्येयपदाम्बुज ॥ व्रतानि बहुशस्त्वत्तः श्रुता धर्माश्च सर्वशः ॥११॥ तथापि श्रोतुमिच्छैका वर्तते हृदि साम्प्रतम् ॥ द्वादशस्वपि मासेषु मासः श्रेष्ठतमः स्मृतः ॥१२॥ तव प्रीतिकरोऽत्यन्तं सिद्धिदः सर्वकर्मणाम् ॥ अन्यमासे कृतं कर्म तदेवास्मिन्कृतं यदि ॥१३॥ स्यादनन्तफलं देव तं मासं वक्तुमर्हसि ॥ तत्रत्यान् सर्वधर्मांश्च लोकानुग्रहकाम्यया ॥१४॥ ईश्वर उवाच—सनत्कुमार वक्ष्यामि सुगोप्यमपि सुव्रत ॥ शुश्रूषत्वेन भक्त्या च प्रीतोऽस्मि विधि-

॥ १२ ॥ और आपको अत्यन्त प्रसन्न करनेवाला हो तथा समस्त कर्मों की सिद्धि देने वाला हो और अन्य मास में किये जाने वाले कर्मों को यदि इस मास में वे कर्म किये जायँ ॥१३॥ और हे देव ! जिन कर्मों के करने से अनन्त फल की प्राप्ति हो ऐसे उस मास को आप कहिये और लोक के कल्याण के लिये उस मास के समस्त धर्मों को कहिये ॥ १४ ॥ ईश्वर सनत्कुमार से बोले। हे सनत्कुमार ! हे सुव्रत ! हे विधिनन्दन ! अर्थात् हे ब्रह्मा के पुत्र ! आपकी शुश्रूषा और भक्ति

से मैं प्रसन्न हुआ अब मैं तुमसे सुगोप्य (अत्यन्त गोपनीय) बात भी कहूँगा ॥१५॥ बारहो मास में श्रावण मास मुझे अत्यन्त प्रिय है जो कि श्रावणमास का माहात्म्य श्रवण योग्य होने के कारण मास का श्रावण अन्वर्थ नाम हुआ ॥१६॥ और पूर्णिमा को श्रवण नक्षत्र का योग होने से भी मास का श्रावण नाम कहा गया और जो कि श्रवणमात्र से सिद्धि को देनेवाला है इसलिये भी श्रावण नाम कहा गया ॥१७॥ नभ (आकाश) के समान स्वच्छ होने से नभा नाम कहा

नन्दन ॥१५॥ द्वादशस्वपि मासेषु श्रावणो मेऽति वल्लभः ॥ श्रवणार्हं यन्माहात्म्यं ततोऽसौ श्रावणो मतः ॥ १६ ॥ श्रवणर्क्षं पौर्णमास्यां ततोऽपि श्रावणः स्मृतः ॥ यस्य श्रवणमात्रेण सिद्धिदः श्रावणोप्यतः ॥ १७ ॥ स्वच्छत्वाच्च नभस्तुल्यो नभा इति ततः स्मृतः ॥ तत्रत्यधर्मगणनां कर्तुं कः शक्नुयाद्भुवि ॥ १८ ॥ सर्वतो यत्फलं वक्तुं चतुरास्योऽभवद्विधिः ॥ द्रष्टुं यत्फलमाहात्म्यं सहस्राक्षोऽभवद्वृषा ॥ १९ ॥ अनन्तो यत्फलं वक्तुं सहस्रद्वयजिह्वकः ॥ किं बहूक्तेन कोऽप्येतद् द्रष्टुं वक्तुं न च क्षमः ॥२०॥ एतत्फलामपि मुने लभते

गया है उस मास के धर्मों की गणना करने को पृथ्वी पर कौन समर्थ हो सकता है ॥ १८ ॥ जिसके समस्त फलों को कहने के लिये ब्रह्मा चतुरानन (चार मुख वाले) हुये आर जिस श्रावणमास के माहात्म्य को देखने के लिये इन्द्र सहस्राक्ष (१००० नेत्र वाले) हुये ॥ १९ ॥ तथा अनन्त (शेष) भगवान् जिसके फल को कहने के लिये दो हजार जिह्वा को धारण करते भये। विशेष (अधिक) कहने से क्या है? इस मास को देखने और कहने में कोई भी समथ नहीं हुआ ॥२०॥

हे मुने ! अन्य मास इसकी कला को भी नहीं पा सकते हैं । समस्त (३० दिन का पूरा) श्रावण महीना व्रतमय (व्रतरूप) है तथा समस्त श्रावणमास धर्ममय (धर्मरूप) है ॥२१॥ जिस मास में कोई भी दिन व्रत से शून्य नहीं देख पड़ता है । प्रायः इस मास में तिथियाँ व्रतवाली हैं ॥ २२ ॥ यहाँ पर मैं जो २ कहता हूँ वह अर्थवाद (झूठी प्रशंसा) नहीं है ।

नान्यमासकः ॥ सर्वो व्रतमयश्चैष सर्वो धर्ममयः स्मृतः ॥ २१ ॥ न कोऽपि वासरो यत्र व्रतशून्यः प्रदृश्यते ॥ प्रायेण तिथयश्चापि व्रतवत्योऽत्र मासि वै ॥ २२ ॥ अत्रोच्यते मया यद्यदर्थवादो न सोऽत्र हि ॥ आर्तैर्जिज्ञासुभिर्भक्तैस्तथार्थार्थिमुमुक्षुभिः ॥२३॥ चतुर्विधैरपि जनैः सेव्यः स्वस्वेष्टकाङ्क्षिभिः ॥ सनत्कुमार उवाच ॥ भगवन् यस्त्वया प्रोक्तो व्रतशून्यो न वासरः ॥ २४ ॥ प्रायेण तिथिरप्यत्र तन्ममाचक्ष्व सत्तम ॥ कस्यां तिथौ किं व्रतं स्यात् कस्मिन्वारे च किं व्रतम् ॥ २५ ॥ तत्र तत्राधिकारी कः किं फलं कीदृशो विधिः ॥ केन

इसलिये आर्त (पीड़ित), तथा जिज्ञासु भक्त, अर्थी और मुमुक्षु ॥ २३ ॥ इन चतुर्विध जनों से अपनी २ अभीष्ट अभिलाषा से यह श्रावण मास सेवन योग्य है । सनत्कुमारजी बोले कि हे भगवन् ! आपने जो कहा कि इस मास में कोई भी दिन व्रतशून्य नहीं है ॥२४॥ और प्रायः करके इस मास में तिथि भी व्रतशून्य नहीं हैं । हे श्रेष्ठ ! उसको आप मुझ से कहिये कि किस तिथि में कौन व्रत होता है और किस वार में कौन व्रत होता है ॥ २५ ॥ और उस २ व्रत का

अधिकारी कौन है ? और फल क्या है ? तथा विधि किस प्रकार की है ? और किसने २ व्रत को किया ? तथा उद्यापन विधि क्या है ? ॥२६॥ देवता कौन है ? पूज्य कौन है ? पूजन की सामग्री क्या है ? प्रधान पूजन किसका है ? जागरण की विधि क्या है ? ॥ २७ ॥ किस व्रत का कौन काल (समय) है ? हे प्रभो ! वह सब मुझसे कहिये और श्रावणमास

केनापि चाचीर्णमुद्यापनविधिश्च कः ॥ २६ ॥ को देवः कोऽत्र पूज्यः स्यात् सामग्री पूजनस्य का ॥ प्रधानं पूजनं कुत्र जागरश्चापि तद्विधिः ॥ २७ ॥ कस्य व्रतस्य कः कालस्तत्सर्वं वद मे प्रभो ॥ त्वत्प्रियश्च कथं मासः पवित्रः केन हेतुना ॥ २८ ॥ मासेऽस्मिन्नवतारः कः श्रेष्ठश्चायं कुतोऽभवत् ॥ अस्मिन्मासे च के धर्मा अनुष्ठेया वद प्रभो ॥ २९ ॥ प्रश्नेऽपि च कियज्ज्ञानं ममाज्ञस्य तवाग्रतः ॥ अशेषेण समाचक्ष्व पृष्टादन्यच्च यद्भवेत् ॥३०॥ जनानां तारणार्थाय कृपालो कृपया वद ॥ रवौ सोमे भौमवारे बुधे सुरगुरौ कवौ ॥३१॥

आपका प्रिय कैसे हुआ तथा किस कारण से पवित्र कहा गया ॥२८॥ इस मास में कौन अवतार श्रेष्ठ माना गया है ? और यह मास श्रेष्ठ कैसे हुआ ? तथा इस मास में कौन धर्म अनुष्ठान करने योग्य है हे प्रभो ! सो मुझसे कहिये ॥२९॥ आपके सामने मुझ मूर्ख को प्रश्न करने का कितना ज्ञान हो सकता है ? इसलिए पूछने से जो रह गया है वह सब मुझसे कहिये ॥३०॥ हे कृपालो ! कृपा करके जनों के उद्धार के लिये कहिये। रविवार, सोमवार, मङ्गलवार, बुधवार,

बृहस्पतिवार, शुक्रवार ॥ ३१ ॥ शनिवार के दिन जो कुछ व्रत आदि किया जाता हो वह सब हे प्रभो ! कृपा करके मुझसे कहिये । क्योंकि आप सब के आदि कारण हो इसीलिये आप आदिदेव कहे जाते हैं ॥ ३२ ॥ जैसे एक विधि को बाँधकर अन्य विधि का विधान होता है इसी तरह अन्य देवताओं के अल्प (छोटे) देवता होने से आप महादेव (बड़ा देव) कहे जाते हैं ॥३३॥ पिप्पल वृक्ष में ब्रह्मा, विष्णु, शिव तीनों देवता का वास है उसमें भी आप का वास

शनैश्चरदिने चापि तत्सर्वं वद मे प्रभो ॥ सर्वेषामादिभूतस्त्वमादिदेवस्ततः स्मृतः ॥३२॥
एकस्य विधिबाधाभ्यामन्यत्राधाविधी यथा ॥ अन्येषामल्पदेवत्वान्महादेवस्ततः स्मृतः ॥३३॥
देवत्रयाश्रयेऽश्वत्थे उपर्यास्ते स्थितिस्तव ॥ शिवस्त्वं शिवरूपत्वादघौघहरणाद्धरः ॥३४॥
तव चैवादिदेवत्वं प्रमाणं शुक्लवर्णकः ॥ प्रकृतौ शुक्लवर्णेऽन्ये वर्णाः स्युर्विकृतिं गताः ॥३५॥
यतः कर्पूरगौरस्त्वमादिदेवस्ततो ह्यसि ॥ गणपत्याधारभूतान्मूलाधाराच्चतुर्दलात् ॥३६॥
स्वाधिष्ठानाभिधात्पद्मात्षड्दलाद्ब्रह्मदैवतात ॥ मणिपूराद्दशदलान्मण्डलाद्विष्णवधिष्ठितात्

सबसे ऊपर (अग्रभाग) में कहा है । आप शिव (कल्याण) रूप होने से शिव हैं और पापसमूह के नाशक होने से हर हैं ॥ ३४ ॥ और आपके आदिदेव होने में प्रमाण शुक्ल (श्वेत) वर्ण है । क्योंकि प्रधान शुक्लवर्ण में विकृति (विकार) को प्राप्त होकर अन्य वर्ण होते हैं ॥ ३५ ॥ अतः आप कर्पूर के समान गौर होने से आप आदिदेव हैं । प्रथम गणपति का अधिष्ठान रूप चार दल का मूलाधार नामक चक्र है ॥ ३६ ॥ उसके ऊपर अधिष्ठान रूप छ दल का

ब्रह्मा का स्वाधिष्ठान नामक दूसरा चक्र है, उसके ऊपर अधिष्ठानरूप १० (दस) दल का विष्णुभगवान् का मणिपूर नामक तीसरा चक्र है॥ ३७ ॥ उसके ऊपर हृदयमें अधिष्ठान रूप १२ (बारह) दल का अनाहत नामक चौथा चक्र है। सबके हृदयमें होनेवाले उस चक्रमें आपकी स्थिति कही जाती है ॥ ३८ ॥ ब्रह्मा और विष्णुके ऊपर आपका वास होने से

॥ ३७ ॥ उपरि द्वादशदलेऽनाहताख्ये हृदि स्थिते ॥ तव स्थितिर्बोधयन्ती सर्वेषां हृदये स्थिताम् ॥३८॥ ब्रह्मविष्णूपरिष्टात्त्वं वदतीदं च मुख्यताम् ॥ एकस्य तेऽर्चनादेव पञ्चायतनपूजनम् ॥३९॥ जायतेऽन्यसुरे चैवं सम्भवो नहि सर्वथा॥ स्वयं शिवस्त्वं वामोरौ शक्तिर्गणपतिस्तथा ॥४०॥ दक्षिणोरावक्षिण सूर्यो हृदये भक्तराड्हरिः ॥ अन्नस्य ब्रह्मरूपत्वाद्रसात्मत्वाद्धरेरपि ॥४१॥ भोक्तृत्वाच्च तवेशान श्रेष्ठत्वे कस्य संशयः ॥ विरक्तत्वं शिक्षयति श्मशाने पर्वते स्थितिः ॥४२॥ उतामृतत्वस्येशानमन्त्रलिङ्गेन सूक्तके॥ पौरुषे प्रतिपाद्योऽसि

मुख्यता कही जाती है। केवल आपके पूजन से पञ्चायतन का पूजन हो जाता है ॥३९॥ ये सब अन्य देवताओं में सम्भव नहीं है । आप स्वयं शिव हैं । आपके वाम उरू (जंघा) में शक्ति (पार्वती) का वास है, गणपति का ॥४०॥ दक्षिण जांघ में, नेत्र में सूर्य का, हृदय में भक्तराट् हरि भगवान् का वास है। तथा अन्न ब्रह्ममय कहा गया है और हरि भगवान् रसरूप (जलरूप) कहे जाते हैं ॥४१॥ हे ईशान ! जब उस अन्न जल के भोक्ता आप हैं तो आपकी श्रेष्ठता में किस को सन्देह

हो सकता है। आपका श्मशान तथा पर्वत में निवास ही सबको विरक्तता की शिक्षा दे रहा है ॥४२॥ 'उतामृतत्वस्येशान—'संहिता अ. ३१ मन्त्र २ इत्यादि मन्त्र आपके बोधक हैं और इन पुरुषसूक्त मन्त्रों से प्रतिपाद्य (कहे जाते) हैं, ऐसा महर्षि लोग कहते हैं ॥४३॥ जगत् का संहार कारक हालाहल को अपने गले में किसने धारण किया और महाप्रलय के लिये कालाग्नि को अपने भाल (मस्तक) में धारण करने को कौन समर्थ है ॥ ४४ ॥ संसाररूप अन्धकूप में

इति प्राहुर्महर्षमः ॥ ४३ ॥ जगत्संहारकं हालाहलं केन धृतं गले ॥ महाप्रलयकालाग्निं भाले धर्तुं च कः क्षमः ॥४४॥ भवान्धकूपपतने हेतुः केन हतः स्मरः ॥ किं वर्ण्यं भागधेयं ते यद्वक्तुर्हीदृशो भवान् ॥४५॥ त्वां स्तोतुं जन्मकोट्यापि वराकोऽहं न च क्षमः ॥ कृत्वा मयि कृपामेव मत्प्रश्नान् वक्तुमर्हसि ॥ ४६ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

गिरने का कारण कामदेव का किसने वध किया ? आप ऐसे हैं इस प्रकार आप के भाग्य का कौन वर्णन कर सकता है ॥ ४५ ॥ तुच्छ मैं आपकी स्तुति के लिये कोटि जन्म लेकर भी समर्थ नहीं हूँ। मेरे ऊपर कृपा करके मेरे प्रश्नों को आप कहने के योग्य हैं ॥ ४६ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये भाषाटीकायां प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

ईश्वर (शङ्कर) सनत्कुमार जी से बोले कि हे महाभाग! ठीक है ठीक है, हे विरिञ्चिज! (ब्रह्मा के पुत्र!) आप विनीत (नम्र) हैं और जिस कारण आप श्रद्धालु हैं, भक्ति से भूषित हैं तथा समस्त गुणों से युक्त श्रोता हैं ॥१॥ हे अनघ! श्रावणमास के विषय में आपने जो पूछा वह और विना पूछा हुआ भी मैं प्रसन्नता के साथ परम प्रेम से तुम

ईश्वर उवाच—साधुसाधु महाभाग विनीतोऽसि विरिञ्चिज॥ श्रोता गुणयुतो यस्माच्छ्र-द्धालुर्भक्तिभूषितः ॥१॥ श्रावणे मासि विषये यत्पृष्टं भवताऽनघ॥ अपृष्टमपि ते वक्ष्ये प्रेम्णा परमया मुदा ॥ २ ॥ प्रियो भवति चाद्वेष्टा नम्रस्त्वं च तथाविधः॥ पञ्चमो मस्तकश्छिन्नः प्रोद्धतस्य पितुस्तव ॥३॥ त्वं च तं मत्सरं त्यक्त्वा मां यतः शरणं गतः॥ अतो वक्ष्यामि ते तात भूत्वा चैकमनाः शृणु ॥४॥ कुर्यान्नक्तव्रतं योगिन् श्रावणे नियतो नरः॥ रुद्राभि-षेकं कुर्वीत मासमात्रं दिनेदिने ॥ ५ ॥ स्वप्रीतिविषयस्यापि कस्यचित्त्यागमाचरेत्॥ पुष्पैः

से कहता हूँ ॥२॥ द्वेष रहित मनुष्य प्रिय होता है और आप वैसे ही नम्र हैं। आपके पिता उद्धत थे इसलिये उनका पाँचवाँ शिर काटा गया ॥३॥ उस मत्सरता को त्याग कर तुम मेरे शरण आये इसलिए हे तात! मैं तुमसे कहूँगा तुम एकाग्रमन होकर सुनो ॥४॥ हे योगिन्! श्रावणमास में नियम में रहकर मनुष्य नक्तव्रत (४ बजे शाम को भोजन) को करे और एकमास प्रतिदिन रुद्राभिषेक को करे ॥५॥ अपने को प्रिय किसी चीजका त्याग करे, और पुष्प, फल, धान्य,

तुलसी की मञ्जरी युक्त दल ॥६॥ और बिल्वपत्रों से शङ्कर भगवान् की लक्षपूजा करे और कोटिलिङ्ग आदि बनाकर पूजन करे तथा ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥७॥ धारण (नियम का धारण) पारण (नियम की समाप्ति) को करे और उपवास को भी करे तथा पञ्चामृत से अभिषेक मुझको अति प्रीतिकर है उसको भी करे ॥८॥ इस मास में जो २ किया जाय वह अनन्त

फलैश्च धान्यैश्च तुलसीमञ्जरीदलैः ॥ ६ ॥ बिल्वपत्रैर्लक्षपूजां शङ्करस्य समाचरेत् ॥ कोटि-लिङ्गादिकर्तव्यं ब्राह्मणांश्चैव भोजयेत् ॥७॥ धारणापारणे कुर्यादुपोषणमथापि च ॥ पञ्चा-मृताभिषेकं च मम प्रीतिकरं परम् ॥८॥ अस्मिन्मासे कृतं यद्यत्तदानन्त्याय कल्पते ॥ भूमि-शायी ब्रह्मचारी सत्यवादी भवेन्मुने ॥ ९ ॥ न नयेन्मासमेनं तु व्रतवन्ध्यं कदाचन ॥ अनोदनं समश्नीयाद्धविष्यान्नमथापि वा ॥ १० ॥ पत्रे चैव समश्नीयाच्छाकमात्रं त्यजे-द्व्रती ॥ किञ्चिद्व्रती सर्वथा स्याद्भक्तिमान्मुनिसत्तम ॥११॥ सदाचारो भूमिशायी प्रातः

फल को देनेवाला होता है। हे मुने ! पृथिवी पर शयन करे, ब्रह्मचर्य से रहे, सत्य वचन बोले ॥९॥ इस मास को कभी भी व्रतवन्ध्य (व्रत से रहित) न व्यतीत करे। ओदन (चावल) रहित अन्न का भोजन करे अथवा हविष्यान्न का भोजन करे ॥१०॥ और पत्र (पत्तल) में भोजन करे तथा मासव्रती शाकमात्र का त्याग करे हे मुनिश्रेष्ठ ! अवश्य भक्ति से किसी व्रत को करे ॥११॥ सदाचार को करे, पृथिवी पर शयन करे, प्रातःकाल स्नान करे, इन्द्रियों को वश में करे

और एकाग्र मन होकर प्रतिदिन मेरी पूजा को करे ॥ १२ ॥ इस मास में मन्त्रों का पुरश्चरण भी उत्तम सिद्धि को देने वाला है । षडक्षर (६ अक्षर वाले) शिवमन्त्र का और गायत्रीमन्त्र का जप करे ॥१३॥ प्रदक्षिणा और नमस्कार तथा वेद के पारायण (पाठ) को करे तो सद्यः फलता है और वाञ्छित फल को देनेवाला होता है ॥ १४ ॥ और पुरुषसूक्त

स्वायी जितेन्द्रियः ॥ मत्पूजां प्रत्यहं कुर्यादेकाग्रकृतमानसः ॥१२॥ पुरश्चरणमप्यत्र मन्त्राणां सिद्धिदं परम् ॥ शिवषड्वर्णमन्त्रस्य गायत्र्याश्च जपं चरेत् ॥ १३ ॥ प्रदक्षिणा नमस्काराश्च वेदपारायणं तथा ॥ कृतं फलति सद्यो वा वाञ्छितार्थफलप्रदम् ॥१४॥ जपः पुरुषसूक्तस्य अधिकं फलदो भवेत् ॥ ग्रहयज्ञः कोटिहोमो लक्षहोमोऽयुतस्तथा ॥ कृतः फलति सद्योऽत्र वाञ्छितार्थफलप्रदः ॥ १५ ॥ अस्मिन्मासे चैकदिनं यो वन्ध्यं व्रततो नयेत् ॥ स याति नरकं घोरं यावदाभूतसम्प्लवम् ॥ १६ ॥ यथायं मे प्रियो मासस्तथा किञ्चिन्न मे प्रियम् ॥ काम्यश्च फलदश्चायं निष्कामस्य तु मोक्षदः ॥ १७ ॥ तत्रतत्र तु ये धर्मास्तन्मत्तः शृणु

का जप अधिक फल को देनेवाला होता है । ग्रहयज्ञ, कोटिहोम, लक्ष होम तथा अयुत (दशहजार) होम करने पर सद्यः फलता है और वाञ्छित फल को देनेवाला होता है ॥ १५ ॥ जो इस मास में एक दिन भी व्रत (नियम) से वन्ध्य (रहित) व्यतीत करता है वह महाप्रलय तक के लिये घोर नरक को जाता है ॥ १६ ॥ जैसा यह मास मेरा

प्रिय है वैसा कोई भी मेरे को प्रिय नहीं है। यह मास काम्य (कामना के अनुसार फलदाता) है और फलों को देने वाला है तथा निष्काम मनुष्य के कृत कर्म का मोक्ष फल दायक है ॥ १७ ॥ हे सत्तम (श्रेष्ठ) ! तत्तत् समय में जो धर्म कहे गये हैं उनको मुझसे सुनो । रविवार को सूर्य व्रत, सोमवार को मेरी पूजा और नक्त (४ बजे शाम के समय) भोजन को करे ॥ १८ ॥ श्रावण मास के प्रथम सोमवार से लेकर साढ़े तीन मास पर्यन्त होने वाला, समस्त कामना अर्थ सिद्धि को देने वाला रोटक नाम का व्रत होता है ॥ १९ ॥ मङ्गलवार के दिन

सत्तम ॥ रवौ रविव्रतं सोमे मत्पूजा नक्तभोजनम् ॥ १८ ॥ प्रथमं सोममारभ्य व्रतं स्याद्रोटकाभिधम् ॥ सार्धमासत्रयं तत्स्यात्सर्वकामार्थसिद्धिदम् ॥ १९ ॥ भौमे मङ्गलगौर्याश्च तदह्नोर्बुधजीवयोः ॥ शुक्रे जीवन्तिकायाश्च आञ्जनेयनृसिंहयोः ॥२०॥ शनौ व्रतं समादिष्टं तिथिष्वथ मुने शृणु॥ नभःशुक्लद्वितीयायां व्रतमौदुम्बराभिधम् ॥२१॥ गौरीव्रतं तृतीयायां श्रावणे शुक्लपक्षके ॥ तथा शुक्लचतुर्थ्यां तु दूर्वागणपतिव्रतम् ॥ २२ ॥ विनायकेति

मङ्गलगौरी (मङ्गलागौरी) दुर्गा का व्रत होता है, बुधवार के दिन बुध का व्रत, बृहस्पतिवार के दिन बृहस्पति का व्रत, तथा शुक्रवार के दिन जीवन्तिका देवी का व्रत होता है। हनुमान और नृसिंह का ॥ २० ॥ शनिवार के दिन व्रत कहा गया है हे मुने ! अब तिथियों में होने वाले व्रतों को सुनिए। श्रावणमास के शुक्लपक्ष की द्वितीया के दिन औदुम्बर नाम का व्रत होता है ॥ २१ ॥ श्रावणमास के शुक्लपक्ष की तृतीया के दिन गौरीव्रत नामक व्रत होता है

और श्रावण शुक्ल चतुर्थी को दूर्वागणपति नामक व्रत होता है ॥ २२ ॥ हे मुने ! इसी व्रत का दूसरा नाम विनायकी चतुर्थी व्रत भी है और श्रावण शुक्लपक्ष की पञ्चमी नागों के पूजन में श्रेष्ठ कही गई है ॥ २३ ॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! इसका दूसरा नाम मानवकल्पादि है ऐसा जानें अर्थात् यह मनु के बदलने की तिथि समझें । षष्ठी के दिन सूपौदन नामक व्रत, सप्तमी के दिन शीतला देवी का व्रत होता है ॥२४॥ अष्टमी और चतुर्दशी के दिन देवी को पवित्रारोपण करे और

तस्याश्च संज्ञा स्यादपरा मुने ॥ नागानां पूजने शस्ता पञ्चमी शुक्लपक्षके ॥ २३ ॥ इमां मानवकल्पादिं जानीहि मुनिसत्तम ॥ सूपौदनव्रतं षष्ठ्यां सप्तम्यां शीतलाव्रतम् ॥ २४ ॥ पवित्रारोपणं देव्या वसौ भूते यथा भवेत् ॥ शुक्लकृष्णनवम्योस्तु नक्तव्रतविधिः स्मृतः ॥२५॥ दशम्यां शुक्लपक्षे तु आशासंज्ञं व्रतं भवेत् ॥ पक्षद्वये विशेषोऽस्मिन्नेकादश्योस्तु कश्चन ॥ २६ ॥ पवित्रारोपणं शुक्लद्वादश्यां तु हरेः स्मृतम् ॥ द्वादश्यां श्रीधरं पूज्य परां गतिमवाप्नुयात् ॥२७॥ उत्सर्जन मुपाकर्म सभादीपस्तथैव च ॥ उपाकर्मसभायां तु रक्षा-

श्रावण मास के कृष्ण शुक्ल दोनों पक्ष की नवमी के दिन नक्तव्रत का विधान कहा है ॥ २५ ॥ शुक्लपक्ष की दशमी के दिन आशा नामक व्रत होता है ॥ कोई विशिष्ट लोग इस मास के दोनों पक्ष की एकादशी के दिन आशा व्रत का होना कहते हैं ॥ २६ ॥ श्रावण शुक्लपक्ष की द्वादशी के दिन हरि भगवान् को पवित्रारोपण कहा है इसलिये द्वादशी के दिन हरि भगवान् का श्रीधर नाम से पूजन कर श्रेष्ठ गति को प्राप्त करता है ॥ २७ ॥ श्रावण शुक्ल पूर्णिमा के दिन उत्सर्जन

उपाकर्म, सभादीप, उपाकर्म की सभा में रक्षाबन्धन ॥ २८ ॥ तथा श्रवणाकर्म और सर्पबलि तथा हयग्रीव नाम से विष्णु भगवान् का अवतार कहा गया है ये सात कार्य श्रावण शुक्ल पूर्णिमा के दिन होते हैं ॥ २९ ॥ श्रावणमास के कृष्णपक्ष की चतुर्थी को सङ्कष्टचतुर्थी व्रत और श्रावण कृष्ण पञ्चमी को मानवकल्पादि होता है ॥३०॥ हे! द्विजोत्तम

बन्धस्तथापरः ॥२८॥ श्रवणाकर्म तत्रैव तथा सर्पबलि स्मृतः ॥ हयग्रीवस्यावतारः पूर्णिमायां तु सप्तकम् ॥ २९ ॥ नभःकृष्णे तु सङ्कष्टचतुर्थीव्रतमुच्यते ॥ ज्ञेया मानवकल्पादिः श्रावणे कृष्णपञ्चमी ॥३०॥ पूर्णावतारः कृष्णस्य कृष्णाष्टम्यां द्विजोत्तम ॥ अवतारः समभवद्व्रतं तस्य महोत्सवः ॥ ३१ ॥ अमायां श्रावणे मासि पिठोराव्रतमुच्यते ॥ कुशानां ग्रहणं चैव वृषभाणां च पूजनम् ॥३२॥ शुक्लाद्यतिथिमारभ्य तत्तत्तिथिषु देवताः ॥ वह्नि-

श्रावण कृष्णपक्ष की अष्टमी के दिन श्रीकृष्ण भगवान् का श्रीकृष्ण नाम से पूर्ण अवतार हुआ है इसलिये उस दिन व्रत और महोत्सव करना चाहिये ॥ ३१ ॥ श्रावण मास की अमावास्या तिथि के दिन पिठोराव्रत होता है और एक वर्ष के खर्च के लिये कुशाओं का ग्रहण (उत्पाटन) कहा है तथा वृषभों का पूजन होता है ॥३२॥ शुक्लपक्ष की पहिली तिथि से

१ यहाँ पर व्रतों का विधान शुक्लादि मासक्रम से होने वाले व्रतों का विधान कहा गया है। इसलिये भाद्रपद मास के कृष्णपक्ष को श्रावण कृष्ण शब्द से व्यवहार किया है।

लेकर समस्त तिथियों में पृथक् २ देवता होते हैं। प्रतिपत् तिथि के अग्नि देवता, द्वितीया के ब्रह्मा देवता हैं ॥ ३३ ॥ तृतीया के गौरी देवता, चतुर्थी के गणनायक, पञ्चमी के सर्प, षष्ठी के स्कन्द देवता, सप्तमी के भास्कर (सूर्य) देवता, और शिव देवता की अष्टमी तिथि है ॥३४॥ नवमी तिथि की स्वामिनी दुर्गादेवी हैं और दशमी तिथि के अन्तक (यम) देवता

देवः प्रतिपदि द्वितीया ब्रह्मदेवता ॥ ३३ ॥ तृतीयायास्तथा गौरी चतुर्थ्यां गणनायकः ॥ सर्पाधिका पञ्चमी स्यात्षष्ठी स्यात्स्कन्ददेवता ॥ सप्तम्यां भास्करो देवः शिवदेवाष्टमी तिथिः ॥३४॥ दुर्गाधिपा तु नवमी दशम्यन्तकदेवता ॥ एकादश्यधिपाश्चैव विश्वेदेवाः प्रकीर्तिताः ॥ ३५ ॥ द्वादश्याश्च हरिः कामस्त्रयोदश्यधिपो मतः ॥ चतुर्दश्यां शिवश्चैव पौर्णमास्याः शशी पतिः ॥३६॥ अमायाः पितरो देवा एते तिथ्यधिपाः स्मृताः ॥ ससि देवस्तत्र पूज्यो यस्य देवस्य या तिथिः ॥ ३७ ॥ आगस्त्यस्योदयो मासे प्रायेणात्रैव जायते ॥ कथयामि च तं कालं शृणुष्वैकमना मुने ॥ ३८ ॥ सिंहसंक्रातिदिवसाद्यदा द्वादश यान्ति

तथा एकादशी के विश्वेदेवा स्वामी हैं ॥३५॥ द्वादशी के हरि भगवान्, त्रयोदशी के कामदेव, चतुर्दशी के शिव पूर्णिमा के शशी (चन्द्रमा) स्वामी हैं ॥३६॥ अमावास्या के पितर स्वामी हैं। इस क्रम से ये देवता तिथियों के स्वामी कहे गये हैं। जिस देवता की जो तिथि है उस तिथि में वह देवता पूजनीय कहा गया है ॥३७॥ हे मुने ! प्रायः करके इसी मास

में अगस्त्य का उदय होता है मैं उस काल (समय) को कहता हूँ आप एकाग्र मन होकर सुनिये ॥३८॥ जब सिंह राशि पर सूर्य के संक्रमण दिन से १२ बारह अंश ४० घटी बीतने पर अगस्त्य ऋषि का उदय होता है ॥ ३९ ॥ तब अगस्त्य ऋषि के लिये ७ दिन पूर्व से ही अर्घ्य देवे। बारह महीनों में सूर्य नारायण भिन्न २ नामों से तपते रहते हैं ॥४०॥ श्रावणमास में गभस्ति नाम से तपते हैं उनका पूजन इस मास में भक्ति में तत्पर होकर करे ॥४१॥ श्रावण से लेकर चार मासों में जिन व्रतों का विधान कहा है उसको कहते हैं। श्रावणमास में शाक का त्याग, भाद्रपदमास में दही का त्याग ॥४२॥ अश्विनमास में दूध का त्याग और कार्तिकमास में द्विदल (दाल) का त्याग करे। इत्यादि समस्त विधानों के करने में यदि असमर्थ है ॥४३॥ तो केवल श्रावणमास में ही ऊपर कहे वस्तुओं का त्याग करने से उनके

वै ॥ चत्वारिंशच्च घटिकास्तदाऽगस्त्योदयो भवेत् ॥३९॥ सप्ताहानि ततः पूर्वं अगस्त्यार्घ्यं समाचरेत् ॥ द्वादशेष्वपि मासेषु आदित्यो भिन्नसंज्ञया ॥ ४० ॥ तपते श्रावणे तत्र गभस्तिरिति संज्ञितः ॥ तत्पूजनं च कर्तव्यं मासेऽस्मिन्भक्तितत्परैः ॥४१॥ चतुर्षु यानि मासेषु व्रतानि विहितानि च ॥ श्रावणे च त्यजेच्छाकं दधि भाद्रपदे तथा ॥४२॥ दुग्धमाश्वयुजे मासि कार्तिके द्विदलं त्यजेत् ॥ इत्यादीनि समस्तानि तानि कर्तुमशक्नुवन् ॥ ४३ ॥ एकस्मिन् श्रावणे मासि कुर्वंस्तत्फलभाग्भवेत् ॥ उद्देशोऽयं मया प्रोक्तः संक्षेपात्तव मानद ॥४४॥

फलों का भागी हो जाता है। हे मानद ! यह मैंने आप से संक्षेप में उपदेश किया है ॥४४॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! इस मास में होने वाले व्रत तथा धर्मों का विस्तार रूप से वर्णन १०० सौ वर्ष में भी कोई नहीं कर सकता है ॥४५॥ मेरे प्रीत्यर्थ अथवा हरि भगवान् के प्रीत्यर्थ सम्पूर्ण व्रतों को करे। परमार्थ रूप से विचार करने पर हमारे और हरि में कुछ भी भेद

अत्रत्यानां व्रतानां तु धर्माणां मुनिसत्तम ॥ केनापि विस्तरो वक्तुं नालं वर्षशतैरपि ॥ ४५ ॥ मम प्रीत्यै हरेर्वापि कुर्याद्व्रतमशेषतः ॥ आवयोर्नहि भेदोऽस्ति परमार्थविचारतः ॥४६॥ कल्पयन्त्यत्र ये भेदं ते वै निरयगामिनः ॥ सनत्कुमार तस्मात्त्वं श्रावणे धर्ममाचर ॥ ४७ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासव्रतोद्देशकथनं नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

नहीं है ॥ ४६ ॥ जो लोग इस विषय में भेद की कल्पना करते हैं वे नरक के गामी होते हैं। हे सनत्कुमार ! इसलिये तुम श्रावणमास में धर्म का सेवन करो ।.४७॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे व्या. आ. पं० माधवप्रसादव्यासकृतायां भाषाटीकायां श्रावणमासव्रतोद्देशकथनं नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

सनत्कुमार जी ईश्वर (महादेवजी) से बोले कि हे भगवन् ! आपने व्रतों के समुदाय का उद्देश रूप से कथन किया परन्तु हे स्वामिन् ! इतने से तृप्ति नहीं होती है इसलिये आप विस्तार से कहने के योग्य हैं ॥ १ ॥ हे सुरेश्वर ! जिसको सुनकर मैं कृतकृत्य हो जाऊँगा । ईश्वर (महादेव) सनत्कुमार जी से बोले—हे योगीश !

सनत्कुमार उवाच ॥ भगवन्व्रतसङ्घस्य उद्देशः कथितस्त्वया ॥ तृप्तिर्न जायते स्वामि-न्विस्तराद्वक्तुमर्हसि ॥ १ ॥ यच्छ्रुत्वा कृतकृत्योऽहं भविष्यामि सुरेश्वर ॥ ईश्वर उवाच ॥ नक्तव्रतेन योगीश श्रावणं यो नयेत्सुधीः ॥ २ ॥ द्वादशेष्वपि मासेषु स नक्तफलभाग्भ-वेत् ॥ दिनावसानपूर्वं तु नक्तं स्याद्रात्रिभोजनम् ॥ ३ ॥ तत्राद्यत्रिघटिं त्यक्त्वा कालः स्यान्नक्तभोजने ॥ ततः सन्ध्या त्रिघटिका अस्तादुपरि भास्वतः ॥ ४ ॥ चत्वारीमानि कर्माणि सन्ध्यायां परिवर्जयेत् ॥ आहारं मैथुनं निद्रां स्वाध्यायं च चतुर्थकम् ॥ ५ ॥ गृह-

जो विद्वान् श्रावणमास को नक्तव्रत करके व्यतीत करता है ॥ २ ॥ वह बारह मासों में नक्तव्रत करने के फल का भागी होता है । दिनान्त (दिन की समाप्ति) के (३ घटी) पूर्व रात्रिभोजन को नक्त व्रत कहते हैं ॥ ३ ॥ उस नक्तभोजन में सूर्यास्त के पूर्व तीन घटी काल का त्याग कर शेष समय लिया गया है । बाद सूर्यास्त के तीन घटी तक सन्ध्याकाल कहा गया है ॥ ४ ॥ आहार (भोजन), मैथुन (स्त्रीप्रसङ्ग), निद्रा और चौथा स्वाध्याय इन चार कर्मों को

सन्ध्याकाल में न करे ॥५॥ गृहस्थ और संन्यासी के भेद से नक्त भोजन की दो प्रकार की अवस्था मुझ से तुम सुनो। जब सूर्यनारायण के मन्द पड़ने पर अपने शरीर की छाया द्विगुण हो जाय तो ॥६॥ उस समय संन्यासी का नक्तभोजन व्रत कहा गया है, रात्रि में भोजन करने को नक्तभोजन नहीं कहा है। और विद्वानों ने गृहस्थ के लिये नक्षत्र के उदय लेने

स्थयतिभेदेन द्व्यवस्थां चैव मे शृणु ॥ आत्मनो द्विगुणीच्छायां मन्दीभवति भास्करे ॥६॥ यतेर्नक्तं तु तत्प्रोक्तं न नक्तं निशि भोजनम् ॥ नक्षत्रदर्शनान्नक्तं गृहस्थस्य बुधैः स्मृतम् ॥ ७ ॥ यतेर्दिनाष्टमे भागे रात्रौ तस्य निषिध्यते ॥ नक्तं निशायां कुर्वीत गृहस्थो विधिसंयुतः ॥ ८ ॥ यतिश्च विधवा चैव विधुरश्च ससूर्यकम् ॥ विधुरश्चेत्पुत्रवान् स्यात्स तु रात्रौ समाचरेत् ॥ ९ ॥ अनाश्रमोऽप्याश्रमो स्यादपत्नीकोऽपि पुत्रवान् ॥ एवं यथाधिकारं तु कुर्यान्नक्तव्रतं सुधीः ॥ १० ॥ अत्र नक्तव्रती मासे परां गतिमवाप्नुयात् ॥ तिथौ प्रतिपदि

पर रात्रिभोजन को नक्तभोजन व्रत कहा है ॥७॥ संन्यासी के लिये रात्रि में निषिद्ध होने के कारण दिन के अष्टम भाग में भोजन का विधान किया है और गृहस्थ विधि के साथ रात्रि में नक्तव्रत को करे ॥८॥ संन्यासो, विधवा और विधुर (स्त्री विहीन) पुरुष ये लोग सूर्यनारायण के अस्त होने के पूर्व भोजन करें और विधुर यदि पुत्रवान् है तो वह रात्रि में भोजन करे ॥ ९ ॥ क्योंकि जो पुत्रवान् है वह आश्रमहीन और स्त्रीविहीन होने पर भी आश्रमी होता है। इस प्रकार

विद्वान् अपने अधिकार के अनुसार नक्तव्रत को करे ॥१०॥ इस श्रावणमास में नक्तव्रत को करनेवाला मनुष्य श्रेष्ठ गति को प्राप्त करता है। प्रथम श्रावणमास के आने पर प्रतिपद् तिथि में प्रातःकाल ॥११॥ सङ्कल्प करे कि मैं श्रावण में एक मास पर्यन्त ब्रह्मचर्य व्रत में स्थित रहकर प्रतिदिन प्रातःस्नान को करूँगा ॥१२॥ नक्तव्रत, पृथ्वी में शयन और प्राणियों पर दया को करूँगा। हे देव ! यदि इस व्रत के आरम्भ होने पर मैं व्रतपूर्त्ति के पूर्व ही मर गया ॥१३॥ तो हे जगत्पते !

प्रातः श्रावणे समुपस्थिते ॥ ११ ॥ सङ्कल्पयेन्मासमेकं श्रावणे प्रत्यहं त्वहम् ॥ प्रातःस्नानं करिष्यामि ब्रह्मचर्यव्रते स्थितः ॥१२॥ भोक्ष्यामि नक्तं भूशय्यां करिष्ये प्राणिनां दयाम् ॥ प्रारब्धेऽस्मिन्व्रते देव यद्यपूर्णे म्रिये ह्यहम् ॥ १३ ॥ तदा सम्पूर्णतां यातु प्रसादात्ते जगत्पते ॥ इति सङ्कल्प्य मेधावी मासे नक्तव्रतं चरेत् ॥ १४ ॥ एवं नक्तव्रतं कुर्वन्मम प्रियतमो भवेत् ॥ विप्रद्वाराऽतिरुद्रेण महारुद्रेण वा स्वयम् ॥ १५ ॥ अभिषेकं मासमात्रं रुद्रेण प्रत्यहं चरेत् ॥ तस्य प्रीणाम्यहं वत्स जलधाराप्रियो यतः ॥१६॥ कुर्याद्रुद्रेण वा होमं मम

उस समय आपके प्रसाद से व्रत की पूर्णता हो। इस प्रकार बुद्धिमान् मास के आरम्भ में सङ्कल्प करके नक्तव्रत को करे ॥ १४ ॥ इस प्रकार नक्तव्रत को करता हुआ प्राणी मेरा अतिप्रिय होता है। अतिरुद्र से अथवा महारुद्र से ब्राह्मण द्वारा वा स्वयं ॥ १५ ॥ रुद्र से एक मास प्रतिदिन अभिषेक करता है हे वत्स ! मैं उस पर प्रसन्न होता हूँ क्योंकि मुझे जलधारा प्रिय है ॥१६॥ अथवा रुद्र से मुझे अति प्रीतिकर हवन को करे और जो अपने को अधिक रुचिकर भोजन अथवा

उपभोग की वस्तु हो ॥१७॥ उसको सङ्कल्प करके ब्राह्मण को देकर इस मास में त्याग कर देवे। हे मुने ! इसके बाद श्रेष्ठ लक्षपूजाविधि को सुनिये ॥१८॥ लक्ष्मी की कामना करनेवाला मनुष्य बिल्वपत्रों से, शान्ति की चाहना करनेवाला मनुष्य दूर्वाओं से और आयुष्य की कामना करनेवाला चम्पा के पुष्पों से हरिभगवान् का पूजन करे ॥१९॥ विद्या की कामना

प्रीतिकरं परम् ॥ स्वस्य यद्रोचतेऽत्यन्तं भोज्यं वा भोग्यमेव वा ॥१७॥ सङ्कल्प्य द्विजवर्याय दत्वा मासे स्वयं त्यजेत् ॥ अतः परं शृणु मुने लक्षपूजाविधिं परम् ॥ १८ ॥ श्रीकामो बिल्वपत्रैश्च दूर्वाभिः शान्तिकामुकः ॥ आयुःकामेन कर्तव्यं चम्पकैः पूजनं हरे ॥ १९ ॥ विद्यकामेन कर्तव्यं मल्लिकाजातिभिस्तथा ॥ शिवविष्णवोः प्रसन्नत्वं तुलसीभिः प्रसिध्यति ॥ २० ॥ पुत्रकामेन कर्तव्यं बार्हतैः पूजनं शुभम् ॥ दुःस्वप्नप्रशमार्थाय शस्तधान्यैः प्रपूजयेत् ॥ २१ ॥ रङ्गवल्ल्यादिभिर्देवं देवस्याग्रे विनिर्मितैः ॥ पद्मादिभिः स्वस्तिकाद्यैश्चक्राद्यैः पूजयेद्विभुम् ॥ २२ ॥ एवं हि सर्वपुष्पैश्च सर्वकामार्थसिद्धये ॥ लक्षपूजां प्रकुर्याचेत्सुप्रसन्नो

करनेवाला मल्लिका और चमेली के पुष्पों से पूजन करे और तुलसी के दलों से शिव तथा विष्णु भगवान् की प्रसन्नता होती है ॥ २० ॥ पुत्र की चाहना करनेवाला मनुष्य बृहती (कटेरी) पुष्पों से पवित्र पूजन को करे और दुःस्वप्न के नाश के लिये उत्तम धान्य से पूजन करे ॥ २१ ॥ देवता के सम्मुख रङ्गवल्ली, पद्म, स्वस्तिक और चक्र आदि बनाकर विभु

(व्यापक) देव का पूजन करे ॥२२॥ इस प्रकार समस्त कामना की सिद्धि के लिये समस्त पुष्पों से पूजन करे। यदि लक्षपूजा को करता है तो हर (शङ्कर) सुप्रसन्न होते हैं ॥२३॥ बाद उद्यापन को करे, मण्डप को बनावे और मण्डप के तृतीयांश से वेदी बनावे। बाद पुण्याहवाचन को करके आचार्य का वरण करे ॥२४॥ उस मण्डप में प्रवेश कर रात्रि में

हरो भवेत् ॥ २३ ॥ उद्यापनं ततः कार्यं मण्डपं चैव साधयेत् ॥ वेदिका च प्रकर्त्तव्या मण्डपस्य त्रिभागतः ॥ पुण्याहवाचनं कृत्वा आचार्यं वरयेत्ततः ॥ २४ ॥ गीतवादित्रनिर्घोषैर्ब्रह्मघोषेण भूयसा ॥ प्रविश्य मण्डपे तस्मिन् रात्रौ जागरणं चरेत् ॥ २५ ॥ वेदिकायां प्रकर्तव्यं लिङ्गतोभद्रमुत्तमम् ॥ तन्मध्ये तण्डुलैः कुर्यात्कैलासं च सुशोभनम् ॥ २६ ॥ कलशं स्थापयेत्तत्र ताम्रं चैव महाप्रभम् ॥ पञ्चपल्लवसंयुक्तं न्यसेद्वस्त्रं सुसूक्ष्मकम् ॥ २७ ॥ सौवर्णीं प्रतिमां तत्र स्थापयेत्पार्वतीपतेः ॥ पूजां तत्र प्रकुर्वीत पञ्चामृतपुरःसरैः ॥ २८ ॥ धूपैर्दीपैः

गान वाद्य के शब्द से और ब्रह्म (वेद) घोष से जागरण को करे ॥ २५ ॥ वेदी पर उत्तम लिङ्गतोभद्र बनावे और उसके मध्य भाग में चावल से सुन्दर कैलास को बनावे ॥२६॥ उस पर अधिक प्रकाशवाला ताम्बा का कलश स्थापित करे और उस कलश को पञ्चपल्लव से युक्त करे तथा उस पर सूक्ष्म वस्त्र को रक्खे ॥ २७ ॥ उस पर पार्वतीपति (पार्वती के साथ शिव) की सुवर्ण प्रतिमा को स्थापित करे और उस प्रतिमा में पञ्चामृत स्नान पूर्वक पूजन को करे ॥२८॥ नैवेद्य-

वर्ष तक रुद्रलोक में जाकर पूजित होता है तथा पञ्चामृत के अभिषेक से अमृतत्व (मोक्ष) को प्राप्त करता है ॥ ४१ ॥
उस श्रावण मास में पृथिवी में शयन करने वाले को क्या फल होता है उसे भी मुझसे सुनिये । प्रवाल (मूँगा) को अथवा
हाथी के दांत की बनी हुई ॥४२॥ हे द्विजश्रेष्ठ ! या पाटीर (चन्दन) की बनी हुई और नवरत्नों से खचित (जड़ाऊ

श्नुते ॥४१॥ तस्मिन्मासे भूमिशायी फलं तस्यापि मे शृणु ॥ प्रवालनिर्मितां श्रेष्ठां गज-
दन्तभवामपि ॥४२॥ पाटीरनिर्मितां चापि खचितां नवरत्नकैः॥ निःशीमन्मृदुपक्षीन्द्रविशेषां
द्विजसत्तम ॥ ४३ ॥ वरवस्त्रेण सञ्छन्नां तूलिकां चात्र शोभनाम् ॥ दशोपबर्हणैर्युक्तां शय्यां
स लभते शुभाम् ॥ ४४ ॥ रम्याङ्गनासमायुक्तां रत्नदीपविभूषिताम् ॥ ब्रह्मचर्येण चाप्यत्र
वीर्यपुष्टिर्भवेद्दृढा ॥ ४५ ॥ ओजो बलं देहदार्ढ्यं यद्धर्मस्योपकारकम् ॥ प्राप्यते वै भवेत्तस्य
ब्रह्मप्राप्तिर्न संशयः ॥ ४६ ॥ निष्कामस्य सकामस्य स्वर्गं देवाङ्गना शुभा ॥ अत्र मौनव्रत-

की हुई) अति मृदु गरुड़ चिह्न से युक्त ॥ ४३ ॥ श्रेष्ठ वस्त्र से आच्छादित तूलिका (रूई) भरे हुए गद्दा वाली सुन्दर
और झालरदार तकियों से युक्त शय्या को वह प्राप्त करता है ॥ ४४ ॥ और वह शय्या सुन्दर स्त्री से युक्त तथा रत्नों के
दीपक से विभूषित मिलती है । जो इस मास में ब्रह्मचर्य से रहता है उसके वीर्य की अधिक पुष्टि होती है ।.४५.। और
ओज बल देह की दृढ़ता तथा जो धर्म कार्य में उपकारक है उसको प्राप्त करता है और उसको अवश्य ब्रह्मप्राप्ति होती है ।.४६॥

निष्काम को स्वर्ग (मुक्ति) सकाम पुरुष को सुन्दर देवाङ्गना (अप्सरा) मिलती है। जो इस मास में मौनव्रत को धारण करता है वह श्रेष्ठ वक्ता (वावदूक) होता है ॥ ४७ ॥ वह मौनव्रत अहर्निश (दिन रात) का हो या दिनमात्र में होने वाला हो या भोजन के समय का हो। मौनव्रत के अन्त में घण्टा और पुस्तक का दान करे ॥४८॥ तो सम्पूर्ण शास्त्रों

धरो महान्वक्ता प्रजायते ॥ ४७ ॥ अहोरात्रदिने वापि भुक्तिकालेऽथवा पुनः ॥ घण्टायाः पुस्तकस्यापि व्रतान्ते दानमाचरेत् ॥ ४८ ॥ सर्वशास्त्रप्रवीणः स्याद्वेदवेदाङ्गपारगः ॥ वाचस्पतिसमो बुद्धौ मौनमाहात्म्यतो भवेत् ॥ ४९ ॥ मौनिनः कलहो नास्ति तस्मान्मौनव्रतं परम् ॥५०॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे नक्तव्रतलक्षपूजाभूमिशयनमौनादिव्रतकथनं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

में प्रवीण होता है और वेद तथा वेदाङ्ग (व्याकरणादि शास्त्रों) में पारङ्गत होता है तथा बुद्धि में बृहस्पति के समान मौनव्रत के माहात्म्य से हो जाता है ॥४९॥ और मौनव्रत करने वाले पुरुष का किसी के साथ कलह नहीं होता है इसलिए मौनव्रत श्रेष्ठ है ॥ ५० ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे व्या. आ. पं० माधवप्रसाद व्यासकृतायां भाषाटीकायां नक्तव्रतलक्षपूजाभूमिशयनमौनादिव्रतकथनं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

ईश्वर (शङ्कर) सनत्कुमारजी से बोले—हे सनत्कुमार ! अब मैं धारण पारण व्रत को कहूँगा, आप सुनिये । प्रथम प्रतिपत् तिथि को पुण्याहवाचन को करावे ॥१॥ मेरे प्रीत्यर्थ धारण पारण व्रत का सङ्कल्प करे । एक दिन धारण करे अन्य दिन में पारण करे ॥२॥ धारण में उपवास और पारण में भोजन होता है । व्रत करने वाला मास की समाप्ति में

ईश्वर उवाच ॥ सनत्कुमार वक्ष्यामि धारणापारणाव्रतम् ॥ पुण्याहं वाचयेत्पूर्वमारभ्य प्रतिपद्दिनम् ॥ १ ॥ सङ्कल्पयेन्मम प्रीत्यै धारणापारणाव्रतम् ॥ एकस्मिन्धारणं कुर्यात्पारणं च तथापरे ॥२॥ उपवासो धारणे स्यात्पारणे भोजनं भवेत् ॥ समाप्ते मासि चैवात्र कुर्यादुद्यापनं व्रती ॥३॥ समाप्ते श्रावणे मासि पुण्याहं कारयेत्पुरा ॥ आचार्यं वरयेत्पश्चाद्ब्राह्मणांश्चैव मानद ॥४॥ पार्वतीशङ्करस्यापि प्रतिमां स्वर्णनिर्मिताम् ॥ पूर्णकुम्भे तु संस्थाप्य पूजयेन्निशि भक्तितः ॥५॥ रात्रौ जागरणं कुर्यात्पुराणश्रवणादिभिः ॥ प्रातरग्निं समाधाय होमं कुर्याद्यथाविधि ॥६॥ त्र्यम्बकेणैव मन्त्रेण जुहुयाच्च तिलौदनम् ॥ तथैव शिवगायत्र्या

उद्यापन को करे ॥३॥ प्रथम श्रावण मास की समाप्ति में पुण्याहवाचन करावे । हे मानद ! बाद आचार्य और अन्य ब्राह्मणों का वरण करे ॥ ४ ॥ और पार्वतीशङ्कर की सुवर्ण की प्रतिमा बनाकर पूर्ण कुम्भ (घट) के ऊपर स्थापित कर रात्रि में भक्तिपूर्वक पूजन करे ॥५॥ रात्रि में पुराण का श्रवण कीर्तन आदि से जागरण करे, प्रातःकाल अग्नि को स्थापित कर

यथाविधि हवन करे । ६।। त्र्यम्बकं यजामहे—'इस मन्त्र को पढ़कर तिल चावल की आहुति देवें और 'वामदेवाय विद्महे महादेवाय धीमहि ।। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ।।' इस शिवगायत्री से घृत चावल की आहुति देवे ।। ७ ।। बाद षडक्षर (ओं नमः शिवाय) मन्त्र को पढ़कर पायस (खीर) की आहुति देवे । तदनन्तर पूर्णाहुति हवन कर होम का शेष कार्य

जुहुयाच्च घृतौदनम् ॥ ७ ॥ षडक्षरेण मन्त्रेण पायसं जुहुयात्ततः ॥ पूर्णाहुतिं ततो हुत्वा होमशेषं समापयेत् ॥८॥ ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चादाचार्यं चैव पूजयेत् ॥ एवं कृत्वा महाभाग ब्रह्महत्यादिपातकैः ॥९॥ मुच्यते नात्र सन्देहस्तस्मात्कुर्यान्महाव्रतम् ॥ शृणु मासोपवासस्य श्रावणे विधिमादरात् ॥१०॥ सङ्कल्पयेत्तु प्रतिपद्दिने प्रातर्व्रतं मुने ॥ नारी वा पुरुषो वापि संयतात्मा जितेन्द्रियः ॥ ११ ॥ ततोऽर्चयेदमायां तु शङ्करं लोकशङ्करम् ॥ सम्पूजयेत्षोडशभिरुपचारैर्वृषध्वजम् ॥ १२ ॥ ब्राह्मणान्पूजयेच्चैव वस्त्रालङ्करणादिभिः ॥ भोजयेच्च यथाशक्त्या

समाप्त करे ॥८॥ बाद ब्राह्मणों को भोजन करावे और आचार्य का पूजन करे हे महाभाग ! इस प्रकार व्रत करने से ब्रह्महत्या आदि पातकों से ॥९॥ मुक्त हो जाता है इस में सन्देह नहीं है इसलिए श्रेष्ठ श्रावणमास व्रत को करे । हे मुने ! श्रावण में मास के उपवास की विधि आदरपूर्वक श्रवण करिये ॥१०॥ हे मुने ! स्त्री अथवा पुरुष व्रत के लिए संयतात्मा तथा जितेन्द्रिय होकर प्रतिपद् तिथि को प्रातःकाल में व्रत का सङ्कल्प करे ॥ ११ ॥ बाद अमावास्या के दिन लोक के

कल्याणकारी वृषध्वज शङ्कर भगवान् का षोडशोपचार से पूजन करे ॥१२॥ और ब्राह्मणों का वस्त्र अलङ्कार आदि से पूजन करे तथा यथाशक्ति भोजन कराकर और प्रणाम कर विसर्जन करे ॥ १३ ॥ इस प्रकार मास के उपवास का व्रत मेरे को प्रीतिकर होता है और एक लाख संख्या की रुद्रवर्ति विधि को करे ॥ १४ ॥ हे मुने ! यह सावधान होकर सुनिये ।

प्रणिपत्य विसर्जयेत् ॥ १३ ॥ एवं मासोपवासस्तु मम प्रीतिकरो भवेत् ॥ रुद्रवर्तिविधानं च सम्मितं लक्षसङ्ख्यया ॥१४॥ शृणुष्वावहितो भूत्वा सर्वसिद्धिकरं नृणाम् ॥ कार्पासतन्तुभिः कार्या एकादशभिरादरात् ॥१५॥ वर्तयस्ता रुद्रवर्तिसंज्ञाः प्रीतिकरा मम ॥ श्रावणस्याद्यदिवसे सङ्कल्प्य विधिपूर्वकम् ॥ १६ ॥ देवदेवं महादेवं लक्षवर्तिभिरादरात् ॥ नीराजयामि गौरीशं श्रावणे मासि भक्तितः ॥१७॥ पूजयित्वा प्रतिदिनं वर्तीनां तु सहस्रतः ॥ नीराजयेदन्त्यदिने सहस्राण्येकसप्ततिः ॥ १८ ॥ अथवा प्रत्यहं दद्यात्सहस्रत्रयमादृतः ॥

मनुष्यों के समस्त सिद्धि को करनेवाला है । आदर पूर्वक कपास रुई की बनी ग्यारह २ तन्तु की बत्ती बनावे ॥ १५ ॥ मुझको प्रीतिकर वे वत्तियाँ रुद्रवर्ति नाम से कहीं जाती हैं । श्रावण के प्रथम दिन विधिपूर्वक सङ्कल्प करे ॥ १६ ॥ कि श्रावण मास में देवों के देव जो महादेव हैं उन गौरीश की भक्ति से एक लाख वर्त्ति (बत्ती) से आरती करूँगा ॥१७॥ ऐसा सङ्कल्प करके प्रतिदिन एक हजार बत्ती से पूजन कर समाप्ति में ७१ एकहत्तर हजार बत्ती से आरती करे ॥ १८ ॥

अथवा प्रतिदिन ३ (तीन) हजार बत्ती से आरतो करे और आखीर वाले दिन १३ (तेरह) हजार बत्ती से आरती करे ॥ १९ ॥ अथवा एक ही दिन एक लाख रुद्रवर्ति को बालदेवे । मुझको प्रिय उन बत्तियों को उत्तम अधिक घृत से (स्निग्ध) सिञ्चन करे ॥ २० ॥ और विश्व के मालिक शङ्कर का पूजन कर कथा को श्रवण करे । सनत्कुमार जी शङ्कर

चरमे तु दिने दद्यात्सहस्राणि त्रयोदश ॥१९॥ एकस्मिन्वा दिने रुद्रवर्तिलक्षं प्रदीपयेत् ॥ सुघृतेनापि बहुना स्निग्धास्ता मम वल्लभाः ॥२०॥ पूजयित्वा तु विश्वेशं शृणुयाच्च कथां ततः ॥ सनत्कुमार उवाच ॥ देवदेव जगन्नाथ जगदानन्दकारक ॥२१॥ व्रतस्यास्य प्रभावं मे कृपां कृत्वा वद प्रभो ॥ केन चीर्णं व्रतमिदं विधिरुद्यापने कथम् ॥२२॥ ईश्वर उवाच ॥ शृणु वैधात्र यत्नेन व्रतानामुत्तमं व्रतम् ॥ रुद्रवर्त्या महापुण्यं सर्वोपद्रवनाशनम् ॥ २३ ॥ प्रीतिसौभाग्यजननं पुत्रपौत्रसमृद्धिदम् ॥ शङ्करप्रीतिजननं शिवलोकप्रदं परम् ॥२४॥ रुद्र-

भगवान् से बोले—हे देवदेव ! हे जगन्नाथ ! हे जगत् के आनन्दकारक ! ॥२१॥ हे प्रभो ! मुझ पर कृपा कर इस व्रत के प्रभाव और इस व्रत को किसने किया ? तथा इस व्रत के उद्यापन की विधि क्या है ? यह सब मुझसे कहिये ॥ २२ ॥ ईश्वर (शङ्कर भगवान्) सनत्कुमार जी से बोले—हे वैधात्र (ब्रह्मा के पुत्र) ! आप इस व्रत को अवश्य सुनिये । यह व्रतों में उत्तम रुद्रवर्ती का व्रत महान् पुण्य फल को देनेवाला और समस्त उपद्रवों का नाशक है ॥ २३ ॥ प्रीति सौभाग्य को

पैदा करनेवाला तथा पुत्र पौत्र समृद्धि को देनेवाला और शङ्कर भगवान् को प्रसन्न करनेवाला तथा श्रेष्ठ शिवलोक को देने वाला है ॥ २४ ॥ तीनों लोक में रुद्रवर्ती के समान कोई सुन्दर व्रत नहीं है। इस विषय में लोग इस पुरातन इतिहास को कहते हैं ॥ २५ ॥ क्षिप्रा नदी के रमणीय तट भाग में एक अच्छी उज्जयिनी पुरी है उस पुरी में सुगन्धा

वर्तिसमं नास्ति त्रिषु लोकेषु सुव्रतम् ॥ अत्रैवोदाहरन्तीममितिहासं पुरातनम् ॥२५॥ क्षिप्रा-नद्यास्तटे रम्ये पुरी उज्जयिनी शुभा ॥ तस्यामासीत्सुगन्धाख्या वारस्त्री ह्यतिसुन्दरी ॥२६॥ तया शुल्कं कृतं स्वीये सुरते तु सुदुःसहम् ॥ सुवर्णानां शतं लोके प्रतिज्ञां कृतवत्यथ ॥२७॥ युवानश्च तया विप्रा भ्रंशिताश्च सुगन्धया ॥ राजानो राजपुत्राश्च नग्नीकृत्य पुनः पुनः ॥२८॥ तेषां भूषां गृहीत्वा तु धिक्कृतास्तु सुगन्धया ॥ एवं हि बहवो लोका लुण्ठितास्ते सुगन्धया ॥ २९ ॥ तस्यास्तु देहगन्धेन क्रोशमात्रं सुगन्धितम् ॥ रूपलावण्यकान्तीनां सा

नाम की अति सुन्दरी वेश्या थी ॥ २६ ॥ उस वेश्या ने लोक में अपने सुरत (भोग) का अति दुःसह १०० सौ मोहर के शुल्क (मूल्य) की प्रतिज्ञा किया ॥ २७ ॥ और उस सुगन्धा वेश्या ने युवा पुरुषों को ब्राह्मणों को धर्म से भ्रष्ट कर दिया तथा बहुत से राजाओं और राजकुमारों को बारम्बार नग्न कर छोड़ दिया ॥२८॥ तथा उनके भूषणादि को लेकर धिक्कार कर निकाल दिया। इस तरह उस सुगन्धा ने बहुत से लोगों को लूट लिया ॥ २९ ॥ और उस वेश्या के देह

के गन्ध से एक कोशतक सुगन्धित रहा करता था । तथा पृथ्वीतल में रूप लावण्य और कान्ति की प्रतिष्ठा (मूर्ति) थी ।।३०।। गायन के ६ राग और ३६ रागिणी तथा उनकी सन्तति अनन्त (असंख्य) कही गई हैं परन्तु वह वेश्या इनके गानकर्म में कुशल थी ।।३१।। नृत्य (नाच) कर्म में रम्भा आदि समस्त देवाङ्गनाओं को ताना मारती थी अर्थात् तिरस्कार करती थी और गति (पैर की चाल) से पद पद पर गज (हस्ति) और हंसों की गति (चाल) को हँसा

प्रतिष्ठा धरातले ।।३०।। षट्त्रिंशद्रागभार्याणां षड्रागाणां च गायने ।। तत्सन्तत्यो ह्यनन्ताश्च कुशला गानकर्मणि ।।३१।। नृत्ये रम्भादिकाः सर्वास्तर्जयन्ती सुराङ्गनाः ।। गत्या गजांश्च हंसांश्च विहसन्ती पदेपदे ।। ३२ ।। कामबाणान्प्रेरयन्तो कटाक्षैर्भ्रूकृतैश्च तैः ।। कदाचित्सा गता क्षिप्रां कौतुकाविष्टमानसा ।।३३।। ददर्श सा मनोरम्यामृषिभिः परिसेविताम् ।। केचिद्ध्यानपरा विप्राः केचिज्जपपरायणाः ।।३४।। रताः शिवार्चने केचिद्विष्णोः केचित्प्रपूजने ।। तेषां मध्ये वसिष्ठो हि तया दृष्टो महामुने ।।३५।। तस्या धर्मे भवेद्बुद्धिस्तद्दर्शनमहत्त्वतः ।। विग-

करती थी ।।३२।। किसी समय कौतुक वश वह वेश्या भृकुटी के चलाने से और कटाक्षों से कामबाण को छोड़ती हुई क्षिप्रा नदी को गई ।। ३३ ।। और वहाँ जाकर उसने चारों तरफ ऋषियों से युक्त होने के कारण रमणीक क्षिप्रा नदी को देखा कि कुछ ब्राह्मण ध्यान में मग्न, कुछ ब्राह्मण जप करने में मग्न हैं ।।३४।। कुछ शिवपूजन में, कुछ विष्णु के पूजन में लीन

हैं। हे महामुने ! उस वेश्या ने उन लोगों के बीच में वसिष्ठ ऋषि को देखा ॥३५॥ उनके दर्शन के प्रभाव से उस वेश्या की धर्म में बुद्धि हो गई और जीवन तथा विशेष करके विषयों के तरफ से चित्त हट गया ॥३६॥ तब वह वेश्या मुनिश्रेष्ठ वसिष्ठ जी को बारम्बार प्रणाम कर अपने पापकर्मों के नाश का उपाय पूछती हुई ॥३७॥ सुगन्धा बोली—हे अनाथों के

ताशा जीवनेऽपि विषयेषु विशेषतः ॥ ३६ ॥ विनम्रकन्धरा भूत्वा प्रणिपत्य पुनः पुनः ॥ स्वकर्मपरिहाराय पप्रच्छ मुनिपुङ्गवम् ॥ ३७ ॥ सुगन्धोवाच ॥ अनाथनाथ विप्रेन्द्र सर्वविद्याविशारद ॥ मया कृतानि योगीश पापानि सुबहून्यपि ॥ तत्सर्वपापनाशाय उपायं ब्रूहि मे प्रभो ॥ ३८ ॥ ईश्वर उवाच ॥ एवमुक्तस्तया विप्रो वसिष्ठो मुनिरादरात् ॥ तस्याः कर्म प्रविज्ञाय सोऽब्रवीद्दीनवत्सलः ॥ ३९ ॥ वसिष्ठ उवाच ॥ शृणुष्वावहिता भूत्वा तव पापस्य संक्षयः ॥ येन जायेत पुण्येन तत्सर्वं कथयामि ते ॥ ४० ॥ गच्छ वाराणसीं भद्रे त्रिषु

नाथ ! हे विप्रेन्द्र ! हे समस्त विद्या में विशारद ! हे योगीश ! मैंने बहुत से पापों को किया है हे प्रभो ! आप उन समस्त पापों को नाश करनेवाले उपाय को कहिये ॥ ३८ ॥ ईश्वर सनत्कुमारजी से बोले कि दीनवत्सल वसिष्ठ मुनि उस वेश्या के वचन को सुनकर और उसके कर्मों को समझकर आदरपूर्वक वेश्या से बोले ॥ ३९ ॥ वसिष्ठ जी सुगन्धा वेश्या से बोले कि हे भद्रे ! तुम सावधान होकर सुनो । जिस पुण्य के करने से तुम्हारे पापों का नाश होगा वह सब मैं तुमसे कहता

हूँ ॥ ४० ॥ हे भद्रे ! तुम त्रैलोक्य में प्रसिद्ध वाराणसी को जाओ और वहाँ जाकर उस वाराणसी (काशी) क्षेत्र में त्रैलोक्य में दुर्लभ व्रत को करो ॥ ४१ ॥ हे भद्रे ! रुद्रवर्ती का व्रत महान् पुण्य को देने वाला और शिव के प्रीति का करनेवाला है । हे भद्रे ! इस व्रत के करने से तुम उत्तम गति को प्राप्त करोगी ॥ ४२ ॥ शङ्कर भगवान् सनत्कुमारजी से

लोकेषु विश्रुताम् ॥ गत्वा कुरुष्व तत्क्षेत्रे व्रतं त्रैलोक्यदुर्लभम् ॥ ४१॥ रुद्रवर्त्या महापुण्यं शिवप्रीतिकरं परम् ॥ कृत्वा व्रतमिदं भद्रे प्राप्स्यसि त्वं परां गतिम् ॥४२॥ ईश्वर उवाच ॥ ततः सा कोशमादाय भृत्यं चैव सुमित्रकम् ॥ गत्वा काशीं व्रतं चक्रे वसिष्ठोक्तविधानतः ॥ ४३ ॥ ततः सा सशरीरेण तस्मिंल्लिङ्गे लयं ययौ ॥ ४४ ॥ एवं या कुरुते नारी व्रतमेतत्सुदुर्लभम् ॥ यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोत्यसंशयः ॥ ४५ ॥ माहात्म्यं शृणु माणिक्यवर्तीनामपि सुव्रत । व्रतेन तासां विप्रेन्द्र मदर्धासनभागिनी ॥ ४६ ॥ जायते मत्प्रिया

बोले कि बाद वह वेश्या कोश (खजाना) को भृत्य को और मित्र को लेकर काशीपुरी को गई और वहां जाकर वसिष्ठ के कथनानुसार व्रत को करती हुई ॥ ४३ ॥ तदनन्तर वह वेश्या पाञ्चभौतिक शरीर के साथ उस शङ्कर भगवान् के लिङ्ग (शरीर) में लय हो गई ॥ ४४ ॥ इस प्रकार जो स्त्री इस अत्यन्त दुर्लभ व्रत को करती है और जिस २ की चाहना करती है उस २ को अवश्य प्राप्त करती है ॥ ४५ ॥ हे सुव्रत ! माणिक्यवर्तियों के माहात्म्य को सुनिए । हे विप्रेन्द्र !

उन माणिक्यवर्त्तियों के व्रत को करने से स्त्री मेरे अर्धासन की भागिनी होती है ॥ ४६ ॥ और वह महाप्रलय तक मेरी प्रिया होकर रहती है। व्रतपूर्त्ति के लिए अब मैं इस व्रत के उद्यापन विधान को कहूँगा ॥४७॥ पार्वती के साथ शङ्कर की प्रतिमा स्थापित करे। शिव की प्रतिमा सुवर्ण की और बैल की प्रतिमा चांदी की बनी होवे ॥४८॥ विधिपूर्वक पूजनकर

सा हि यावदाभूतसम्प्लवम् ॥ उद्यापनमथो वक्ष्ये व्रतसम्पूर्णहेतवे ॥४७॥ कलशे स्थापयेद्देवमुमया सहितं शिवम् ॥ सुवर्णनिर्मितं देवं वृषभं रौप्यनिर्मितम् ॥४८॥ विधिना पूजनं कृत्वा रात्रौ जागरणं चरेत् ॥ ततः प्रभाते विमले स्नात्वा नद्यां विधानतः ॥ ४६ ॥ आचार्यं वरयेद्भक्त्या द्विजैरेकादशैः सह ॥ होमश्चैव प्रकर्तव्यो घृतपायसबिल्वकैः ॥ ५० ॥ रुद्रसूक्तेन गायत्र्या मूलमन्त्रेण वा पुनः ॥ ततः पूर्णाहुतिं हुत्वा आचार्यादीन्प्रपूजयेत् ॥५१॥ तथकादश सद्विप्रान्सपत्नीकास्तु भोजयेत् ॥ एवं या कुरुते नारी सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ५२ ॥

रात्रि में जागरण करे बाद सुबह प्रभात काल के समय विधिपूर्वक नदी में स्नान करे ॥४६॥ भक्ति से आचार्य का वरण करे और ग्यारह ब्राह्मणों के साथ घृत पायस तथा बिल्व का हवन करे ।.५०॥ रुद्रसूक्त से अथवा रुद्रगायत्री से अथवा मूलमन्त्र से हवन करे बाद पूर्णाहुति हवन कर आचार्य आदि की पूजा करे ।.५१॥ और ग्यारह उत्तम सपत्नीक ब्राह्मणों को भोजन करावे। इस प्रकार जो स्त्री व्रत को करती है वह समस्त पापों से छूट (मुक्त हो) जाती है ॥ ५२ ॥ और

विधान से कथा का श्रवण कर स्थापित घट प्रतिमा आदि आचार्य को देवे। ऐसा करने से एक हजार अश्वमेध यज्ञ

कथां श्रुत्वा विधानेन स्थाप्यं सर्वं न्यवेदयेत् ॥ अश्वमेधसहस्रस्य फलं भवति निश्चितम् ॥५३॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे धारणापारणा-मासोपवासरुद्रवर्तिकथनं नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

को करने का निश्चित रूप से फल मिलता है ॥५३॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे व्या. आ. 'विद्यारत्न' पं० माधवप्रसादव्यासकृतायां भाषाटीकायां धारणापारणामासोपवासरुद्रवर्तिकथनं नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥

ईश्वर (शिवजी) सनत्कुमारजी से बोले कि हे सनत्कुमारजी ! कोटिलिङ्गों के माहात्म्य और पुण्य का कथन नहीं किया जा सकता, क्योंकि जब एक २ लिङ्ग के माहात्म्य का कथन असम्भव है तो कोटिलिङ्गों के माहात्म्य को कौन कह सकता है ? ॥१॥ कोटि लिङ्ग के बनाने में असमर्थ होवे तो एक लक्ष लिङ्ग बनावे, अथवा यह भी न हो सके तो

ईश्वर उवाच ॥ माहात्म्यं कोटिलिङ्गानां पुण्यं वक्तुं न शक्यते ॥ एकैकस्यापि लिङ्गस्य किं पुनः कोटिसङ्ख्यया ॥ १ ॥ अशक्तौ लक्षकं कुर्यात्सहस्रमथवा-शतम् ॥ एकस्यापि हि लिङ्गस्य कारणान्मम सन्निधिः ॥२॥ षडक्षरेण मन्त्रेण पूजा कार्या स्मरद्विषः ॥ उपचारैः षोडशभिर्भक्तियुक्तेन चेतसा ॥ ३ ॥ उद्यापनं च कर्तव्यं ग्रहयज्ञपुरःसरम् ॥ सम्पादनीयो होमश्च ब्राह्मणांश्चैव भोजयेत् ॥४॥ नाकालमरणं तस्य वन्ध्यत्वहरणं परम् ॥ सर्वापत्तिक्षय-करं सर्वसम्पत्प्रवर्धनम् ॥ ५ ॥ प्रेत्य कैलासवासश्च आकल्पं मम सन्निधौ ॥ पञ्चामृताभिषेकं

सहस्र लिङ्ग बनावे, इसमें भी असमर्थ होवे तो शत (सौ) लिङ्ग बनावे। इस मास में एक लिङ्ग के भी बनाने से प्राणी मेरे समीप आकर वास करता है ॥ २ ॥ भक्तियुक्त चित्त से और षोडशोपचार से कामदेव के शत्रु श्रीशङ्कर भगवान् का षडक्षर (ॐ नमः शिवाय) मन्त्र के साथ पूजन करे ॥ ३ ॥ और ग्रहयज्ञ करके उद्यापन को करे तथा हवन और ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥४॥ इस प्रकार व्रत करने वाले को असमय में मृत्यु नहीं होती है और यह मास व्रत के

साथ लिङ्गपूजन वन्ध्यापन को दूर करने वाला है तथा समस्त आपत्ति का नाशक है और समस्त सम्पत्ति को बढ़ाने वाला है ॥ ५ ॥ और जो मनुष्य श्रावण मास में पंचामृत का अभिषेक करता है वह इस शरीर को त्यागकर कैलास में मेरे समीप आकर एक कल्प तक वास करता है ॥ ६ ॥ तथा वह मनुष्य पञ्चामृत को पीने वाला और गो धन आदि से सम्पन्न तथा अत्यन्त मधुर (मीठा) भाषी और त्रिपुरासुर के वधकर्त्ता श्रीशङ्कर का प्रिय होता है ॥ ७ ॥ जो इस मास में

च यः कुर्याच्छ्रावणे नरः ॥ ६ ॥ स पञ्चामृतभोजी स्यात्सम्पन्नो गोधनेन च ॥ अत्यन्तं
मधुरालापी प्रियश्च त्रिपुरद्विषः ॥ ७ ॥ अनोदनव्रती चैव हविष्याशी च यो नरः ॥
व्रीह्यादिसर्वधान्यानामक्षयोऽसौ निधिर्भवेत् ॥८॥ पत्रावल्यां तु भुञ्जानः स्वर्णभाजनभोजनः ॥
शाकवर्जनतः स्याद्वै शककर्ता नरोत्तमः ॥९॥ केवलं भूमिशायी तु कैलासे वासमाप्नुयात् ॥
प्रातः स्नानान्नभोमासि अब्दं तत्फलभाङ्मतः ॥१०॥ जितेन्द्रियत्वान्मासेऽस्मिन्बलमैन्द्रियकं

ओदन (चावल) को नहीं खाता अथवा हविष्यान्न भोजन करता है वह चावल आदि समस्त धान्यों का अक्षय निधि (खजाना) वाला होता है ॥८॥ जो इस मास में पत्तल में भोजन करता है वह सुवर्णपात्र में भोजन करने वाला होता है और शाक के त्याग करने से शक का कर्त्ता होता है अर्थात् नया शक (वर्ष) का प्रवर्त्तक होता है तथा मनुष्यों में श्रेष्ठ होता है ॥ ९ ॥ जो केवल पृथिवी में शयन करता है वह कैलास में जाकर वास करता है और जो इस श्रावण मास में प्रातःकाल एक दिन स्नान करता है वह एक वर्ष स्नान के फल का भागी होता है ॥१०॥ तथा इस मास में जितेन्द्रिय

होकर रहने से समस्त इन्द्रिय सम्बन्धी बल से सम्पन्न होता है। और इस मास से स्फटिकमणि, पाषाण, मृत्तिका (मिट्टी) मरकत मणि के बने हुए शिवलिङ्ग में ॥ ११ ॥ अथवा स्वयं प्रादुर्भूत या बनाए हुए में या पिष्ट (पिसान) के बनाये या पित्तल आदि धातु के बनाये या चन्दन या मक्खन के बनाये अथवा किसी के बनाये शिवलिंग में ॥ १२ ॥ एक वार पूजन करने से सौ ब्रह्महत्या को भस्म कर देता है। सूर्यग्रहण और चन्द्रग्रहण में तथा अन्य किसी क्षेत्र में जो सिद्धि

भवेत् ॥ स्फाटिकेऽश्ममये वापि मार्त्स्ने मारकतेऽपि वा ॥११॥ स्वयम्भौ वाऽस्वयम्भौ वा पैष्टे धातुमयेऽपि वा ॥ चन्दने नावनीते वा अन्यस्मिन्वापि लिङ्गके ॥१२॥ सकृत्पूजां प्रकुर्वाणो ब्रह्महत्याशतं दहेत् ॥ सूर्यचन्द्रोपरागेषु सिद्धिः क्षेत्रेऽपि वा क्वचित् ॥१३॥ सिद्धिर्या लक्षजाप्येन सकृत्स्याज्जपतोऽत्र सा ॥ अन्यकाले कृता ये स्युर्नमस्कारा: प्रदक्षिणाः ॥१४॥ सहस्रेण फलं यत्स्यान्मासेऽस्मिन्नेकवारतः ॥ मत्प्रिये श्रावणे मासि वेदपारायणे कृते ॥१५॥ सर्वेषां वेदमन्त्राणां सिद्धिः सम्यक्प्रजायते ॥ मासेऽस्मिन्पौरुषं सूक्तं जपते श्रद्धयान्वितः

कही गई है ॥१३॥ और लक्ष जपसे जो सिद्धि कही गई है इस मास में वह सिद्धि एक वार जप करने मात्र से मिलती है। तथा अन्य समय में किए गए नमस्कार और प्रदक्षिणा ॥ १४ ॥ एक हजार का जो फल होता है इस मास में वह फल एक वार करने से मिलता है। मेरे प्रिय श्रावण मास में वेदपारण करने पर ॥ १५ ॥ समस्त वेदमन्त्रों की भलीभांति

सिद्धि हो जाती है। और जो इस मास में श्रद्धायुक्त होकर पुरुषसूक्त का जप करता है ॥ १६ ॥ यदि एक हजार अथवा कलि में चतुर्गुण (चार हजार) अथवा पुरुषसूक्त के अक्षर-संख्या से परिमित अथवा आलस्य छोड़कर सौ पाठ करता है ॥१७॥ अक्षर सख्या से करने में असमर्थ मनुष्य सौ पाठ को करता है तो ब्रह्महत्यादि पापों से मुक्त हो जाता है इसमें सन्देह

॥१६॥ कृत्वा सङ्ख्यासहस्रं तु कलौ स्याच्च चतुर्गुणम् ॥ वर्णानां सङ्ख्यया वापि शतं कुर्यादतन्द्रितः ॥ १७ ॥ अशक्तः सङ्ख्यया कर्तुं शतमानेन वा जपेत् ॥ ब्रह्महत्यादिपापेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः ॥ १८ ॥ गुरुतल्पे कृते पापे प्रायश्चित्तमिदं परम् ॥ नास्त्येतत्सदृशं पुण्यं पवित्रं पापनाशनम् ॥ १९ ॥ विना पौरुषजाप्येन न नयेदेकमप्यहः ॥ अर्थवादमिमं ब्रूयात्स नरो निरयी भवेत् ॥२०॥ ग्रहयज्ञः प्रकर्तव्यः समिच्चरुतिलाज्यकैः ॥ धूपगन्धप्रसूनादिनैवेद्यादिप्रभेदतः ॥ २१ ॥ तद्रूपाणां च ध्यानादि सम्पाद्य च यथायथम् ॥ कोटिहोमो

नहीं है ॥१८॥ गुरुशय्या पर पाप करने का यह उत्तम प्रायश्चित्त है इसके समान पापों को नाश करनेवाला पवित्र पुण्य फल को देनेवाला दूसरा साधन नहीं है ॥१९॥ इसलिये इस मास में विना पुरुष सूक्त जप के एक दिन भी व्यतीत न करे। जो इस विषय को अर्थवाद (रोचक) कहता है वह मनुष्य नरक का गामी होता है ॥ २० ॥ समिधा, चरु, तिल, आज्य (घी) से ग्रहयज्ञ को करे और धूप, गन्ध, पुष्प आदि नैवेद्य आदि के भेद से पूजन करे ॥ २१ ॥ श्रीशङ्कर

भगवान् के रूपों का ध्यान आदि ठीक २ कर यथाशक्ति कोटिहोम, लक्षहोम, अयुत (दस हजार) होम को करे ॥२२॥ व्याहृति (ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः) मन्त्र से तिलों की आहुति देना भी ग्रहयज्ञ नाम से कहा गया है। हे सनत्कुमारजी! अब वारों के व्रतों को कहूँगा आप सुनिये ॥ २३ ॥ हे अनघ! मैं तुमसे प्रथम रविवार के व्रत को कहूँगा इस विषय में लोग इस पुरातन इतिहास को कहा करते हैं ॥ २४ ॥ सुन्दर प्रतिष्ठानपुर में सुकर्मा नाम का एक ब्राह्मण दरिद्र कृपण

लक्षहोमोऽयुतहोमस्तु शक्तितः ॥२२॥ तिलैर्व्याहृतिभिः कार्यो ग्रहयज्ञाभिधोऽप्यसौ ॥ अथ वक्ष्यामि वाराणां व्रतानि शृणु साम्प्रतम् ॥२३॥ तत्रादौ रविवारस्य व्रतं वक्ष्यामि तेऽनघ ॥ अत्राप्युदाहरन्तीममितिहासं पुरातनम् ॥ २४ ॥ प्रतिष्ठानपुरे रम्ये सुकर्मा नाम वै द्विजः ॥ आसीद्दरिद्रः कृपणो भैक्ष्यचर्यापरायणः ॥२५॥ एकदा स गतो धान्यं याचितुं पर्यटन्पुरम् ॥ स्त्रियो ददर्श सदने कस्यचिद्गृहमेधिनः ॥२६॥ चरन्त्यो रविवारस्य मिलिता व्रतमुत्तमम् ॥ तदोचुस्ताश्च तं दृष्ट्वा आच्छादयत सत्वरम् ॥२७॥ पूजाविधिं ततो विप्रः प्रार्थयामास ताः

भैक्षचर्या में परायण हुआ ॥ २५ ॥ एक दिन वह सुकर्मा ब्राह्मण धान्य की भिक्षा के वास्ते प्रतिष्ठानपुर में भ्रमण करता हुआ किसी गृहस्थ के गृह में स्त्रियों को देखता भया ॥ २६ ॥ वे स्त्रियाँ मिलकर उत्तम रविवार के व्रत को कर रही थीं उस समय उस ब्राह्मण को देखकर उन स्त्रियों ने पूजन को शीघ्र आच्छादन कर दिया ॥ २७॥ बाद उस ब्राह्मण ने उन

स्त्रियों से पूजाविधि जानने के लिये प्रार्थना की और यह कहा कि भो साध्वी ! आप लोग इस व्रत को क्यों आच्छादन करती हैं ? ॥ २८ ॥ आप सब दयालु हैं मुझपर कृपा कर इस व्रत को कहें क्योंकि परोपकार के समान तीनों लोकों में दूसरा धर्म नहीं है ॥ २९ ॥ समदृष्टि रखने वाले साधु पुरुषों को परोपकार ही स्वार्थ अभीष्ट है । मैं दरिद्र अवस्था से पीड़ित हूँ इस उत्तम व्रत को सुनकर ॥३०॥ मैं भी व्रत को करूँगा भो साध्वी ! आप इस व्रत की विधि और फल को

स्त्रियः ॥ छाद्यते किं नु भोः साध्व्यो भवतीभिरिदं व्रतम् ॥ २८ ॥ कथयध्वं कृपां कृत्वा ममोपरि दयालवः ॥ परोपकारसदृशो धर्मो नास्ति जगत्त्रये ॥२९॥ साधूनां समचित्तानां परार्थः स्वार्थ एव हि ॥ दरिद्रपीडितश्चाहं श्रुत्वेदं व्रतमुत्तमम् ॥३०॥ चरिष्यामि विधिं ब्रूत फलं चास्य व्रतस्य हि ॥ ३१ ॥ स्त्रिय ऊचुः ॥ उन्मादं वा प्रमादं वा विस्मृतिं वा करिष्यसि ॥ अभक्तिं वाप्यनास्थां वा कथं देयं तव द्विज ॥ ३२ ॥ इति तासां वचः श्रुत्वा विप्रेन्द्रो वाक्यमब्रवीत् ॥ ज्ञानवानस्मि भोः साध्व्यो भक्तिमांश्चास्मि सुव्रताः ॥ ३३ ॥ एवं तद्वचनं श्रुत्वा प्रौढा तासु च याऽभवत् ॥ सा प्रोवाच व्रतं तस्मै यथाभूतं च तद्विधिम् ॥ ३४ ॥

कहें ॥ ३१ ॥ स्त्रियों ने सुकर्मा ब्राह्मण से कहा कि हे द्विज ! यदि तुम व्रत के विषय में उन्माद या प्रमाद या विस्मृति या अभक्ति या अनास्था करोगे तो इस व्रत को तुम्हारे लिये कैसे दिया जाय ॥ ३२ ॥ उन स्त्रियों के इस वचन को सुनकर ब्राह्मण श्रेष्ठ ने कहा कि भो साध्वि ! मैं ज्ञानवान् भक्तिमान् और श्रेष्ठ व्रतों का करनेवाला हूँ ॥३३॥ इस प्रकार

सुकर्मा ब्राह्मण के वचन को सुनकर उन स्त्रियों में से एक प्रौढा स्त्री ने उस होनेवाले व्रत और उसकी विधि को उस सुकर्मा ब्राह्मण से कहा कि ॥ ३४ ॥ श्रावणमास में शुक्लपक्ष के प्रथम रविवार के दिन मौन होकर उठै और शीत जल से स्नान करे ॥३५॥ तथा अपने नित्यकर्म को करके नागवल्ली (पान) के पत्रपर बारह परिधि का मण्डल लिखे ॥३६॥ उसको रक्तचन्दन से सूर्यनारायण के समान गोलाकार लिखे उस मण्डल में संज्ञा नामक स्त्री के साथ सूर्य की रक्तचन्दन से

श्रावणे शुक्लपक्षे तु प्रथमे रविवासरे ॥ मौनेनोत्थायावगाहं कुर्याच्छीतोदकेन तु ॥ ३५ ॥
स्वनित्यकर्म सम्पाद्य नागवल्लीदले शुभे ॥ परिधिद्वादशयुतं मण्डलं तत्र संलिखेत् ॥ ३६ ॥
अर्कवद्वर्तुलं सम्यग्रक्तचन्दनतः शुभम् ॥ तत्र संज्ञायुतं सूर्यं पूजयेद्रक्तचन्दनात् ॥ ३७ ॥
जानुभ्यामवनीं गत्वा अर्घ्यं द्वादशमण्डले: ॥ रक्तचन्दनमिश्रैश्च जपाकुसुमसंयुतम् ॥ ३८ ॥
दद्याद्गभस्तये सम्यक् श्रद्धाभक्तिपुरःसरम् ॥ रक्ताक्षतैर्जपापुष्पैस्तथान्यैरुपचारकैः ॥ ३९ ॥
नारीकेलस्य बीजं तु खण्डशर्करया युतम् ॥ नैवेद्यमर्पयित्वा तु मन्त्रैरादित्यलिङ्गकैः ॥४०॥

पूजा करे ॥३७॥ घुटनों के बल पृथ्वी पर स्थित होकर सूर्य के बारह मण्डलों पर पृथक् २ रक्तचन्दन से मिश्रित अक्षत और जपापुष्प से युक्त अर्घ्य को ॥३८॥ श्रद्धा भक्ति पूर्वक अच्छी तरह सूर्यनारायण के लिये देवे और अर्घ्य को रक्ताक्षत जपापुष्प तथा उपाचारों से युक्त कर ले ॥ ३९ ॥ नारियल का बीज (गिरि) और खाँड़ चीनी सूर्यमन्त्रों को पढ़कर

नैवेद्य देवे ॥ ४० ॥ और बारह सूर्य के मन्त्रों से स्तुति करे, बारह नमस्कार करे तथा बारह प्रदक्षिणा करे और ६ सूत्र को एक में मिलाकर उसमें ६ ग्रन्थी लगावे ॥४१॥ बाद उस सूत्र को सूर्यनारायण को अर्पण कर उसको अपने गला में बाँधे और बारह फलों से युक्त कर बायन को ब्राह्मण के लिये देवे ॥४२॥ इस व्रत के प्रकार को किसी के आगे न कहे हे विप्र ! इस प्रकार व्रत के करने से निर्धन पुरुष धन को प्राप्त करता है ॥ ४३ ॥ पुत्रहीन पुरुष पुत्र को प्राप्त करता है

स्तुवीत द्वादशवरैर्नमस्कारान्प्रदक्षिणाः ॥ षट्तन्तुनिर्मितं सूत्रं षड्भिर्ग्रन्थिभिरन्वितम् ॥४१॥
अर्पयित्वा तु देवेशे बध्नीयात्तु गले च तत् ॥ द्विजाय वायनं दद्यात्फलैर्द्वादशभिर्युतम् ॥४२॥
एतद्व्रतप्रकारं न श्रावयेत्कस्यचित्पुरा ॥ एवं व्रते कृते विप्र निर्धनो धनमाप्नुयात् ॥४३॥
अपुत्रो लभते पुत्रं कुष्ठी कुष्ठात्प्रमुच्यते ॥ बद्धः स्याद्बन्धरहितो रोगी रोगेण हीयते ॥४४॥
किं बहूक्तेन विप्रेन्द्र यद्यदिच्छति वाञ्छितम् ॥ तत्तल्लभेत्साधकोऽसौ व्रतस्यास्य प्रभावतः
॥४५॥ एवं चतुर्षु वारेषु कदाचिदपि पञ्चसु ॥ उद्यापनं ततः कार्यं व्रतसम्पूर्णहेतवे ॥४६॥

और कुष्ठी (कोढी) कुष्ठ से मुक्त हो जाता है तथा बन्धन (कारागार) में पड़ा हुआ बन्धन से मुक्त हो जाता है और रोगी रोग से छूट जाता है ॥४४॥ हे विप्रेन्द्र ! विशेष क्या कहें जो २ इच्छा करता है वह २ अभीष्ट इस व्रत के प्रभाव से साधक प्राप्त करता है ॥४५॥ इस तरह श्रावण में चार रविवार को अथवा कभी पाँच रविवार को व्रत करे बाद

व्रत के सम्पूर्ण फल के वास्तें उद्यापन को करे ॥४६॥ हे विप्रेन्द्र ! इस तरह व्रत को करे इससे समस्त सिद्धि होगी। बाद वह ब्राह्मण उन साध्वी स्त्रियों को नमस्कार कर अपने घर आया ॥४७॥ और घर आकर सुकर्मा ने जैसा सुना था वैसा समस्त विधि से उस रविवार के व्रत को किया और अपने दोनों कन्याओं को भी व्रतविधान को कहा ॥४८॥ उस व्रत के श्रवणमात्र से तथा पूजन के दर्शन से वे दोनों सुकर्मा की कन्या देवांगना के समान व्रत के प्रभाव से सुन्दर हो

एवं कुरुष्व विप्रेन्द्र सर्वसिद्धिर्भविष्यति ॥ नमस्कृत्वा तु ताः साध्वीर्विप्रः स्वगृहमाययौ ॥ ४७ ॥ तथा चकार तत्सर्वं व्रतं चैव यथाश्रुतम् ॥ स्वकन्यकाद्वयस्यापि श्रावयामास तद्विधिम् ॥४८॥ तस्य श्रवणमात्रेण दर्शनात्पूजनस्य च ॥ स्वरंगनोपमे कन्ये जाते तस्य प्रभावतः ॥४९॥ तदाप्रभृति विप्रस्य गृहे लक्ष्मीर्विवेश ह ॥ नानामार्गैर्निमित्तैश्च लक्ष्मीवानिति सोऽभवत् ॥५०॥ कदाचिद्गच्छता राज्ञा विप्रसद्मपुरोऽध्वना ॥ वातायने स्थिते कन्ये दृष्टे निरुपमे शुभे ॥५१॥ देहावयवसंस्थानैर्वस्तु यद्यच्च सुन्दरम् ॥ त्रैलोक्ये भर्त्संयन्त्यौ ते

गईं ॥४९॥ उस दिन से सुकर्मा ब्राह्मण के घर में लक्ष्मी ने वास किया। नाना मार्गों से नाना निमित्तों से वह ब्राह्मण लक्ष्मीवान् हो गया ॥ ५० ॥ किसी दिन राजा ने ब्राह्मण के मकान के सामने मार्ग होकर निकलते हुए सर्वश्रेष्ठ उन दोनों कन्याओं को वातायन (बरामदा या खिड़की) में बैठे हुए देखा ॥५१॥ वे दोनों कन्यायें अपने शरीर के अवयवों

रो त्रैलोक्य के समस्त श्रेष्ठ वस्तुओं का और कमल तथा चन्द्रमा का भी तिरस्कार करती थीं ॥५२॥ उन कन्याओं के देखने से राजा मोह को प्राप्त होकर क्षण भर वहाँ ही स्थित हो गया और राजा ने ब्राह्मण को बुलाकर उन दोनों कन्याओं के लिए प्रार्थना की ॥५३॥ ब्राह्मण ने भी प्रसन्न होकर दोनों कन्याओं को राजा के लिए दे दिया और वे दोनों कन्यायें राजा को पतिरूप में पाकर प्रसन्न हुईं ॥५४॥ और प्रसन्नता से इस व्रत को करके पुत्र पौत्र आदि से सम्पन्न हुईं। हे

पद्मचन्द्रादिकं च यत् ॥ ५२ ॥ राजा मोहं समापेदे तत्रैवावस्थितः क्षणम् ॥ आमन्त्र्य ब्राह्मणं सद्यः प्रार्थयामास कन्यके ॥५३॥ विप्रोऽपि हर्षितो भूत्वा प्रादाद्राज्ञे सुताद्वयम् ॥ राजानं प्राप्य भर्तारं तेऽपि कन्ये मुदान्विते ॥५४॥ पुत्रपौत्रादिसम्पन्ने चक्रतुश्च स्वयं व्रतम् ॥ व्रतमेतत्समाख्यातं मुने तव महोदयम् ॥५५॥ यस्य श्रवणमात्रेण सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥ अनुष्ठानं फलं तस्य किं वर्ण्यं विधिनन्दन ॥५६॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये प्रकीर्णकनानाव्रतरविवारव्रतादिकथनं नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

मुने ! इस महान् अभ्युदय को करने वाले व्रत को तुमसे कहा ॥ ५५ ॥ हे विधिनन्दन (ब्रह्मा के पुत्र) ! जिस व्रत के श्रवणमात्र से समस्त कामनायें पूर्ण हो जाती हैं उस व्रत के अनुष्ठान के फल का क्या वर्णन किया जा सकता है ॥५६॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे व्या. आ 'विद्यारत्न'पं० माधवप्रसादव्यास कृतायां भाषाटीकायां प्रकीर्णकनानाव्रतरविवारव्रतादिकथनं नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

सनत्कुमार जी श्रीशङ्कर जी से बोले कि हे ईश्वर ! हर्ष को देनेवाले रविवार के माहात्म्यको मैंने सुना अब आप श्रावणमास में सोमवार व्रत के माहात्म्य को कहिये ॥१॥ ईश्वर सनत्कुमार जी से बोले कि हे सनत्कुमार जी ! रवि मेरा नेत्र है उस एक अङ्ग का यह उत्तम माहात्म्य हुआ तो 'उमया सहितः सोमस्तस्य सोमस्य' अर्थात् उमा (पार्वती) सहित सोम पार्वतीपति हुये इस सर्वाङ्ग वाचक मेरे नाम माहात्म्य का क्या वर्णन हो सकता है ? ॥२॥ मुझसे इसका माहात्म्य जो

सनत्कुमार उवाच ॥ रविवारस्य माहात्म्यं श्रुतं मे हर्षकारकम् ॥ सोमवारस्य माहात्म्यं
श्रावणे मासि मे वद ॥ १ ॥ ईश्वर उवाच ॥ रविर्मे नयनं तस्य माहात्म्यमिदमुत्तमम् ॥
उमासहितमन्नाम्नस्तस्य सोमस्य किं पुनः ॥ २ ॥ माहात्म्यं वर्णनीयं मे यत्किञ्चिदपि ते
ब्रुवे ॥ सोमश्चन्द्रो विप्रराजः सोमः स्याद्यज्ञसाधनम् ॥ ३ ॥ निमित्तानि च तन्नाम्नः शृणु
मत्तः समाहितः ॥ मत्स्वरूपो यतो वारस्ततः सोम इति स्मृतः ॥ ४ ॥ प्रदाता सर्वराज्यस्य
श्रेष्ठश्चैव ततो हि सः ॥ समस्तयज्ञफलदो व्रतकर्त्रे यतो हि सः ॥ ५ ॥ तस्य शृणु विधिं

कुछ वर्णन हो सकता है उसको मैं आपसे कहता हूँ । सोम चन्द्रमा का नाम है और सोम ब्राह्मणों के राजा हैं तथा सोम यज्ञ का साधन (लता) का नाम है ॥३॥ उन नामों के कारण को समाहित (एकाग्रमन) होकर मुझसे सुनिये । यह वार मेरा स्वरूप है इसलिये इसका सोम नाम कहा गया है ।४॥ समस्त राज्य का देनेवाला होने से यह श्रेष्ठ है और व्रत करनेवाले को समस्त यज्ञ के फल का देनेवाला होने से भी श्रेष्ठ है ॥५॥ हे विप्र ! उसके व्रत की विधि सुनिये, मैं विस्तार

से तुमसे कहता हूँ। बारहों मास में सोमवार का व्रत करना श्रेष्ठ है ॥६॥ बारहों मास में व्रत करने में असमर्थ होवे तो श्रावणमास में सोमव्रत को करे। इस श्रावणमास में सोमवार का व्रत करने से एक वर्ष व्रत करने के फल का भागी होता है ॥७॥ श्रावण के शुक्लपक्ष के प्रथम सोमवार के दिन सोमवार व्रत का सङ्कल्प करे कि—'मैं सोमवार का व्रत करूँगा इस

विप्र विस्तरात्कथयामि ते ॥ द्वादशेष्वपि मासेषु सोमवारः प्रशस्यते ॥६॥ तावत्कर्तुमशक्तश्चेच्छ्रावणे मासि कारयेत ॥ अस्मिन्मासे व्रतं कृत्वा अब्दव्रतफलं लभेत् ॥ ७ ॥ श्रावणे शुक्लपक्षे तु प्रथमे सोमवासरे ॥ सङ्कल्पयेद्व्रतं सम्यक् शिवो मे प्रीयतामिति ॥ ८ ॥ एवं चतुर्षु वारेषु भवेयुः पञ्च वा यदि ॥ प्रातः सङ्कल्पयेत्तत्र नक्तं च शिवपूजनम् ॥ ९ ॥ उपचारैः षोडशभिः सायं च पूजयेच्छिवम् ॥ शृणुयाच्च कथां दिव्यामेकाग्रकृतमानसः॥१०॥ सोमवारव्रतस्यास्य कथ्यमानं निबोध मे ॥ श्रावणे प्रथमे सोमे गृहीयाद्व्रतमुत्तमम् ॥११॥

व्रत से श्रीशिवजी प्रसन्न होवें' ॥ ८ ॥ इस तरह चारो सोमवार के दिन प्रातःकाल में सङ्कल्प करे। यदि मास में पाँच सोमवार हों तो पाँचों सोमवार के दिन सङ्कल्प करना और सङ्कल्प करके सायङ्काल में शिवजी का पूजन करे ॥ ९ ॥ सायङ्काल में श्रीशिवजी का षोडशोपचार से पूजन करे और एकाग्रमन से श्रीशिवजी की कथा का श्रवण करे ॥१०॥ मैं इस सोमवार व्रत की विधि को कहता हूँ आप सुनिये। श्रावणमास के प्रथम सोमवार के दिन इस श्रेष्ठ व्रत के नियम को

ग्रहण करे ॥११॥ अच्छी तरह स्नान कर पवित्र होकर शुक्लवस्त्र को धारण कर काम क्रोध अहङ्कार द्वेष पैशुन्य का त्याग कर ॥ १२ ॥ मालती मल्लिका आदि श्वेत पुष्पों को ले आवे और भी अनेक प्रकार के पुष्प तथा अभीष्ट उपचारों को ले आवे और इन उपचारों से ॥१३॥ मूलमन्त्र (ॐ नमः शिवाय) या त्र्यम्बकमन्त्र (त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धि पुष्टिवर्द्धनम्।

सुस्नातश्च शुचिर्भूत्वा शुक्लाम्बरधरो नरः ॥ कामक्रोधाद्यहङ्कारद्वेषपैशून्यवर्जितः ॥ १२ ॥
आहरेच्छ्वेतपुष्पाणि मालतीमल्लिकादिकाः ॥ अन्यैश्च विविधैः पुष्पैरभीष्टैरुपचारकैः ॥१३॥
पूजयेन्मूलमन्त्रेण त्र्यम्बकेण ततः परम् ॥ शर्वाय भवनाशाय महादेवाय धीमहि ॥ १४ ॥
उग्राय चोग्रनाथाय भवाय शशिमौलिने ॥१५॥ रुद्राय नीलकण्ठाय शिवाय भवहारिणे ॥
एवं सम्पूज्य देवेशमुपचारैर्मनोहरैः ॥१६॥ यथाविभवसारेण तस्य पुण्यफलं शृणु ॥ सोम-
वारे यजन्ते ये पार्वत्या सहितं शिवम् ॥ ते लभन्त्यक्षयाँल्लोकान्पुनरावृत्तिदुर्लभान् ॥१७॥

उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्)॥ को पढ़कर पूजन करे बाद कहे कि मैं शर्व, भवनाशन, महादेव का ध्यान करता हूँ ॥ १४ ॥ और उग्र, उग्रनाथ, भव, शशिमौली (चन्द्रमौली) का ध्यान करता हूँ ॥१५॥ तथा रुद्र, नीलकण्ठ, शिव, भवहारी का ध्यान करता हूँ। इस तरह देवेश का मनोहर उपचारों से पूजन कर ॥ १६ ॥ अपने विभव के अनुसार जो इस व्रत को करता है उसके पुण्यफल को सुनिये, सोमवार के दिन जो पार्वती के साथ श्रीशिवजी का पूजन करते हैं

वे लोग पुनरावृत्ति से रहित अक्षय लोक को प्राप्त करते हैं ॥ १७ ॥ इस श्रावणमास में नक्तव्रत के पुण्य को संक्षेप से कहता हूँ। देवता दानवों से भी अभेद्य जो सात जन्म के पाप हैं ॥ १८ ॥ वे सब नक्तभोजन व्रत से नष्ट हो जाते हैं इस विषय में विचार नहीं करना, अथवा इस श्रेष्ठ व्रत को उपवास करके करना ॥ १९ ॥ पुत्र की इच्छा करनेवाला पुत्र

अत्र नक्तेन यत्पुण्यं कथयामि समासतः ॥ सप्तजन्मार्जितं पापमभेद्यं देवदानवैः ॥ १८ ॥
प्रणश्येन्नक्तभुक्तेन नात्र कार्या विचारणा॥ उपवासेन वा कुर्याद्व्रतमेतदनुत्तमम् ॥१९॥ पुत्रार्थी
लभते पुत्रान्धनार्थी लभते धनम् ॥ यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति मानवः ॥२०॥
इह लोके चिरं स्थित्वा भुक्त्वा भोगान्यथेप्सितान् ॥ विमानवरमारुह्य रुद्रलोके महीयते
॥ २१ ॥ चलं चित्तं चलं वित्तं चलं जीवितमेव च ॥ एवं ज्ञात्वा प्रयत्नेन व्रतस्योद्यापनं
चरेत् ॥ २२ ॥ उमामहेश्वरौ हैमौ राजते वृषभे स्थितौ ॥ यथाशक्ति प्रकर्तव्यौ वित्तशाठ्यं

को, धन की इच्छा करनेवाला धन को प्राप्त करता है। मनुष्य जिस २ की इच्छा करता है उस २ फल को प्राप्त करता है ॥ २० ॥ इस लोक में चिरकाल तक रहकर और अपने अभीष्ट भोगों को भोगकर अन्त समय में श्रेष्ठ विमान पर चढ़कर रुद्रलोक को जाता है और वहाँ पूजित होता है ॥२१॥ चित्त को और धन को तथा जीवन (प्राण) को चलायमान समझकर यत्नपूर्वक व्रत के उद्यापन को करे ॥ २२ ॥ धन की शठता का त्याग कर अपनी शक्ति के अनुसार चाँदी

के बैल पर स्थित सुवर्ण की प्रतिमा उमामहेश्वर की बनावे ॥२३॥ (दिव्य) स्वच्छ सुन्दर लिङ्गतोभद्र मण्डल को बनावे उस पर घट स्थापन करे और दो श्वेत वस्त्र से आच्छादित करे ॥२४॥ और घट के ऊपर ताम्रपात्र या बांस का पात्र रखकर उसके ऊपर उमा (पार्वती) के साथ शिव की प्रतिमा स्थापित करे ॥ २५ ॥ श्रुति (वेद) स्मृति (स्मार्त) पुराण

न कारयेत् ॥ २३ ॥ मण्डलं लिङ्गतोभद्रं दिव्यं वै कारयेच्छुभम् ॥ तत्र संस्थापयेत्कुम्भं श्वेतवस्त्रयुगान्वितम् ॥ २४ ॥ ताम्रपात्रं वैणवं वा कुम्भस्योपरि विन्यसेत् ॥ तस्योपरि न्यसेद्देवमुमया सहितं शिवम् ॥ २५ ॥ श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तैर्मन्त्रैः सम्पूजयेच्छिवम् ॥ पुष्पमण्डपिका कार्या वितानं चैव शोभनम् ॥२६॥ रात्रौ जागरणं कार्यं गीतवादित्रनिःस्वनैः ॥ स्वगृह्योक्तविधानेन ततोऽग्निं स्थापयेद् बुधः ॥ २७ ॥ ततो होमं च शर्वाद्यैरेकादशसुनामभिः ॥ पालाशाभिः समिद्भिश्च हुनेदष्टाधिकं शतम् ॥२८॥ यवव्रीहितिलाद्यैश्च

(पौराण) मन्त्रों से श्रीशिवजी का पूजन करे और पुष्पों का मण्डप बनावे तथा उसके ऊपर एक सुन्दर चंदोवा बाँधे ॥२६॥ रात्रि के समय गीत वाद्य के शब्दों से जागरण करे और अपने गृह्यसूत्र के विधान से बुद्धिमान् अग्नि को स्थापित करे ॥ २७ ॥ बाद शर्व, भवनाश, महादेव, उग्र, उग्रनाथ, भव, शशिमौली, रुद्र, नीलकण्ठ, शिव, भवहारी, इन ग्यारह नामों से हवन करे और पलाश की समिधा से १०८ आहुति देवे॥२८॥ यव, व्रीहि, तिल आदि से आप्यायस्व मन्त्र पढ़कर

और त्र्यम्बक मन्त्र पढकर बिल्वपत्र से अथवा षडक्षर (ॐ नमः शिवाय) मन्त्र पढ़कर पुनः आहुति देवे ॥ २९ ॥ बाद पूर्णाहुति देकर स्विष्टकृत् आहुति आदि करे और आचार्य का पूजन करे तथा आचार्य को गौ देवे ॥ ३० ॥ अति सुन्दर ग्यारह ब्राह्मणों को भोजन करावे और उन ब्राह्मणों को ग्यारह घट वंशपात्र (बांस की डाली) के सहित देवे ॥ ३१ ॥

आप्यायस्वेति मन्त्रतः ॥ बिल्वपत्रैस्त्र्यम्बकेण षड्वर्णेनापि वा पुनः ॥ २९ ॥ पूर्णाहुतिं ततो हुत्वा कृत्वा स्विष्टकृतादिकम् ॥ आचार्यं पूजयेत्पश्चाद्गां च तस्मै प्रदापयेत् ॥ ३० ॥ ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चादेकादश सुशोभनान् ॥ एकादश घटास्तेभ्यो वंशपात्रसमन्विताः ॥३१॥ सम्पूजितं ततो देवं देवोपकरणानि च ॥ आचार्याय ततो दद्यात्प्रार्थयेत्तदनन्तरम् ॥ ३२ ॥ परिपूर्णं व्रतं मे स्याच्छिवो मे प्रीयतामिति ॥ बन्धुभिः सह भुञ्जीत ततो हर्षपुरःसरम् ॥३३॥ अनेनैव विधानेन य इदं व्रतमाचरेत् ॥ यं यं चिन्तयते कामं तं तं

तथा पूजन किये प्रधान देवता और उपकरण (प्रधान देव को चढी हुई सामग्री) को आचार्य के लिये दे देवे और प्रार्थना करे ॥३२॥ कि मेरा व्रत परिपूर्ण होवे और शिव भगवान् इस व्रत से प्रसन्न होवें । बाद प्रसन्नता पूर्वक बन्धुजनों के साथ भोजन करे ॥३३॥ जो इसी विधान से इस व्रत को करता है तो वह जो २ कामना करता है वह सब इस व्रत से प्राप्त करता है ॥३४॥ बाद शिवलोक में जाता है और उस शिवलोक में पूजित होता है। इस सोमवार व्रत को प्रथम श्रीकृष्ण-

चन्द्र ने किया ॥३४॥ और श्रेष्ठ राजाओं ने तथा धर्मतत्पर आस्तिकों ने किया। जो इस सोमवार व्रत के माहात्म्य का

प्राप्नोति मानवः ॥३४॥ शिवलोके ततो गत्वा तस्मिँल्लोके महीयते ॥ कृष्णेनाचरितं पूर्वं सोमवारव्रतं शुभम् ॥३५॥ नृपैः श्रेष्ठैस्तथा चीर्णमास्तिकैर्धर्मतत्परैः ॥ इदं यः शृणुयान्नित्यं सोऽपि तत्फलमाप्नुयात् ॥ ३६ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमास-माहात्म्ये सोमवारव्रतकथनं नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

श्रवण करेगा वह भी व्रत के फल का भागी होवेगा ॥ ३६ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमार-संवादे न्या. आ. 'विद्यारत्न' पं० माधवप्रसादव्यासकृतायां भाषाटीकायां सोमवारव्रतकथनं नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

ईश्वर (शिवजी) सनत्कुमार जी से बोले कि हे सनत्कुमारजी ! श्रेष्ठ भौमवार के दिन होने वाले व्रत को कहूँगा जिस व्रत के करने मात्र से वैधव्य का नाश हो जाता है ॥१॥ विवाह के बाद पाँच वर्ष तक इस व्रत को करे । इस व्रत का मङ्गलागौरीव्रत नाम है और यह व्रत पापों को नाश करनेवाला है ॥ २ ॥ विवाह के बाद प्रथम श्रावणमास के शुक्लपक्ष

ईश्वर उवाच—सनत्कुमार वक्ष्यामि भौमव्रतमनुत्तमम् ॥ यस्यानुष्ठानमात्रेण अवैधव्यं प्रजायते ॥ १ ॥ विवाहानन्तरं पञ्चवर्षाणि व्रतमाचरेत् ॥ नामास्य मङ्गलागौरीव्रतं पापप्रणाशनम् ॥२॥ विवाहानन्तरं चाद्ये श्रावणे शुक्लपक्षके ॥ प्रथमं भौमवारस्य व्रतमेतत्तु कारयेत् ॥ ३ ॥ पुष्पमण्डपिका कार्या कदलीस्तम्भमण्डिता ॥ नानाविधैः फलैश्चैव पट्टकूलैश्च भूषयेत् ॥ ४ ॥ तत्र संस्थापयेद्देव्याः प्रतिमां स्वर्णनिर्मिताम् ॥ अन्यधातुमयीं वापि स्वशक्त्या तत्र पूजयेत् ॥ ५ ॥ उपचारैः षोडशभिर्मङ्गलागौरिसंज्ञिताम् ॥ दूर्वादलैः षोड-

के प्रथम भौमवार के दिन इस व्रत का आरम्भ करे ॥३॥ पुष्पों का मण्डप बनावे और केला के स्तम्भ से सुशोभित करे तथा अनेक प्रकार के फलों से और रेशमी वस्त्रों से भूषित करे ॥ ४ ॥ उस मण्डप में सुवर्ण की बनी देवी की प्रतिमा स्थापित करे अथवा अन्य धातु की बनी प्रतिमा अपने शक्ति के अनुसार बनाकर स्थापित करे और यथाशक्ति उस प्रतिमामें पूजन करे ॥५॥ उस प्रतिमा में मङ्गलागौरी का आवाहन कर षोडशोपचार से और सोलह दूर्वा के दलोंसे तथा सोरह अपामार्ग

(चिड़चिड़ा) के दलों से ॥६॥ और १६ चावल से १६ चना की दाल से पूजन करे और १६ बत्तियों का एक दीप हो ऐसे १६ दीपक को जलावे ॥७॥ और भक्ति से दही भात का नैवेद्य अर्पण करे तथा देवी के समीप सिल लोढ़ा स्थापित करे ॥८॥ इस तरह पाँच वर्ष तक व्रत को करके बाद उद्यापन को करे और माता को वायन देवे। अब उस वायन का प्रकार सुनिये ॥९॥

शमिरपामार्गदलैस्तथा ॥६॥ तावत्संख्यैस्तण्डुलैश्च चणानां शकलैस्तथा ॥ षोडशोन्मितवर्तीभिस्तावद्दीपांश्च दीपयेत् ॥ ७ ॥ दध्योदनं च नैवेद्यं तत्र भक्त्या प्रकल्पयेत् ॥ समीपं स्थापयेद्देव्या दृषदं चोपलं तथा ॥ ८ ॥ एवं कृत्वा तु पञ्चाब्दं तत उद्यापनं चरेत् ॥ मात्रे दद्याद्वायनं तु प्रकारं शृणु तस्य च ॥ ९ ॥ प्रतिमां मङ्गलागौर्याः सुवर्णपलनिर्मिताम् ॥ तदर्धेन तदर्धेन शक्त्या वाप्यथ कारयेत् ॥ १० ॥ तण्डुलैः पूरिते भाण्डे शक्त्या स्वर्णादिनिर्मिते ॥ संस्थाप्य परिधानीयं रमणीयां च कञ्चुकीम् ॥ ११ ॥ तयोरुपरि देव्यास्तु प्रतिमां स्थापयेत्ततः ॥ समीपभागे संस्थाप्य दृषदं चोपलं तथा ॥ १२ ॥ रौप्येण निर्मितं

एक पल सुवर्ण की प्रतिमा मङ्गलागौरी की बनावे अथवा आधा पल की अथवा आधा के आधा पल सुवर्ण की अथवा यथाशक्ति सुवर्ण की प्रतिमा बनावे ॥ १० ॥ यथाशक्ति सुवर्ण चाँदी आदि के बने घट को चावल से पूर्ण करके उस घट के ऊपर पहिरने के वस्त्र और कञ्चुकी (चोली) को रखकर ॥ ११ ॥ उसके ऊपर मङ्गलागौरी की प्रतिमा स्थापित करे और

देवी के समीप सिल लोढ़ा स्थापित करे ॥१२॥ और सिल लोढा चाँदी का बनाकर रखे। इस तरह माता के लिये वायन को देवे। और यत्न से १६ सोहागिन ब्राह्मणी को भोजन करावे ॥ १३ ॥ हे विप्र! इस तरह व्रत के करने से सात जन्म तक सौभाग्य होता है और पुत्र पौत्र सम्पदा आदि से युक्त होकर आनन्द करती है ॥१४॥ सनत्कुमार जी महादेव

मात्रे एवं दद्यात्तु वायनम् ॥ षोडशापि सुवासिन्यो भोजनीयाः प्रयत्नतः ॥ १३ ॥ एवं कृते व्रते विप्र सौभाग्यं सप्तजन्मसु ॥ पुत्रपौत्रादिभिश्चैव रमते सम्पदा युता ॥ १४ ॥ सनत्कुमार उवाच—केनेदं व्रतमाचीर्णं कस्य जातं फलं पुरा ॥ यथा स्यात्प्रत्ययः शम्भो कृपां कृत्वा तथा वद ॥१५॥ ईश्वर उवाच—कुरुदेशे पुरा राजा श्रुतकीर्तिरिति श्रुतः ॥ बभूव श्रुतसम्पन्नः कीर्तिमान्हतशात्रवः ॥ १६ ॥ चतुःषष्टिकलाभिज्ञो धनुर्विद्याविशारदः ॥ पुत्रादन्यच्छुभं सर्वं तस्य राज्ञो बभूव ह ॥१७॥ सन्तानविषयेऽथासौ बहुचिन्ताकुलोऽभवत् ॥

जी से बोले कि हे शम्भो! प्रथम इस व्रत को किसने किया और इस व्रत के करने से फल किसको हुआ, हे शम्भो! जिस तरह इस व्रत के विषय में मुझको विश्वास होवे वैसा आप मुझ पर कृपा कर कहिये ॥१५॥ ईश्वर सनत्कुमार जी से बोले। हे विप्र! पहिले समय में कुरुदेश में श्रुतकीर्ति नाम से प्रसिद्ध, शास्त्र का ज्ञाता, कीर्तिशाली और शत्रुरहित राजा हुआ ॥१६॥ वह राजा चौसठ कलाओं का ज्ञाता, धनुर्विद्या में विशारद था उस राजा को पुत्रसुख को छोड़कर और सब सुख था ॥१७॥

अनन्तर सन्तान के विषय में राजा बहुत चिन्ता से आकुल हो गया और जप ध्यान के द्वारा देवी की आराधना करने लगा ॥ १८ ॥ उस राजा के उग्र तप से देवी प्रसन्न हुई और उस राजा से बोली कि हे सुव्रत (सुन्दर व्रत करनेवाले)। वर माँगो ॥१९॥ तब श्रुतकीर्ति राजा बोला—हे देवि! यदि आप प्रसन्न हैं तो मुझे सुन्दर पुत्र को दीजिए, हे देवि! आपके

देव्या आराधनं चक्रे जपध्यानपुरःसरम् ॥१८॥ क्रूरेण तपसा तस्य देवी तुष्टा बभूव ह ॥ उवाच वचनं तस्मै वरं वरय सुव्रत ॥ १९ ॥ श्रुतकीर्तिरुवाच—यदि देवि प्रसन्नासि पुत्रं मे देहि शोभनम् ॥ अन्यद्देवि त्वत्प्रसादान्न न्यूनं किञ्चिदस्ति मे ॥ २० ॥ इति तस्य वचः श्रुत्वा देवी प्राह शुचिस्मिता ॥ दुर्लभं याचितं राजन्दास्ये तुभ्यं कृपावशात् ॥ २१ ॥ परं शृणुष्व राजेन्द्र पुत्रश्चेद्गुणवत्तरः ॥ ईप्सितश्चेत्षोडशाब्दं जीविष्यति न चाधिकम् ॥२२॥ रूपविद्याविहीनश्चेच्चिरजीवी भविष्यति ॥ इति देव्या वचः श्रुत्वा नृपश्चिन्तातुरोऽभवत् ॥२३॥

प्रसाद से अन्य किसी वस्तु की कमी नहीं है॥२०॥ यह राजा के वचन को सुनकर मन्द ईषद् हास्य को करती हुई देवी बोली कि हे राजन्! तुमने दुर्लभ वस्तु की याचना की है परन्तु कृपावश तुम्हारे लिये पुत्र को दूंगी ॥ २१ ॥ परन्तु हे राजेन्द्र! सुनिये, पुत्र अति गुणवान् और अभीष्ट भी होगा परन्तु १६ वर्ष से अधिक जीवित नहीं रहेगा ॥ २२ ॥ और यदि रूप विद्या से विहीन पुत्र होगा तो वह पुत्र चिरजीवी होगा। यह देवी के वचन को सुनकर राजा चिन्तातुर हो गया।

॥२३॥ और अपनी स्त्री से सलाह करके गुण से भूषित, समस्त लक्षणों से सम्पन्न १६ वर्ष वाले पुत्र की याचना की ॥२४॥ तब उस समय देवी अपने भक्त राजा को आज्ञा करती हुई कि हे नृपनन्दन! मेरे द्वार पर आम्र का वृक्ष है ॥२५॥ मेरी आज्ञा से उस आम्र के एक फल को लाकर अपनी स्त्री को खाने के लिए दे दो, उस फल के भक्षण से रानी उसी समय गर्भ को अवश्य

भार्यया सह सम्मन्त्र्य ययाचे गुणभूषितम् ॥ सर्वलक्षणसम्पन्नं षोडशाब्दायुषं सुतम् ॥२४॥
आज्ञापयामास तदा देवी भक्तं नराऽधिपम् ॥ आम्रवृक्षो मम द्वारे वर्तते नृपनन्दन ॥२५॥
तस्यैकं फलमादाय पत्न्यै देहि ममाज्ञया ॥ भक्षणार्थं च सा धत्रीं गर्भं सद्यो न संशयः
॥२६॥ हृष्टो राजा तथा चक्रे पत्नी गर्भं च सा दधौ ॥ दशमे मासि सुषुवे पुत्रं देवसुतो-
पमम् ॥२७॥ जातकर्मादिकं चक्रे हर्षशोकसमन्वितः ॥ चिरायुरिति नामास्य पिता चक्रे
शिवं भजन् ॥२८॥ प्राप्ते तु षोडशे वर्षे चिन्तामाप सभार्यकः ॥ ततश्चक्रे विचारं स कष्ट-

धारण करेगी ॥२६॥ राजा ने प्रसन्न होकर देवी के कथनानुसार आम्रफल लाकर अपनी स्त्री को दिया, उस फल के भक्षण से रानी को गर्भ रहा और दशम मास में देवपुत्र के समान पुत्र को रानी प्रसव (पैदा) करती हुई ॥ २७ । हर्ष शोक से युक्त राजा ने उस बालक का जातकर्मादि संस्कार किया और शिवजी का भजन (स्मरण) करता हुआ पिता ने उसका चिरायु नामकरण किया ॥२८॥ जिस दिन से १६ वाँ वर्ष आरम्भ हुआ उस दिन से रानी और राजा को चिन्ता ने आकर

घेर लिया । बाद राजा विचार करने लगा कि यह पुत्र बहुत कष्ट से मिला है ॥२६॥ अपने सामने इसके दुःखदाई मृत्यु को कैसे देखूँगा, इसलिए राजा ने लड़के के मामा के साथ पुत्र को काशीपुरी भेजने की व्यवस्था की ॥ ३० ॥ बाद यशस्विनी राजपत्नी ने अपने भाई से कहा कि तुम कार्पटिक के वेष को करके पुत्र को काशीपुरी को ले जाओ ॥ ३१ ॥

लब्धो ह्ययं सुतः ॥ २६ ॥ स्वसमीपे कथं मृत्युर्द्रष्टव्यो दुःखदोऽस्य तु ॥ काशीं प्रस्थापयामास मातुलेन समं विभुः ॥ ३० ॥ भ्रातरं प्रार्थयामास राजपत्नी यशस्विनी ॥ धृत्वा कार्पटिकं वेषं काशीं प्रति सुतं नय ॥३१॥ मृत्युञ्जयः प्रार्थितोऽस्ति पुत्रार्थं तु मया पुरा ॥ प्रेषयिष्यामि विश्वेशयात्रार्थं च जगत्पतेः ॥ ३२ ॥ तस्मान्नेयः सुतो मेऽद्य पालनीयश्च यत्नतः ॥ इति श्रुत्वा स्वसुर्वाक्यं स्वस्रीयेण समं ययौ ॥ ३३ ॥ दिनानि कतिचिद्गच्छन्नानन्दनगरं ययौ ॥ तत्र राजा वीरसेनो नाम्ना सर्वसमृद्धिमान् ॥ ३४ ॥ तत्कन्या मङ्गला-

मैंने पहिले पुत्र के लिये मृतुञ्जय (शङ्कर भगवान) की प्रार्थना की थी कि हे विश्वेश ! पुत्र के होने पर जगत्पति आपकी यात्रा के लिये पुत्र को भेजूँगी ॥३२॥ इसलिए इस समय पुत्र को ले जाओ और यत्नपूर्वक इसका पालन करना । अपने बहिन की बात सुनकर भानजा को साथ लेकर काशी को गया ॥३३॥ मार्ग में जाता हुआ कई दिनों के बाद आनन्द नगर को पहुँचा । वहाँ का राजा समस्त समृद्धि से सम्पन्न वीरसेन नाम का था ॥ ३४ ॥ और उस राजा की कन्या

समस्त लक्षणों से युक्त मङ्गलागौरी नाम की थी तथा मध्य अवस्था वाली, सुन्दरी रूप लावण्य से युक्त थी ।।३५।। वह कन्या अपने गुणों से समस्त उपमानों को तुच्छ करती हुई उदय को प्राप्त थी अर्थात् वह निरुपम थी । उस समय वह कन्या अपने नगर के पास सुन्दर बगीचा में सखियों के साथ क्रीडा (खेल) कर रही थी ।। ३६ ।। उसी समय राजपुत्र

गौरी सर्वलक्षणसंयुता ।। वयोमध्यगता रम्या रूपलावण्यशालिनी ।। ३५ ।। उपमानानि सर्वाणि तुच्छीकृत्योदयं गता ।। नगरोपवने रम्ये सखीभिः परिवारिता ।।३६।। ततस्तावपि सम्प्राप्तौ चिरायुर्मातुलश्च सः ।। विश्रान्तिं प्रापतुस्तत्र तासां दर्शनलालसौ ।। ३७ ।। क्रीडन्तीनां विनोदेन कुपिता तत्र काचन ।। उवाच राजतनयां सा रण्डेत्यतिदुर्वचः ।। ३८ ।। श्रुत्वा तदशुभं वाक्यमुवाच नृपनन्दिनी ।। अयोग्यं भाषसे त्वं किं मत्कुले नैव तद्विधा ।।३९।। प्रसादान्मङ्गलागौर्यास्तद्व्रतस्य प्रभावतः ।। मत्करादक्षता यस्य प्रपतिष्यन्ति मूर्धनि ।।४०।।

चिरायु और चिरायु का मामा ये दोनों वहाँ पहुँचे और उन कन्याओं को देखने की लालसा से विश्राम किया ।। ३७ ।। इतने में खेलती हुई उन कन्याओं में से कोई एक कन्या कुपित होकर राजतनया (राजपुत्री) को 'रण्डा' यह दुर्वचन कहती भई ।।३८।। राजपुत्री इस दुर्वचन को सुनकर बोली कि तू अयोग्य बात क्यों बोलती है मेरे कुल में ऐसी स्त्री नहीं है ।।३९।। मङ्गलागौरी के प्रसाद से और मङ्गलागौरी के व्रत प्रभाव से मेरे हाथ के अक्षत जिसके शिर पर गिरेंगे ।।४०।।

हे सखि ! उसके साथ विवाह होने पर वह अल्पायु होकर भी चिरायु हो जायगा । बाद समस्त कन्यायें अपने २ घर को चली गईं ॥ ४१ ॥ उसी दिन राजकन्या के विवाह का समय निश्चित था और बाल्हिकदेश के दृढ़धर्मा राजा के ॥४२॥ सुकेतु नामक पुत्र के लिये देना निश्चित हो चुकी थी परन्तु वह राजपुत्र सुकेतु मूर्ख कुरूप और बधिर था ॥४३॥ इसलिये

विवाहे स चिरायुः स्यादल्पायुरपि चेत्सखि ॥ ततः समस्तास्ताः कन्याः स्वं स्वं वेश्म ययुस्तदा ॥४१॥ तस्मिन्नेव दिने राजकन्यायाः पाणिपीडने ॥ राज्ञो बाह्लिकदेशस्य दृढवर्माभिधस्य वै ॥४२॥ सुकेतुनाम्ने पुत्राय दातुं सा निश्चिताऽभवत् ॥ स सुकेतुरविंद्यश्च कुरूपो बधिरस्तथा ॥ ४३ ॥ ततस्ते मन्त्रयामासुर्नेयोऽन्योऽद्य वरः परः ॥ अथ सिद्धे विवाहे च सुकेतुस्तत्र गच्छतु ॥ ४४ ॥ ततश्चिरायुषं गत्वा याचिरे मातुलं प्रति ॥ देयोऽस्मभ्यमयं बालः कार्यसिद्धिर्हि नो भवेत् ॥४५॥ परोपकारतुल्यो हि धर्मो नास्त्यपरो भुवि ॥ मातुलस्तद्वचः श्रुत्वा अन्तर्हृष्टमना अभूत् ॥ ४६ ॥ पूर्वं श्रुतं चोपवने कन्यावाक्यमनेन यत् ॥

वरपक्ष के लोगों ने मण्डप में दूसरे श्रेष्ठ वर को ले जाने का विचार किया और विवाह हो जाने पर बाद वहाँ सुकेतु जायगा ॥४४॥ यह निश्चय कर चिरायु के पास जाकर चिरायु के मामा से कहा कि यह बालक हमको दे दीजिये । आपके बालक के मिलने से हमारे कार्य की सिद्धि हो जायगी ॥४५॥ इस पृथ्वी पर परोपकार के समान दूसरा धर्म नहीं है । यह बात सुनकर चिरायु का मामा हृदय से प्रसन्न हो गया ॥ ४६ ॥ क्योंकि पहिले बगीचा में इसने कन्या के वचन को सुना था

फिर भी उन वरपक्षवालों से बोला कि आपलोग लड़का को कैसे मांगते हैं ? ॥४७॥ कार्यसाधन के लिये वस्त्र अलङ्कार आदि मांगा जाता है कहीं भी वर की याचना नहीं की जाती है फिर भी आपलोगों के गौरव से मैं देता हूँ ॥४८॥ बाद उन लोगों ने वहाँ चिरायु को ले जाकर विवाहकार्य को सिद्ध किया। जब सप्तपदी आदि कार्य के हो जाने पर रात्रि के

एकवारं तथाप्याह युष्माभिर्याच्यते कथम् ॥ ४७ ॥ वस्त्रालङ्करणादीनि याच्यं कार्यस्य साधने ॥ न वरो याच्यते क्वापि दीयते गौरवाद्धि वः ॥ ४८ ॥ विवाहं साधयामासुर्नीत्वा तत्र चिरायुषम् ॥ सप्तपद्यादिके जाते रात्रौ गौरीहरान्तिके ॥ ४९ ॥ सहासौ मङ्गलागौर्या सुप्तो हर्षसमन्वितः ॥ तदह्नि षोडशाब्दानि समाप्तानि चिरायुषः ॥ ५० ॥ निशीथे सर्परूपेण कालस्तत्र समीयिवान् ॥ तदनन्तरे भूपसुता जागृता दैवयोगतः ॥५१॥ सा ददर्श महासर्पं चकम्पे भयविह्वला ॥ धैर्यं कृत्वा तदा बाला पूजयामास सोरगम् ॥५२॥ उपचारैः षोडशभिर्दुग्धं पातुं ददौ बहु ॥ प्रार्थयामास तं सर्पं दीनवाण्या च तुष्टुवे ॥ ५३ ॥ ययाचे

समय गौरीशङ्कर के पास ॥ ४९ ॥ यह चिरायु बालक प्रसन्न मन से राजकन्या मङ्गलागौरी के साथ सो गया उस दिन चिरायु का सोलहवाँ वर्ष पूर्ण था ॥५०॥ अर्धरात्रि के समय सर्प के रूप में काल वहां पर आया इसी बीच में राजकन्या दैवयोग से जाग गई ॥५१॥ वह उस महासर्प को देखकर भय से विह्वल होकर कांपने लगी। बाद उस समय धैर्य को धारण कर वह राजकन्या सर्प की पूजा करती भई ॥५२॥ और षोडशोपचार से पूजन करके पीने के लिये बहुत सा दूध

दिया तथा प्रार्थना कर दीन वचन से उस सर्प की स्तुति करती भई ॥ ५३ ॥ और मङ्गलागौरी (राजकन्या) याचना करती भई कि मैं उत्तम व्रत को करूँगी 'मेरा पति इस कालसर्प से जीवित होवे और चिरंजीवी होवे ऐसा करो ॥ ५४ ॥ इसी समय वह सर्प कमण्डलु में घुस गया । बाद राजकन्या ने अपनी चोली से उस कमण्डलु का मुख बाँध दिया ॥ ५५ ॥

मङ्गलागौरी करिष्ये व्रतमुत्तमम् ॥ जीव्यान्मे पतिरेतस्माच्चिरं जीवेत्तथा कुरु ॥ ५४ ॥ एतस्मिन्नन्तरे सर्पः करके प्रविवेश ह ॥ कञ्चुक्या स्वीयया सा तु चक्रे तन्मुखबन्धनम् ॥ ५५ ॥ एतस्मिन्नन्तरे भर्ता अङ्गमोटनपूर्वकम् ॥ जागृतश्चाऽब्रवीद्भार्यां क्षुधा मां बाधते प्रिये ॥ ५६ ॥ मातुः सकाशं गत्वा सा आनयामास पायसम् ॥ लड्डुकादि च तद्दत्तं बुभुजे प्रीतमानसः ॥५७॥ हस्तक्षालनकाले तु तद्धस्तान्मुद्रिकाऽपतत् ॥ ताम्बूलं भक्षयित्वा तु प्रसुप्तः पुनरेव सः ॥ ५८ ॥ ततः सा करकं त्यक्तुमगच्छत्तु विधेर्गतिः ॥ हारकान्ति

इसके बाद इसका पति अङ्गों को ऐंठता हुआ जागकर उठ बैठा और स्त्री से बोला कि हे प्रिये ! मुझे क्षुधा सताय रही है ॥५६॥ बाद वह राजकन्या माता के पास जाकर पायस (खीर) लड्डू आदि ले आई और पति को दिया । तब चिरायु ने प्रसन्न मन से भोजन किया ॥ ५७ ॥ और हाथ धोने के समय उस चिरायु के हाथ से अंगूठी गिर गई । बाद वह पान खाकर पुनः सो गया ॥५८॥ तदनन्तर वह राजकन्या कमण्डलु को फेंकने के लिए गई परन्तु दैवगति से बाहर जानेपर

चमकती हुई हार की कान्ति को देखकर विस्मय करने लगी ॥५९॥ और उस घट (कमण्डलु) में हार को देखकर अपने गले में धारण कर लेती भई। जब कुछ रात्रि शेष रह गई तब चिरायु का मामा चिरायु को ले गया ॥ ६० ॥ चिरायु के चले जाने पर वरपक्ष के लोग वहाँ सुकेतु को ले गये। जब उस सुकेतु को मङ्गलागौरी ने देखा तो वह बोली कि यह मेरा

बहिर्दृष्ट्वा स्फुरन्तीं विस्मयं ययौ ॥ ५९ ॥ दृष्ट्वा घटस्थं तं हारं स्वकण्ठे च दधार सा ॥ किञ्चिन्निशावशेषे तु मातुलस्तं निनाय सः ॥ ६० ॥ ततस्ते वरपक्षीयाः सुकेतुं तत्र चानयन् ॥ दृष्ट्वा तं मङ्गलागौरी उवाचायं न मे पतिः ॥ ६१ ॥ तामूचुस्ते ततः सर्वे किमिदं भाषसे शुभे ॥ परिचायकमस्तीह किञ्चित्ते तद्वदस्व नः ॥६२॥ मङ्गलागौर्युवाच ॥ मे दत्तं येन रात्रौ च नवरत्नाङ्गुलीयकम् ॥ अस्याऽङ्गुलौ तन्निक्षिप्य प्रेक्षध्वं परिचायकम् ॥ ६३ ॥ पत्या दत्तोऽस्ति मे हारो रात्रौ तद्रत्नसञ्चयः ॥ कीदृशोऽनेन वाच्योऽसौ प्रतिवीरपरान्वितम् ॥६४॥ किञ्चाम्रसेचनं रात्रौ तत्पदं कुङ्कुमान्वितम् ॥ ऊरौ मे वर्तते तच्च सर्वे पश्यन्तु मा

पति नहीं है ॥६१॥ बाद सभी वरपक्षी कन्या से कहने लगे कि हे शुभे! यह तुम क्या कहती हो। यदि कोई परिचायक (पहिचान) हो तो हमलोगों से कहो ॥ ६२ ॥ मङ्गलागौरी बोली। जिसने रात्रि में नवरत्नों की बनी अंगूठी मुझे दी वह अंगूठी इसके अङ्गुली में डाल कर पहिचान देखें ॥ ६३ ॥ और रात्रि में पति ने मुझे हार दिया है उस हार के रत्नों की

सजावट कैसी है ? यह उसको कहै। यह तो कोई दूसरा ही है ॥६४॥ और रात्रि में आम्र सींचने के समय मेरे पति का
पैर केसर से युक्त मेरे जाँघ में लगा वर्तमान है उसको भी सब लोग देखें देरी न करें ॥६५॥ और रात्रि के समय बात
चीत क्या हुई ? भोजन वगैरह क्या किया ? उसको भी यह कहे यह स्वयं मेरा पति होवे ॥६६॥ इस प्रकार मङ्गला-

चिरम् ॥६५॥ किञ्च रात्रौ भाषणादि भक्षणादि च यत्कृतम् ॥ तदनेन च वक्तव्यं तदा
स्यान्मे पतिः स्वयम् ॥६६॥ एवं श्रुत्वा तु तद्वाक्यं साधु साध्विति चाब्रवीत् ॥ एकस्यापि
न योगोऽभूत्तदा सर्वैर्निषेधितः ॥६७॥ तदा ते वरपक्षीया जग्मुः सर्वे यथागतम् ॥ जनको
मङ्गलागौर्याः श्रुतकीर्तिः कुरूद्वहः ॥ ६८ ॥ अन्नपानादिकं सत्रं चकार सुमहामनाः ॥
वरपक्षस्य वृत्तान्तः श्रुतः कर्णोपकर्णतः ॥६९॥ स्वरूपस्य कुरूपत्वादानीतः कश्चनादृतः ॥
स्थापयामास सौधे तु कन्यां जवनिकावृताम् ॥ ७० ॥ एवं गते हायने तु यात्रां कृत्वा

गौरी के वचन को सुनकर सबों ने साधु (ठीक है २) की आवाज की। परन्तु सुकेतु के वतलाये हुये चिह्नों में से एक
का भी पहिचान नहीं मिला। तव सभी लोगों ने निषेध किया ॥६७॥ तव वरपक्ष के सभी लोग जैसे आये थे वैसे ही
लौट गये। कुरुकुल के राजा मङ्गलागौरी के पिता श्रुतकीर्ति ने ॥ ६८ ॥ प्रसन्न मन से अन्न जल का एक सत्र (यज्ञ)
किया और कानोंकान वरपक्ष का सब वृत्तान्त सुना ॥६९॥ कि स्वरूप के खराब होने के कारण किसीको आदर पूर्वक ले

आये थे। बाद राजा ने महल के बरामदा में चिक के अन्दर लड़की को बैठा दिया ॥७०॥ इस तरह एक वर्ष पूर्ण होने पर वह चिरायु अपने मामा के साथ ससुराल का वृत्तान्त देखने के लिये पुनः आया ॥७१॥ जब मङ्गलागौरी ने चिक के अन्दर से चिरायु को देखा तब वह लोकोत्तर आनन्द से युक्त हो गई और अपने माता पिता से जाकर बोली कि मेरे

समातुलः ॥ चिरायुः प्रययौ तत्र किं जातमवलोकितुम् ॥ ७१ ॥ तं सा जालान्तराद्दृष्ट्वा लोकोत्तरमुदान्विता ॥ पितरौ कथयामास मम भर्ता समागतः ॥७२॥ सुहृद्गणं समाहूय पूर्वोक्तं परिचायकम् ॥ दृष्ट्वा सर्वमपि ह्यस्मै ददौ कन्यां शुचिस्मिताम् ॥ ७३ ॥ शिष्टैः परिणयोत्साहं कारयामास भूपतिः ॥ वस्त्राण्याभरणादीनि सेनामश्वान्गजान्रथान् ॥७४॥ प्रस्थापयामास नृपो दत्त्वाऽन्यदपि भूरिशः ॥ पत्न्या सह चिरायुः स मातुलेन समन्वितः ॥७५॥ स्वपुरं सेनया सार्धं जगाम कुलनन्दनः ॥ श्रुत्वा जनमुखात्तस्य आगतं पितरा-

पति आगये हैं ॥ ७२ ॥ राजा ने सुहृद्गण को बुलाकर पहिले कहे हुए सब पहिचान को देखकर पवित्र मुसकान करने वाली कन्या को चिरायु के लिये दे दिया ॥७३॥ बाद राजा ने शिष्टलोगों के साथ विवाहोत्सव किया और वस्त्र आभरण आदि सेना अश्व, गज, रथ ॥ ७४ ॥ और भी बहुत सी वस्तु देकर विदा किया। तदनन्तर वह चिरायु अपनी स्त्री और मामा के साथ ॥७५॥ कुल के आनन्द को बढ़ाता हुआ सेना के साथ अपने पुर को गया। बाद चिरायु के माता पिता ने

लोगों के मुख से उसके आगमन को सुनकर ॥ ७६ ॥ विश्वास नहीं किया क्योंकि दैव (भाग्य) अन्यथा (विपरीत) कैसे हो सकता है ? । इसी बीच में वह चिरायु माता पिता के समीप आया ॥७७॥ स्नेह में मग्न चिरायु भक्ति से अपने माता पिता के चरणों में गिर गया अर्थात् प्रणाम किया। बाद माता पिता बालक का शिर सूँघकर परम आनन्द को प्राप्त

वुभौ ॥७६॥ विश्वासं लेभतुर्नैव स्यात्कथं दैवमन्यथा ॥ एतस्मिन्नन्तरे प्राप्तः पित्रोरन्तिकमेव सः ॥७७॥ पपात पादयोर्भक्त्या पित्रोः स्नेहपरिप्लुतः ॥ मूर्ध्न्यवघ्राय तं पुत्रं परमां मुदमापतुः ॥७८॥ स्नुषापि मङ्गलागौरी श्वशुरौ प्रणनाम सा ॥ अङ्के निवेश्य तां श्वश्रूः पप्रच्छोदन्तमञ्जसा ॥७९॥ स्नुषापि मङ्गलागौर्या व्रतमाहात्म्यमुत्तमम् ॥ कथयामास तत्सर्वं यथावृत्तं महामुने ॥८०॥ इत्येतत्कथितं तुभ्यं मङ्गलागौरिकाव्रतम् ॥ य एतच्छृणुयात्कश्चिद्यश्चापि परिकीर्तयेत ॥ ८१ ॥ मनोरथास्तस्य सर्वे सिद्ध्यन्त्यत्र न संशयः ॥ ८२ ॥

मये ॥ ७८ ॥ बाद पुत्रवधू मङ्गलागौरी ने भी सास श्वसुर को प्रणाम किया। सास ने पुत्रवधू को अपने गोद में बैठाकर सब वृत्तान्त पूछा ॥ ७९ ॥ हे महामुने अर्थात् सनत्कुमार जी ! पुत्रवधू ने मंगलागौरी का उत्तम व्रतमाहात्म्य कहा और जो कुछ हुआ था वह सब भी कहा ॥ ८० ॥ शिवजी सनत्कुमार जी से कहते हैं कि हे सनत्कुमार जी ! यह मङ्गलागौरी का व्रत तुमसे कहा। इसको जो कोई सुनेगा अथवा कीर्तन करेगा ॥८१॥ उसके सभी

मनोरथ सिद्ध होंगे इसमें सन्देह नहीं है ॥ ८२ ॥ सूत जी बोले कि हे शौनकादि ऋषिगण ! श्री धूर्जटि (शङ्कर) भगवान् नें सनत्कुमार जी से इस प्रकार व्रत को कहा और सनत्कुमार जी भी कार्य को सिद्ध करनेवाले व्रत को सुनकर

सूत उवाच—सनत्कुमारमित्येवं कथयामास धूर्जटिः ॥ स चानन्दं परं लेभे श्रुत्वा कार्यकरं व्रतम् ॥८३॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये मङ्गलागौरी-व्रतकथनं नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

परम आनन्द को प्राप्त किया ॥८३॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये व्या. आ. 'विद्यारत्न' पं० माधवप्रसादव्यासकृतायां भाषाटीकायां मङ्गलागौरीव्रतकथनं नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥



ईश्वर सनत्कुमार जी से बोले कि हे सनत्कुमार जी ! अब हम आपसे पापनाशक बुध और बृहस्पति के व्रत को कहेंगे जिस व्रत को श्रद्धा से करके मनुष्य उत्तम सिद्धि को पाता है ॥१॥ जब ब्रह्माजी ने चन्द्रमा को ब्राह्मणों के राज्यासन पर अभिषिक्त किया उसके बाद किसी समय चन्द्रमा ने बृहस्पति की तारा नाम की स्त्री को देखा ॥२॥ रूप और यौवनसम्पत्ति

ईश्वर उवाच—बुधगुर्वोरथो वक्ष्ये व्रतं पापप्रणाशनम् ॥ यत्कृत्वा श्रद्धया मर्त्यः परां सिद्धिमवाप्नुयात् ॥ १ ॥ प्रजापतिः शीतरश्मिं द्विजराज्येऽभ्यषेचयत् ॥ स कदाचिद्गुरोर्भार्यां तारानाम्नीं ददर्श ह ॥ २ ॥ रूपयौवनसम्पन्नां लावण्यमदगर्विताम् ॥ मोहितो रूपसम्पत्त्या कामबाणवशं गतः ॥ ३ ॥ स्वगृहे स्थापयित्वा तु बलात्स बुभुजे च ताम् ॥ एवं बहुतिथे काले गते पुत्रो बभूव ह ॥ ४ ॥ बुधो विद्वान्रूपशाली सर्वलक्षणसंयुतः ॥ अन्वेषयन्गुरुः पत्नीं ज्ञातवाञ्शशिसद्मनि ॥ ५ ॥ ययाचे देहि मे भार्यां त्वं कथं गुरुतल्पगः ॥

से युक्त तथा लावण्य (सौन्दर्य) मद से गर्वित गुरु की स्त्री को देखकर उसके रूपसम्पत्ति से मोहित होकर कामबाण के वश में होकर ॥३॥ गुरुपत्नी को अपने घर में रखकर बलात् उसका उपभोग किया । इस तरह बहुत समय के बीतने पर उसको पुत्र हुआ ॥४॥ वह पुत्र विद्वान् रूपशाली और सब लक्षणों से सम्पन्न बुध नाम से प्रसिद्ध हुआ । इधर बृहस्पति ने अपनी स्त्री का अन्वेषण (खोज) कर जब चन्द्रमा के घर में पाया ॥५॥ तब चन्द्रमा से कहा कि हमारी स्त्री को तुम

दे दो । तुमने गुरुपत्नी के साथ कैसे गमन किया ? गुरुपत्नी के साथ किये पाप से तुम्हारा कैसे उद्धार होगा ? ॥६॥ इस महापाप के सम्बन्ध में कैसे तुम्हारी बुद्धि प्रवृत्त हुई ? इस मेरी प्रिया और तुम्हारी गुरुपत्नीको गुप्तरीति से मुझे दे दो ॥७॥ और एकान्त में प्रायश्चित्त को करके पापरहित हो जाओ । ऐसा न करने पर इन्द्र की सभा में तुम्हारे इस पाप को मैं

गुरुतल्पकृतात्पापान्निष्कृतिस्ते कथं भवेत् ॥ ६ ॥ महापातकसंयोगे कथं ते बुद्धिराहृता ॥
गुप्तमेव प्रयच्छेमां गुरुभार्यां मम प्रियाम् ॥ ७ ॥ प्रायश्चित्तं च रहसि कृत्वा निष्कल्मषो
भव ॥ नोचेदिन्द्रसमीपे ते आगः संकथयाम्यहम् ॥ ८ ॥ इत्येवं बहुधोक्तोऽपि न ददौ तां
कलङ्कितः ॥ तदा देवसभां गत्वा कथयामास गीष्पतिः ॥ ९ ॥ चन्द्रेण मे ह्यपहृता भार्या
तां न ददाति सः ॥ देवराजोऽसि शक्र त्वं दापनीया त्वयाज्ञया ॥१०॥ नचेत्त्वां तत्कृतं
पापं संक्रमिष्यत्यसंशयम् ॥ राजा राष्ट्रकृतं पापं भुङ्क्ते शास्त्रविनिर्णयात् ॥११॥ दुर्बलस्य

कहूँगा ॥८॥ इस तरह बृहस्पति के बहुत कहने पर भी कलङ्कित चन्द्रमा ने तारा को नहीं दिया । तब देवसभा में जाकर बृहस्पति ने इस बात को कहा कि ॥९॥ चन्द्रमा ने मेरी स्त्री को चुरा लिया है और वह चन्द्रमा मांगने पर स्त्री को नहीं देता है । हे इन्द्र ! आप देवताओं के राजा हो इसलिये आप अपनी आज्ञा से मेरी स्त्री दिला देवें ॥१०॥ नहीं तो चन्द्रमा का किया पाप आपको लगेगा इसमें सन्देह नहीं है क्योंकि शास्त्र के निर्णय से राष्ट्र का किया पाप राजा को भोगना पड़ता

है ॥११॥ और पुराण में कहा है कि दुर्बल का बल राजा होता है। बृहस्पति की इस बात को सुनकर इन्द्र ने चन्द्रमा को बुलाया ॥ १२ ॥ और क्रोध से हुक्म दिया कि हे चन्द्रमा ! बृहस्पति की स्त्री को दे दो। दूसरे की स्त्री के साथ गमन केवल पाप ही कहा गया है ॥ १३ ॥ और गुरु पत्नी के साथ गमन महापाप नाम से कहा जाता है इसलिये हे चन्द्रमा !

बलं राजा पुराणे त्विति भण्यते ॥ इति श्रुत्वा गुरोर्वाक्यं चन्द्रमाहूय वासवः ॥१२॥ आज्ञा-
पयामास रुषा देहि भार्यां गुरोर्विधो ॥ अन्यदाराभिगमनं न महापातकं भवेत ॥ १३ ॥
गुरुदाराभिगमनं महापातकसंज्ञितम् ॥ तस्माच्चन्द्र गुरोर्भार्यां देहि त्वमविचारयन् ॥ १४ ॥
देवेन्द्रवचनं श्रुत्वा निशापतिरथाब्रवीत् ॥ दास्ये त्वदाज्ञया भार्यां पुत्रं नैव ददाम्यहम् ॥१५॥
मत्सकाशात्सुतो जातो मम वैभवयुग्यतः ॥ गीष्पतिस्त्वाह मत्तोऽभूत्ततः संशयिताः सुराः
॥१६॥ ततस्ते निर्णयं चक्रुर्माता जानाति चाङ्गजम् ॥ पप्रच्छुस्ते तदा तारां केनायं गर्भं

तुम बृहस्पति की स्त्री को बिना विचार के दे दो ॥ १४ ॥ इन्द्र के वचन को सुनकर चन्द्रमा ने कहा कि आपकी आज्ञा से स्त्री को दे देता हूँ परन्तु पुत्र को नहीं दूँगा ॥ १५ ॥ क्योंकि यह मुझ से पैदा है और मेरे वैभव से युक्त है। इस पर बृहस्पति ने कहा कि यह पुत्र मुझ से पैदा है। तब देवता लोग संशय करने लगे ॥ १६ ॥ और देवताओं ने यह निर्णय किया कि पुत्र किस के अङ्ग से पैदा हुआ है इस बात को माता जानती है। बाद देवताओं ने बृहस्पति की स्त्री तारा से पूछा

कि किसने गर्भाधान किया ॥१७॥ हे कल्याणी ! सत्य कहो तुम मिथ्या वचन कहने योग्य नहीं हो, तब लज्जा से युक्त तारा ने कहा कि चन्द्रमा का औरस पुत्र है ॥१८॥ और बृहस्पति का क्षेत्रज पुत्र है अब आपलोग जिसको योग्य समझें उसके लिये दीजिये । तारा के वचन को सुनकर देवताओं ने शास्त्रानुकूल विचार कर उस बुध नामक बालक को चन्द्रमा

आहितः ॥ १७ ॥ सत्यं वदस्व कल्याणि न मिथ्या वक्तुमर्हसि ॥ तदा लज्जान्विता तारा औरसोऽयं विधोः सुतः ॥१८॥ गीष्पतेः क्षेत्रजश्चातो योग्यः स्यात्तस्य दीयताम् ॥ शास्त्रतस्ते विचार्याथ ददुश्चन्द्राय तं बुधम् ॥ १६ ॥ तदा खिन्नं गुरुं दृष्ट्वा ददौ देवो वरं तयोः ॥ गच्छस्व त्वं चन्द्र गृहे तवाप्यस्ति सुतो ह्ययम् ॥२०॥ चन्द्रस्य गीष्पतेश्चायं ग्रहत्वं यात्वसौ सुतः॥ अन्यच्चापि सुराचार्यं गृहाणेमं वरं शुभम् ॥२१॥ यः करिष्यति मेधावी मिलित्वा युवयोर्व्रतम् ॥ तस्य स्यात्सकला सिद्धिः सत्यं सत्यं न संशयः ॥ २२ ॥ श्रावणे मासि सम्प्राप्ते

के लिये दे दिया ॥ १६ ॥ तब बृहस्पति को खिन्न देखकर देवताओं ने दोनों को वर दिया और चन्द्रमा से कहा कि हे चन्द्रमा ! तुम घर को जाओ । यह तुम्हारा भी पुत्र है ॥२०॥ यह चन्द्रमा और बृहस्पति का पुत्र ग्रहत्व को प्राप्त हो । हे सुराचार्य ! और भी यह शुभ वर को लीजिये ॥२१॥ जो बुद्धिमान् तुम दोनों के अर्थात् बुध और बृहस्पति के व्रत को एक साथ करेगा उसको समस्त सिद्धियाँ होंगी यह सत्य है २ इसमें संशय नहीं है ॥२२॥ श्री शङ्कर भगवान् को अति-

प्रिय इस श्रावणमास के आने पर बुध और बृहस्पतिवार के दिन जो पूजन करेंगे ॥२३॥ और नैवेद्य में दही तथा भात को देवे और तुम दोनों की मूर्ति को लिखे। स्थान के भेद से फल में भेद होता है ॥२४॥ यदि हिंडोला पर मूर्ति को लिखकर पूजन करता है तो वह दीर्घायु और सर्वगुणसम्पन्न पुत्र को पाता है ॥२५॥ और जो मनुष्य कोशागार (खजाना)

शङ्करस्य महाप्रिये ॥ बुधगुर्वोर्वासरयोर्ये करिष्यन्ति पूजनम् ॥२३॥ नैवेद्यं दधिभक्तेन साधने मूलकं भवेत् ॥ युवयोर्मूर्तिमालिख्य स्थानभेदात्फलं लभेत् ॥ २४ ॥ बालां दोलोपरिस्थाने लिखित्वा पूजयेद्यदि ॥ स पुत्रं लभते दीर्घायुषं सर्वगुणान्वितम् ॥२५॥ कोशागारे लिखित्वा तु पूजयेद्यदि मानवः ॥ तस्य कोशा विवर्धन्ते क्षीयन्ते न कदाचन ॥२६॥ पाकागारे पाकवृद्धिर्देवागारे तु तत्कृपा ॥ शय्यागारे पूजने तु स्त्रीवियोगो न कर्हिचित् ॥२७॥ धान्यागारे धान्यवृद्धिरेवं तत्तत्फलं लभेत् ॥ सप्तवर्षाणि कृत्वैवं तत उद्यापनं चरेत् ॥२८॥ अधिवास्याह्नि

में मूर्ति को लिखकर यदि पूजन करेगा उसके खजाना की वृद्धि होगी और कभी नष्ट नहीं होगा ॥२६॥ और पाकशाला में लिखकर पूजन से पाक की वृद्धि तथा देवागार में लिखकर पूजन से देवता की कृपा होती है और शयनगृह में लिखकर पूजन करने से स्त्री का कभी वियोग नहीं होता ॥२७॥ धान्यगृह में पूजन से धान्य की वृद्धि होती है। इस प्रकार तत्तस्थानभेद से फलभेद होता है। इस व्रत को सात वर्ष तक करके उद्यापन करे ॥२८॥ उद्यापन के पूर्वदिन अधिवासन

करके रात्रि में जागरण करे ओर सुवर्ण की प्रतिमा बनाकर यथाविधि पूजन करे ॥ २९ ॥ षोडशोपचार से पूजन करके हवन को करे। तिल घृत और खीर की आहुति देवे ॥ ३० ॥ अपामार्ग (चिचिड़ा) अश्वत्थ (पीपर) की समिधा से हवन कर पूर्णाहुति हवन करे और मामा मानजा को अच्छी तरह भोजन करावे ॥ ३१ ॥ और ब्राह्मणों को भी भोजन

पूर्वस्मिन्रात्रौ जागरणं चरेत् ॥ सुवर्णप्रतिमां कृत्वा पूजयित्वा यथाविधि ॥२९॥ उपचारैः षोडशभिस्ततो होमं समाचरेत् ॥ तिलैराज्येन चरुणा तथैव च समिद्धजैः ॥ ३० ॥ अपामार्गाश्वत्थमयैस्ततः पूर्णाहुतिं चरेत् ॥ स्वस्रीयमातुलौ चैव भोजनीयौ प्रयत्नतः ॥ ३१ ॥ ब्राह्मणान्भोजयेदन्यान्भुञ्जीत स्वयमेव च ॥ एवं कृते सप्तवर्षं सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥३२॥ विद्याकामनया कुर्याद्वेदशास्त्रार्थविद्भवेत् ॥ बुधस्तु बुधतां दद्याद्गुरुस्तु गुरुतां तथा ॥३३॥ सनत्कुमार उवाच—भगवन्यत्त्वया प्रोक्तं भोज्यौ स्वस्रीयमातुलौ ॥ एतन्निमित्तं कथय यदि वक्तुं क्षमं भवेत् ॥ ३४ ॥ ईश्वर उवाच—पुरा कौचिद्द्विजन्मानौ दीनौ स्वस्रीयमातुलौ ॥

करावे, बाद स्वयं भोजन करे। इस तरह सात वर्ष तक व्रत करने पर व्रतकर्ता समस्त कामना को प्राप्त करता है ॥३२॥ विद्या की कामना से व्रत को करता है तो वेद और शास्त्रों के अर्थ का वेत्ता होता है। बुध प्रसन्न होकर ज्ञान को और गुरु गुरुत्व को देते हैं ॥३३॥ सनत्कुमार जी श्रीशङ्कर भगवान् से बोले। हे भगवन्! जो आपने मामा और भानजा को भोजन

कराने को कहा सो आप इस विषय में कहना उचित समझते हों तो इसका कारण क्या है उसको आप कहिये ॥ ३४ ॥
ईश्वर सनत्कुमार जी से बोले कि हे सनत्कुमार जी ! प्रथम किसी समय दो ब्राह्मण हुये। वे दोनों दीन और परस्पर मामा
और भानजा थे तथा दोनों दरिद्र थे भोजन के लिए पर्यटन को करते थे इस तरह दोनोंने बहुत श्रम किया ॥३५॥ किसी
रमणीय नगर में दोनों धान्य की याचना के लिए गये तब उन दोनों ने प्रत्येक गृह में श्रावण मास में उस व्रतको देखा

दरिद्रौ पर्यटन्तौ तावुदरार्थं कृतश्रमौ ॥३५॥ कस्मिंश्चिन्नगरे रम्ये गतौ धान्यं प्रयाचितुम् ॥
गृहे गृहे पश्यतां तौ श्रावणे मासि तद्व्रतम् ॥३६॥ तच्चद्वारे व्रतं तत्तद् बुधगुर्वोर्न कुत्रचित् ॥
अन्योऽन्यं तौ तदा तत्र विचारं चक्रतुश्चिरात् ॥३७॥ वासराणां तु सर्वेषां व्रतं सर्वत्र दृश्यते ॥
बुधगुर्वोर्विना तस्मादावाभ्यां तद्व्रतं शुभम् ॥३८॥ अनुच्छिष्टं यतश्चास्ति तस्मात्कर्तव्यमा-
दरात् ॥ विध्यज्ञानात्परं तस्य संशयं प्रापतुः पुनः ॥ ३९ ॥ तावत्तस्यां निशायां तु स्वप्नोऽ-

॥३६॥ प्रत्येक वार को तत्तत् व्रत को करते देखा परन्तु बुध और गुरुवार का कहीं व्रत नहीं देखा तब उस समय उन
दोनों ने बहुत देर तक परस्पर विचार किया ॥३७॥ कि सर्वत्र समस्त वारों का व्रत दिखलाई देता है परन्तु बुध और
गुरु का व्रत कहीं भी नहीं देखने में आया इसलिए हम दोनों बुध गुरु के व्रत को करें ॥३८॥ क्योंकि इस व्रत को किसी
ने नहीं किया इसलिए यह अनुच्छिष्ट व्रत है इसको आदर पूर्वक करना चाहिए। परन्तु व्रत का विधान न मालूम होने से
दोनों पुनः सन्देह में पड़ गये ॥ ३९ ॥ तब तक उस रात्रि में विधान को बतलाने वाला उन दोनों को स्वप्न हुआ।

बाद स्वप्न में प्राप्त विधि से दोनों ने व्रत को किया और बहुत सम्पदा को प्राप्त किया ॥४०॥ तथा वह सम्पत्ति प्रतिदिन बढ़ती हुई सर्वत्र देखने में आई। इस तरह सात वर्ष तक व्रत को करके पुत्र पौत्र आदि से युक्त हो गये ॥४१॥ और बुध गुरु प्रत्यक्ष होकर उन दोनों को वर देते भये कि जैसे आप दोनों ने हम दोनों के व्रत का प्रचार किया ॥४२॥ इसलिये

भूद्विधिदर्शनः ॥ तथा तौ चक्रतुः पश्चात्परां सम्पदमापतुः ॥ ४० ॥ प्रत्यहं वृद्धिगा चाभूत् सम्पत्तिः सर्वगोचरा ॥ एवं कृत्वा सप्तवर्षं पुत्रपौत्रादिसंयुतौ ॥४१॥ साक्षाद्भूतौ बुधगुरू वरं च ददतुस्तयोः ॥ आवाभ्यामावयोर्यस्माद्व्रतमेतत्प्रवर्तितम् ॥ ४२ ॥ इति चारभ्य तस्माद्यः करिष्यति शुभं व्रतम् ॥ स्वस्रीयमातुलौ तेन भोजनीयौ प्रयत्नतः ॥४३॥ एतद्व्रतप्रभावेण सर्वसिद्धिः परा भवेत् ॥ अन्ते चास्मल्लोकवासो यावच्चन्द्रदिवाकरौ ॥४४॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये बुधगुरुव्रतकथनं नामाष्टमोऽध्यायः ॥८॥

आज से लेकर जो इस शुभ व्रत को करेगा वह अवश्य मामा और भानजा को भोजन करावेगा ॥४३॥ इस व्रत के प्रभाव से उसको श्रेष्ठ सब सिद्धि होगी और अन्त में चन्द्रमा सूर्य पर्यन्त हमारे लोक में रहने को स्थान मिलेगा ॥४४॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये व्या. आ. 'विद्यारत्न' पं. माधवप्रसादव्यासकृतायां भाषाटीकायां बुधगुरुव्रतकथनं नामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

ईश्वर सनत्कुमार जी से बोले कि हे सनत्कुमार जी ! अब इसके बाद शुक्रवार के कथानक को कहूँगा जिसको मनुष्य श्रद्धा से श्रवण कर समस्त सङ्कट से मुक्त हो जाता है ॥ १ ॥ इस विषय में पुरातन इस इतिहास को लोग कहते हैं। एक सुशील नाम का राजा पाण्ड्य वंश में हुआ ॥ २ ॥ जब उस राजा ने बहुत प्रयत्न करने पर भी पुत्र को नहीं

ईश्वर उवाच—अतः परं प्रवक्ष्यामि शुक्रवारकथानकम् ॥ यच्छ्रुत्वा श्रद्धया मर्त्यो मुच्यते सर्वसङ्कटात् ॥ १ ॥ अत्रैवोदाहरन्तीममितिहासं पुरातनम् ॥ सुशीलो नाम राजा-सीत्पाण्ड्यवंशसमुद्भवः ॥ २ ॥ बहुप्रयत्नशीलोऽपि अपत्यं नैव चासवान् ॥ तस्य भार्या सुकेशीति नाम्ना सर्वगुणान्विता ॥ ३ ॥ अपत्यं न यदा लेभे महाचिन्तामवाप सा ॥ स्त्रीस्वभावाच्चदा वस्त्रखण्डानि प्रतिमासिके ॥४॥ बद्ध्वोदरं मद्दचक्रे महासाहसमानसा ॥ अन्वेषयद्गर्भिणीं सा स्वप्रसूत्यनुसारिणीम् ॥ ५ ॥ भाविना दैवयोगेन गृहिणीं तत्पुरोधसः ॥ गर्भिण्यासीत्तदा राज्ञः पत्नी कपटकारिणी॥६॥ प्रसूतिकारिणीं कांचित्तत्कार्ये सा न्ययोजयत्॥

पाया तब उस राजा की स्त्री जो सुकेशी नाम की सर्व गुण से सम्पन्न थी ॥३॥ वह जब पुत्र नहीं हुआ तब उसे बड़ी चिन्ता हुई और वह स्त्रीजाति के स्वभाव से प्रत्येक मास में वस्त्र के टुकड़ों को ॥ ४ ॥ अपने पेट में बांधकर पेट को बढ़ाया करती थी इस प्रकार बड़ी साहस वाली उस सुकेशी ने अपने प्रसूति के अनुसार गर्भिणी को खोजती थी ॥ ५ ॥

भावी दैवयोग से उसने पुरोहित की स्त्री को देखा वह उस समय गर्भिणी थी कपट करने वाली राजा की स्त्री ने ॥६॥ प्रसूतिकाल में दाई के काम को करने वाली किसी स्त्री को इस कार्य के लिये नियुक्त किया और एकान्त में उस सूतिका को बहुत-सा धन दिया और मैंने गर्भका अनुकरण किया है इत्यादि सब बातें कहीं ॥७॥ इधर राजा ने रानी को गर्भवती जानकर पुंसवन संस्कार और सीमन्तोन्नयन काल (आठवे मास) में सीमन्त संस्कार बड़ी प्रसन्नता के साथ किया ॥८॥

दत्त्वा बहुधनं तस्यै सूतिकायै रहोगता ॥ ७ ॥ राजा चक्रे पुंसवनं तथैवानवलोभनम् ॥
सीमन्तोन्नयने काले महाहर्षसमन्वितः ॥८॥ तस्याः प्रसूतिसमयं श्रुत्वा सापि तथाकरोत् ॥
आद्यगर्भवती यस्मात्सा पुरोधः कुटुम्बिनी ॥९॥ अज्ञाप्रसूतिकाकृत्ये सूतिकावचने स्थिता ॥
तां सूतिकां वञ्चयन्ती चक्रे तन्नेत्रबन्धनम् ॥१०॥ प्रेषयामास तं पुत्रं सा राजमहिषी प्रति ॥
कस्यचिद्धस्ततः शीघ्रमज्ञातमपि केनचित् ॥ ११ ॥ राज्ञी गृहीत्वा तं पुत्रं प्रसूतास्मीत्यघो-

पुरोहित स्त्री के प्रसूति का समय समीप आया सुनकर रानी ने भी उसी तरह अनुकरण किया कि बाप रे, माई, अरे प्राण गयल, अब ऐसन न करब, इत्यादि कहने लगी। और पुरोहित की स्त्री गर्भवती हुई थी ॥९॥ प्रसूति के विषय को नहीं जानती थी। इसलिए दाई के वचन का पालन करती थी दाई ने पुरोहित की स्त्री को ठगने के लिए उसके नेत्र को बाँध दिया ॥ १० ॥ और उत्पन्न हुए पुत्र को राजमहिषी के पास किसी के हाथ भेज दिया। इस तरह पुत्र का राजमहिषी के पास

पहुँचना किसी ने नहीं जाना॥ ११ ॥ इधर रानी ने पुत्र को लेकर मुझे पुत्र हुआ है इस बात को सर्वत्र खबर कर दी। सूतिका (दाई) ने पुरोहित स्त्री के नेत्रबन्धन को खोल दिया ॥ १२ ॥ और अपने साथ एक मांस का पिण्ड ले आई थी उस मांसपिण्ड को पुरोहित स्त्री को अच्छी तरह से दिखलाया और आश्चर्य तथा खेद को भी स्वयं प्रसूतिका के आगे करने लगी ॥ १३ ॥ कि यह क्या अरिष्ट हुआ है इसकी शान्ति पति से कराना। सन्तति नहीं हुई, न सही तुम अपने भाग्य

षयत् ॥ पुरोधःस्त्रीनेत्रबन्धं मोचयामास सूतिका ॥१२॥ सहानीतं मांसपिण्डं तस्यै प्रादर्श-
यच्च सा॥ विस्मयं चैव खेदं च स्वयं चक्रे तदग्रतः ॥१३॥ किमरिष्टमिदं जातं पत्या कार्यं
च शान्तिकम् ॥ सन्ततिर्नास्ति चेन्मास्तु स्वदिष्ट्या जीवितासि भोः ॥१४॥ परं संशयिता
सासीत्प्रसवस्पर्शचिन्तनात् ॥ १५ ॥ ईश्वर उवाच—राजा श्रुत्वा पुत्रजन्म जातकर्माद्य-
कारयत् ॥ गजानश्वान्रथांश्चैव ब्राह्मणेभ्यो ददौ नृपः ॥१६॥ बद्धान्कारागृहे सर्वान्मोचया-
मास हर्षितः॥ सूतकान्ते नामकर्मसंस्कारान्सर्वतोऽकरोत् ॥ चक्रे प्रियव्रत इति नाम पुत्रस्य

से जीवित रहो ॥१४॥ परन्तु उस पुरोहित स्त्री को इस प्रसव के स्पर्श से बड़ी चिन्ता हुई अर्थात् उसको मांसपिण्ड का होना सम्भव नहीं जान पड़ा, इसने छल किया या क्या हुआ। इस तरह सन्दिग्ध सी हो गई॥१५॥ ईश्वर सनत्कुमार जी से बोले—जब राजा ने पुत्र का जन्म सुना तब जातकर्म आदि सस्कार को किया और गज अश्व रथ आदि ब्राह्मणों को दानकर दिया ॥१६॥ कारागृह में जो कैदी बँधे थे उनको प्रसन्नता से छोड़ दिया और सूतक के अन्त में नामकरणादि संस्कारों

को किया तथा राजा ने उस जातपुत्र का प्रियव्रत नाम रक्खा ॥१७॥ श्रावणमास के आने पर पुरोहित की स्त्री ने शुक्रवार के दिन जीवन्तिका का भक्ति से पूजन किया ॥ १८ ॥ भित्ति में बहुत से बालकों के साथ जीवन्तिका की मूर्ति को लिखकर पुष्पमाला से पूजन कर धूप दीप को जलाया ॥ १९ ॥ गेहूँ के पिसान का दीपक बनाकर उसमें दीपक बालती

भूमिपः ॥१७॥ श्रावणे मासि सम्प्राप्ते पुरोधोदयिता सती ॥ जीवन्तिकां शुक्रवारे पूजयामास भक्तितः ॥ १८ ॥ कुड्ये विलिख्य तन्मूर्तिं बहुबालसमन्विताम् ॥ पुष्पमालिकया पूज्य पञ्चदीपैरदीपयत् ॥ १९ ॥ गोधूमपिष्टसम्भूतैस्तानभक्षयत स्वयम् ॥ अक्षतांश्चैव चिक्षेप यत्र मे बालको भवेत् ॥ २० ॥ तत्र त्वया रक्षणीयो जीवन्ति करुणार्णवे ॥ इति प्रार्थ्य कथां श्रुत्वा नमश्चक्रे यथाविधि ॥२१॥ जीवन्तिकाप्रसादेन दीर्घायुर्बालकोऽभवत् ॥ ररक्ष तमहोरात्रं देवी तन्मातृगौरवात् ॥ २२ ॥ एवं काले गते राजा कालधर्ममुपेयिवान् ॥ पितृ-

हुई और स्वयं भी गोधूमचूर्ण का दीपक घी में पकाकर भोजन किया ॥ २० ॥ और अक्षत को फेंका कि जहाँ मेरा बालक हो हे दया के समुद्र ! हे जीवन्ति ! वहां तुम उसकी रक्षा करना । इस तरह प्रार्थना कर कथा को सुनकर यथाविधि नमस्कार को किया ॥ २१ ॥ जीवन्तिका के प्रसाद से बालक दीर्घायु होगया, उस दिन से जीवन्तिका देवी उस बालक की माता के गौरव से दिन रात रक्षा करने लगी ॥ २२ ॥ इस प्रकार कुछ समय के बाद प्रियव्रत का पिता

राजा मर गया बाद पितृभक्त प्रियव्रत ने पिता की पारलौकिक क्रिया को किया ॥ २३ ॥ तदनन्तर मन्त्री पुरोहितों ने प्रियव्रत को राज्यासन पर बैठाया । प्रियव्रत ने प्रजा का पालन कर कुछ समय तक राज्य करके ॥२४॥ राज्य का भार वृद्ध मन्त्रियों को देकर पिता के ऋण से मुक्त होने के लिये भक्ति से गया जाने की तैयारी की ॥ २५ ॥ प्रियव्रत ने

भक्तोऽथ तत्पुत्रश्चक्रे तत्साम्परायिकम् ॥२३॥ प्रियव्रतोऽभिषिक्तोऽभूद्राज्ये मन्त्रिपुरोहितैः ॥ पालयित्वा प्रजा राज्यं भुक्त्वा स कतिचित्समाः ॥२४॥ पित्रर्णस्य विमोक्षाय गयां गन्तुं प्रचक्रमे ॥ राज्यभारममात्येषु स्थाप्य वृद्धेषु भक्तितः ॥२५॥ राजभावं परित्यज्य वेषं कार्पटिकं दधे ॥ मार्गमध्ये क्वचित्पुर्यां कस्यचिद्गृहमेधिनः ॥२६॥ चक्रे वासं गृहे तस्य प्रसूता गृहिणी त्वभूत् ॥ पुरा षष्ठ्याः पञ्चमेऽह्नि तत्पुत्राः पञ्च मारिताः ॥२७॥ तदापि पञ्चमदिनमासीत्तत्र नृपो गतः ॥ रात्रौ सुप्ते नृपे षष्ठी बालं नेतुं समागता ॥२८॥ जीवन्त्या वारिता सा तु नृपमुल्लंघ्य मा व्रज ॥ षष्ठी निषेधाज्जीवन्त्या सा जगाम यथागता ॥२९॥ जीवितं पञ्चमदिने

राजवेष का त्यागकर अपना कार्पटिक का वेष बनाया और यात्रा की । मार्ग में किसी पुरी में किसी गृहस्थ के घर में ॥२६॥ वास किया उस दिन उस गृहस्थ की स्त्री को पुत्र हुआ । इसके पहिले उसके पॉच पुत्रों को पांचवे दिन षष्ठी देवी ने मारडाला था ॥ २७ ॥ इस पुत्र के होने पर पांचवें दिन राजा वहाँ गया था । जब रात्रि में राजा सोगया तब षष्ठी देवी बालक को लेने को गई ॥२८॥ षष्ठी देवी को देखकर (जीवन्तिका ने कहा कि हे षष्ठी देवी ! इस राजा को

लाँघकर मत जाओ, इस प्रकार जीवन्तिका के मना करने पर षष्ठी देवी जैसे आई वैसे ही खाली लौट गई ॥२६॥ और उस गृहस्थ ने पाँचवें दिन बालक को जीवित पाकर तथा बालक के जीवन का कारण राजा को समझकर राजा से प्रार्थना की ॥३०॥ कि हे राजन् ! आज के दिन मेरे गृह में आपका वास होवे, क्योंकि हे प्रभो आपके प्रसाद से यह मेरा छठा

बालं लेभे गृहाधिपः ॥ एतत्प्रभावः प्रायोऽयं प्रार्थयामास तं नृपम् ॥ ३० ॥ राजन्नद्यतने चाह्नि तव वासोऽस्तु मे गृहे ॥ तव प्रसादान्मे बालः षष्ठोऽयं जीवितः प्रभो ॥ ३१ ॥ एवं सम्प्रार्थितस्तेन उवाच करुणानिधिः॥ ततो गतो गयां राजा प्रवृत्तः पिण्डपातने ॥३२॥ विष्णुपादे तत्र किञ्चिद्दृत्वाश्चर्यंमभूत्तदा ॥ पिण्डस्य ग्रहणार्थं हि निःसृतं तु करद्वयम् ॥ ३३ ॥ परं विस्मयमापन्नः संशयं प्राप भूपतिः ॥ ब्राह्मणानुमतः पश्चात् पिण्डं विष्णुपदे ददौ ॥३४॥ पप्रच्छ ब्राह्मणं कञ्चिज्ज्ञानिनं सत्यवादिनम् ॥ स चाह ब्राह्मणस्तस्मै पितृद्ध-

बालक जीवित हुआ ॥ ३१ ॥ इस तरह गृहस्थ के प्रार्थना करने पर दयानिधि प्रियव्रत ने वास किया । बाद गया को जाकर पिण्ड देने को तत्पर हुआ ॥३२॥ तब वहाँ विष्णुपद पर पिण्ड देने के समय आश्चर्य हुआ कि पिण्ड को लेने के लिए वेदी से दो हाथ निकले ॥ ३३ । यह देखकर राजा अत्यन्त विस्मय और सन्देह को करने लगा कि क्या करना चाहिए, बाद ब्राह्मण की आज्ञा से राजा ने विष्णुपद पर पिण्ड को दिया ॥३४॥ और किसी ज्ञानी सत्यवादी ब्राह्मण से

पूछा कि ऐसा क्यों हुआ उस राजा के पूछने पर ब्राह्मण ने कहा कि हे राजन् ! ये दोनों पिता के हाथ हैं ॥३५॥ ऐसा क्यों हुआ इसके सम्बन्ध में घर जाकर माता से पूछिये, इस विषय में माता कहेगी। तदनन्तर राजा चिन्तित और दुखी होकर हृदय में नाना प्रकार के विचार को करने लगा ॥३६॥ और यात्रा को पूराकर जहाँ बालक राजा के जाने से जीवित हुआ था वहाँ गया उस दिन भी उस गृहस्थ के यहाँ पुत्रजन्म का पाँचवाँ दिन था और वही स्त्री प्रसूता थी ॥३७॥ इस

यकराविमौ ॥३५॥ किमिदं तद्गृहे गत्वा मात्रे पृच्छ वदिष्यति ॥ ततश्चिन्तातुरो दुःखी हृदि नाना विचारयत् ॥ ३६ ॥ यात्रां कृत्वा तत्र यातो यत्राऽसौ जीवितः शिशुः ॥ तदापि पञ्चमदिनमासीत्सैव प्रसूतिका ॥ ३७ ॥ द्वितीयोऽप्यभवत्पुत्रो रात्रौ षष्ठी समाययौ ॥ पुनश्च जीवन्तिकया निषिद्धा साब्रवीच्च ताम् ॥ ३८ ॥ एतस्यावश्यकं किं ते एतन्माता च किं व्रतम् ॥ क्रियते हि यतस्त्वं च एनं रक्षस्यहर्निशम् ॥ ३९ ॥ षष्ठीवाक्यमिति श्रुत्वा जीवन्ती प्राह सुस्मिता ॥ तन्निमित्तं निशि द्रष्टुं जाग्रदासीन्नृपः स्वपन्

द्वितीय पुत्र के होने पर रात्रि के समय षष्ठी देवी बालक को लेने आई। जब जीवन्तिका ने षष्ठी देवी को फिर मना किया तब षष्ठी देवी जीवन्तिका से बोली ॥३८॥ कि हे जीवन्तिके ! इस राजकुमार की तुम्हें क्यों जरूरत रहा करती है? और इसकी माता कौन-सा व्रत करती है ? जिससे तुम दिन-रात इसकी रक्षा करती है ॥ ३९ ॥ षष्ठी देवी के इस वचन को सुनकर जीवन्तिका मुस्कराती हुई बोली। इधर राजा इस कारण को देखने के लिए जाग रहा था और सोने-का झूठा

नकल किए था ॥ ४० ॥ उस समय राजा ने उन दोनों के सम्पूर्ण बात-चीत को सुना । हे षष्ठी देवि ! इसकी माता श्रावणमास के शुक्रवार के दिन मेरा पूजन ॥ ४१ ॥ और व्रत के समस्त नियम को करती है उस नियम को मैं तुमसे कहती हूँ । इसकी माता हरित वर्ण का वस्त्र और चोली नहीं धारण करती ॥४२॥ तथा हरितवर्ण का काच का कड़ा भी

॥ ४० ॥ संवादमुभयो राजा सुश्राव सकलं तदा ॥ श्रावणे भृगुवारे तु एतन्माता ममा-
र्चने ॥ ४१ ॥ व्रतस्य नियमं सर्वं कुरुते तं वदामि ते ॥ परिधत्ते न वसनं हरितं कञ्चुकीं
तथा ॥४२॥ न धारयति तद्वर्णं काचकङ्कणकं करे ॥ कदापि नोल्लङ्घयति तण्डुलक्षालनो-
दकम् ॥४३॥ नैव गच्छत्यधस्ताच्च हरित्पल्लवमण्डपम् ॥ कुकलस्य च शाकं सा नाश्नाति
हरिवर्णतः ॥ ४४ ॥ सर्वमेव मम प्रीत्यै मारयिष्यामि मा सुतम् ॥ श्रुत्वा सर्वं नृपः प्रात-
र्जगाम स्वपुरं-प्रति ॥४५॥ प्रत्युद्गता नागरिका दैशिकाः सर्व एव हि ॥ पप्रच्छ मातरं राजा

अपने हाथ में धारण नहीं करती और चावल के धोवन जल को कभी नहीं लांघती है ॥४३॥ तथा हरित पल्लवों के मण्डप के नीचे से नहीं जाती और करेला का शाक हरित वर्ण होने से नहीं खाती है ॥ ४४ ॥ यह सब मेरी प्रसन्नता के लिये करती है इससे मैं इसकी सदा रक्षा करती हूँ और इसी कारण इस पुत्र की भी रक्षा करती हूँ । राजा यह सब सुनकर प्रातःकाल अपने नगर को गया ॥४५॥ राजा प्रियव्रत के स्वागत के लिए समस्त नागरिक और देशवासी मनुष्य आये ।

बाद राजा ने माता से पूछा कि हे माता! तुम जीवन्तिका का व्रत करती हो ॥४६॥ यदि करती हो तो क्या विधान ? इस प्रकार राजा के पूछने पर माता ने कहा कि मैं जीवन्तिका व्रत को नहीं जानती हूँ। राजा प्रियव्रत ने गया यात्रा के पूर्णफल प्राप्ति के निमित्त ब्राह्मणों को और सुवासिनी ब्राह्मणियों को ॥४७॥ भोजन कराने की इच्छा कर उन सुवासिनी

त्वया जीवन्तिकाव्रतम् ॥४६॥ क्रियते तु कथं मातर्न वेद्मीति च साब्रवीत् ॥ साद्गुण्यार्थं तु यात्रायां ब्राह्मणांश्च सुवासिनीः ॥ ४७ ॥ इच्छन्नृपो भोजयितुं व्रतं चापि परीक्षितुम् ॥ सुवासिनीभ्यो वस्त्राणि कञ्चुकयः कङ्कणानि च ॥ ४८ ॥ आगन्तव्यं भोजनार्थं सर्वाभी राजसद्मनि ॥ ततः पुरोधसः पत्नी तत्र दूतमुवाच ह ॥४९॥ हरिद्वर्णं मया किञ्चिद्गृह्यते न कदाचन ॥ दूतो निवेदयामास राज्ञे तस्याः प्रभाषितम् ॥ ५० ॥ राजा सर्वं रक्तवर्णं तस्यै सम्प्रेषयच्छुभम् ॥ अङ्गीकृत्य च तत्सर्वं सापि राजगृहं ययौ ॥ ५१ ॥ पूर्वद्वारे

(सोहागिन) ब्राह्मणियों को यहाँ हरित वस्त्र और चोली तथा कांच का कङ्कण आदि परीक्षा के निमित्त भेजा ॥ ४८ ॥ और दूत ने यह कहा कि आपलोग राजगृह में भोजन के निमित्त आवें। तब पुरोहित की स्त्री राजदूत से बोली ॥४९॥ कि मैं हरित वर्ण की कोई वस्तु ग्रहण नहीं करती हूं। पुरोहित-स्त्री के इस बात को दूत ने राजा से जाकर कहा ॥५०॥ तब राजा ने पुरोहित स्त्री के निमित्त सुन्दर रक्त (लाल) वर्ण के वस्त्रादि को भेजा। पुरोहित स्त्री ने उन सब वस्तुओं को

लेकर वह भी राजगृह को गई ॥५१॥ उसने पूर्वद्वार पर चावल का धोवन जल देखा और हरितवर्णा का मण्डप देखकर वह पुरोहित-स्त्री दूसरे द्वार से गई ॥ ५२ ॥ यह देखकर राजा ने पुरोहित की स्त्री को नमस्कार कर इस प्रकार नियम पालन का कारण पूछा तब पुरोहित-स्त्री ने शुक्रवार का व्रत कारण बताया ॥५३॥ और उस राजा को देखकर उस समय उसके स्तन से दूध बहने लगा और उन स्तनों ने दुग्धधारा से उस प्रियव्रत राजा को अच्छी तरह सिञ्चन किया ॥५४॥

तण्डुलानां दृष्ट्वा चालनजं जलम् ॥ मण्डपं च हरिद्वर्णं दृष्ट्वाऽन्यद्वारतो ययौ ॥ ५२ ॥
राजा पुरोधसः पत्नीं नत्वा पप्रच्छ चाखिलम् ॥ निमित्तं नियमस्यास्य सा प्रोवाच व्रतं
भृगोः ॥ ५३ ॥ तं दृष्ट्वा तु तदात्यन्तं प्रस्नुतौ तत्पयोधरौ ॥ राजानं तं सिषिचतुर्धाराभिः
सर्वतस्तनौ ॥ ५४ ॥ गयायां करयुग्मेन देव्याः संवादतस्तथा ॥ स्तनयो प्रस्रवाच्चव
राजा प्रत्ययमाप सः ॥ ५५ ॥ पालिकां मातरं गत्वा पप्रच्छ विनयान्वितः ॥ मा भैर्मा-
तर्ब्रूहि सत्यं वृत्तान्तं मम जन्मनः ॥ ५६ ॥ श्रुत्वा सुकेशिनी प्राह याथातथ्येन सर्वशः ॥

गया में दो हाथ के निकलने से और मार्ग में गृहस्थ के यहाँ देवियों (षष्ठी और जीवन्तिका) के संवाद से तथा स्तनों से दूध के बहने से राजा को विश्वास हो गया कि यह मेरी माता है ॥५५॥ बाद राजा घर में पालन करने वाली माता के पास जाकर बड़ी नम्रता से पूछा कि हे मातः ! भय मत करो और मेरे जन्म का सत्य (ठीक) वृत्तान्त (समाचार) कहो ॥५६॥ तब सुकेशिनी राजा के जन्म का समाचार सब ठीक २ कह दिया । राजा इस समाचार को जानकर प्रसन्न

हुआ और अपने जन्मदाता पिता माता अर्थात् पुरोहित और पुरोहित की स्त्री को नमस्कार किया ॥५७॥ तथा पुरोहित व पुरोहित-स्त्री को सम्पत्ति देकर सम्पन्न किया तब पुरोहित और पुरोहित-स्त्री को बड़ा आनन्द हुआ। एक दिन रात्रि में राजा ने जीवन्तिका देवी से प्रार्थना की ॥५८॥ कि हे जीवन्तिके! जब मेरे जन्मदाता पिता यह पुरोहित हैं तो गयाजी में दो हाथ क्यों निकले इसका कारण क्या है। उस समय जीवन्तिका देवी ने स्वप्न में संशय दूर कर देनेवाले वचन को

हृष्टो भूत्वा नमश्चक्रे पितरौ स्वस्य जन्मदौ ॥ ५७ ॥ सम्पत्त्या वर्धयामास तौ परां मुदमापतुः ॥ एकस्मिन्दिवसे राजा जीवन्तीं प्रार्थयन्निशि ॥ ५८ ॥ जीवत्ययं जन्मदो मे गयायां च करौ कथम् ॥ तदा स्वप्नगता देवी प्राह संशयनाशकम् ॥ ५९ ॥ मया त्वत्प्रत्ययार्थं हि कृता माया न संशयः ॥ एतद्व्रतमनुष्ठाय सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥ ६१ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये शुक्रवारजीवन्तिकाव्रतकथनं नाम नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ एतत्ते सर्वमाख्यातं श्रावणे भृगुवासरे ॥ ६० ॥

कहा ॥५९॥ कि हे राजन्! मैंने केवल तुमको विश्वास कराने के निमित्त ऐसी माया रची थी इसमें सन्देह मत करो श्रीशिवजी सनत्कुमारजी से कहते हैं कि हे सनत्कुमारजी! यह सब श्रावणमास के शुक्रवार के व्रत का माहात्म्य कहा ॥६०॥ इस व्रत को करके मनुष्य समस्त कामनाओं को प्राप्त करता है ॥६१॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये व्या आ. 'विद्यारत्न' पं. माधवप्रसादकृतायां भाषाटीकायां शुक्रवारजीवन्तिकाव्रतकथनं नाम नवमोऽध्यायः ॥९॥

और शनिवार के दिन स्वयं स्वकुटुम्ब तैल लगाकर स्नान करे तथा उरदी के पदार्थ भोजन के लिये बनावे, इससे नृसिंह भगवान् प्रसन्न होते हैं ॥७॥ इस प्रकार श्रावणमास के चारों शनिवार के दिन शनिव्रत को करे इस प्रकार व्रत को करने से उसके गृह में लक्ष्मी स्थिर होकर वास करती हैं ॥८॥ और धन-धान्य की वृद्धि होती है तथा पुत्रहीन पुत्र को पाता है

टुम्बसहितः शनौ ॥ माषान्नं च प्रकर्तव्यं प्रीणाति नरकेसरी ॥ ७ ॥ एवं चतुर्षु वारेषु श्रावणे मासि तद्व्रतम् ॥ कुर्वतस्तस्य सदने लक्ष्मी स्थिरतरा भवेत् ॥ ८ ॥ धनधान्यसमृद्धिश्च अपुत्रः पुत्रवान्भवेत् ॥ इह लोके सुखं भुक्त्वा अन्ते वैकुण्ठमाप्नुयात् ॥९॥ दिव्यापिनी च सत्कीर्तिर्नृसिंहस्य प्रसादतः ॥ एतत्ते कथितं सौम्य नृसिंहव्रतमुत्तमम् ॥ १० ॥ एवं शनिप्रीणनाय कर्तव्यं तच्छृणुष्व भोः ॥ खञ्जं ब्राह्मणमेकं तु तदभावे तु कञ्चन ॥११॥ अभ्यज्य तिलतैलेन स्नापयेदुष्णवारिणा ॥ नृसिंहोक्तेन चान्नेन भोजयेच्छ्रद्धयान्वितः ॥१२॥

और इस लोक में सुख भोगकर अन्त में वैकुण्ठलोक को जाता है ॥९॥ तथा नृसिंह भगवान् के प्रसाद से उसकी दिगन्त में सत्कीर्ति होती है । हे सौम्य ! मैंने यह उत्तम व्रत नृसिंह भगवान का तुमसे कहा ॥१०॥ अब इसी तरह शनि देवता के प्रीत्यर्थ व्रत आदि करना चाहिए सो आप सुनिये । एक खञ्ज (लंगड़ा) ब्राह्मण को अथवा न मिलने पर किसी भी ब्राह्मण को ॥११॥ तिल का तैल लगाकर उष्ण (गरम) जल से स्नान करावे और श्रद्धा युक्त होकर नृसिंह व्रत में कहे

अन्नों से भोजन करावे ॥१२॥ तैल, लोहा, तिल, उरदी और कम्बल का दान शनिदेवता के प्रीत्यर्थ देवे और इस दान से शनिदेवता प्रसन्न होवें ऐसा कहे ॥१३॥ तथा शनैश्चर देव को तिलतैल से स्नान करावे। और शनि के पूजन में तिल उरदी का अक्षत श्रेष्ठ माना है ॥१४॥ हे मुने! उन शनिदेव का ध्यान मैं कहूंगा आप सावधान होकर सुनिये। शनैश्चर

तैलं लोहं तिलान्माषान्दद्यात्कम्बलमेव च ॥ शनैश्चरप्रीणनाय शनिर्मे प्रीयतामिति ॥१३॥
शनैश्चरस्याभिषेकं तिलतैलेन कारयेत् ॥ प्रशस्ता अक्षतास्तस्य पूजने तिलमाषयोः ॥१४॥
ध्यानं तस्य च वक्ष्यामि शृणुष्वावहितो मुने ॥ शनैश्चरः कृष्णवर्णो मन्दः काश्यपगोत्रजः ॥१५॥ सौराष्ट्रदेशसम्भूतः सूर्यपुत्रो वरप्रदः ॥ दण्डाकृतिर्मण्डले स्यादिन्द्रनीलसमद्युतिः ॥१६॥ बाणबाणासनधरः शूलधृग्गृध्रवाहनः ॥ यमाधिदैवतश्चैव ब्रह्मप्रत्यधिदैवतः ॥१७॥
कस्तूर्यगुरुगन्धः स्याच्चथा गुग्गुलुधूपकः ॥ कृसरान्नप्रियश्चैव विधास्यः परिकीर्तितः ॥१८॥
प्रतिमापूजने चास्य कार्या लोहमयी शुभा ॥ अस्योद्देशेन पूजायां दानं कृष्णं द्विजो-

का कृष्ण वर्ण है, मन्द गति है और काश्यप गोत्र है ॥१५॥ सौराष्ट्र देश में जन्म है, सूर्यनारायण के पुत्र हैं, वर के दाता हैं, मण्डल में दण्डाकार स्थित हैं, इन्द्रनील मणि के समान कान्ति है ॥१६॥ बाण, धनुष, त्रिशूल को धारण किये हैं और गिद्ध की सवारी है तथा यम अधिदेवता और ब्रह्मा प्रत्यधिदेवता हैं ॥ १७ ॥ कस्तूरी, अगुरु का चन्दन और गुगुल का धूप तथा उरद की खिचड़ी नवेद्य में प्रिय है यह शनिपूजन की विधि मैंने कही है ॥१८॥ और शनि के पूजन में सुन्दर

करे ॥३१॥ तैल मिला सिन्दूर का हनुमान जी के शरीर में लेप करे । जपा (दुपहरिया) और अर्क (आक) पुष्पों की माला ॥३२॥ और मन्दारमाला से पूजन करे तथा उरद का बड़ा नैवेद्य के लिये दे और उपचारों से भी अञ्जनीपुत्र का पूजन करे ॥३३॥ बुद्धिमान् विधिपूर्वक यथाशक्ति भक्ति श्रद्धा से पूजन करे और हनुमान् के प्रीत्यर्थ १२ नामों का जप

मिश्रितसिन्दूरलेपं तस्य समर्पयेत् ॥ जपाकुसुममालाभिरर्कमालाभिरेव च ॥ ३२ ॥ माला-भिर्मन्दराभिश्च वटकानां तथैव च ॥ पूजयेदञ्जनीपुत्रं तथान्यैरुपचारकैः ॥३३॥ यथाविधि यथावित्तं श्रद्धाभक्तिसमन्वितः ॥ जपेद्द्वादश नामानि हनुमत्प्रीतये बुधः ॥ ३४ ॥ हनुमानञ्जनीसूनुर्वायुपुत्रो महाबलः ॥ रामेष्टः फाल्गुनसखः पिङ्गाक्षोऽमितविक्रमः ॥ ३५ ॥ उदधिक्रमणश्चैव सीताशोकविनाशकः ॥ लक्ष्मणप्राणदाता च दशग्रीवस्य दर्पहा ॥ ३६ ॥ द्वादशैतानि नामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत् ॥ नाशुभं जायते तस्य सर्वसम्पत्प्रजायते ॥ ३७ ॥

करे ॥ ३४ ॥ हनुमान्, अञ्जनीसूनु, वायुपुत्र, महाबल, रामेष्ट, फाल्गुनसख, पिङ्गाक्ष, अमितविक्रम ॥३५॥ उदधिक्रमण, [10]सीताशोकविनाशक, [11]लक्ष्मणप्राणदाता और [12]दशग्रीवदर्पहा ॥३६॥ जो प्रातःकाल उठकर इन बारह नामों को पढ़ता है

---

१ बड़ी दाढी वाले । २ अञ्जनी के पुत्र । ३ वायु के पुत्र । ४ महाबलशाली । ५ रामचन्द्र इष्ट । ६ अर्जुन के मित्र । ७ पीत वर्ण नेत्रवाले । ८ अमित पराक्रमशाली । ९ समुद्रको लांघने वाले । १० सीता के शोकनाशक । ११ लक्ष्मण के प्राणदाता । १२ रावण के दर्पहर्ता ।

उसका अशुभ नहीं होता और उसे समस्त सम्पत्ति होती है ॥ ३७ ॥ श्रावण मास के शनिवार के दिन इस प्रकार जो मनुष्य हनुमान् की आराधना करता है उसका शरीर वज्र के समान हो जाता है और रोगों का नाश तथा बलवान् होता है ॥३८॥ कार्य करने में वेगवान् (फुर्तीला) होता है और बुद्धि वैभव से भूषित होता है तथा शत्रु का नाश और मित्र

श्रावणे मन्दवारे तु एवमाराध्य वायुजम् ॥ वज्रतुल्यशरीरः स्यादरोगो बलवान्नरः ॥ ३८ ॥
वेगवान्कार्यकरणे बुद्धिवैभवभूषितः ॥ शत्रुः सङ्क्षयमाप्नोति मित्रवृद्धिः प्रजायते ॥ ३९ ॥
वीर्यवान्कीर्तिमांश्चैव प्रसादादञ्जनीजनेः ॥ आञ्जनेयालये लक्षं हनुमत्कवचं पठेत् ॥ ४० ॥
अणिमाद्यष्टसिद्धीनां साधकः स्वामितामियात् ॥ यक्षराक्षसवेताला दर्शनात्तस्य वेगतः ॥४१॥
पयालन्ते दशदिशः कम्पिता भयविह्वलाः ॥ अश्वत्थालिङ्गनं चैव अश्वत्थस्य च पूजनम्
॥ ४२ ॥ मन्दभिन्ने न कर्तव्यः स्पर्शोऽश्वत्थस्य सत्तम ॥ शनावालिङ्गनं तस्य सर्वसम्पत्स-

की वृद्धि होती है ॥३९॥ तथा अञ्जनीपुत्र (हनुमान्) के प्रसाद से वीर्यवान् और कीर्तिमान् होता है। हनुमान् जी के मन्दिर में जो मनुष्य एक लाख हनुमत्कवच का पाठ करता है ॥४०॥ वह अणिमादि अष्ट सिद्धियों का स्वामी होता है और यक्ष राक्षस वेताल उसके दर्शन मात्र से शीघ्र ॥ ४१ ॥ दश दिशाओं में भय से विह्वल होकर और कांपते हुये भाग

१ अणिमा महिमा चैव गरिमा लघिमा तथा। प्राप्तिः प्राकाम्यमीशित्वं वशित्वं चाष्टसिद्धयः ॥ १ ॥ ये आठ सिद्धियां हैं।

जाते हैं। शनिवार के दिन अश्वत्थ का आलिङ्गन और पूजन करे ॥ ४२ ॥ हे श्रेष्ठ! शनिवार को छोड़कर दूसरे वारों में पीपल का स्पर्श न करे। शनिवार को पीपल का आलिङ्गन समस्त सम्पत्ति को बढ़ानेवाला होता है और पीपल का पूजन

समृद्धिदम् ॥ पूजनं सप्तवारेषु तत्रापि श्रावणेऽधिकम् ॥ ४३ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वर-सनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये शनैश्चरनृसिंहहनुमत्पूजनादिशनैश्चरकृत्यकथनं नाम-दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

सातों वार में करे तथा श्रावणमास में विशेषरूप से पूजन करे ॥ ४३ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये व्या. आ. 'विद्यारत्न' पं० माधवप्रसादव्यासकृतायां भाषाटीकायां शनैश्चरनृसिंहहनुमत्पूजनादिशनैश्चर-कृत्यकथनं नाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

सनत्कुमारजी श्री शिवजी से बोले कि हे देव! मैंने आपसे समस्त वारव्रतों को सुना, सो हे देव! आपके वचन रूप अमृत को पीकर मुझे तृप्ति नहीं होती है ॥ १ ॥ मुझे इस श्रावण के समान दूसरा मास नहीं मालूम होता, इसलिए हे जगत्प्रभो! अब तिथियों का माहात्म्य कहिये ॥२॥ ईश्वर सनत्कुमारजी से बोले कि हे सनत्कुमारजी! समस्त महीनों में

सनत्कुमार उवाच—वारव्रतानि सर्वाणि त्वत्तो देव श्रुतानि मे ॥ तव वागमृतं पीत्वा तृप्तिर्मे नैव जायते ॥ १ ॥ श्रावणेन समो मासो नास्त्यन्यः प्रतिभाति मे ॥ अथातस्तिथिमाहात्म्यं कथयस्व जगत्प्रभो ॥ २ ॥ ईश्वर उवाच—मासानां कार्तिकः श्रेष्ठस्तस्मान्माघः परो मतः ॥ ततोऽपि माधवः श्रेष्ठः सहाश्चापि हरिप्रियः ॥ ३ ॥ विश्वरूपेण चत्वारो मासाश्चैते मम प्रियाः ॥ द्वादशेष्वपि मासेषु श्रावणः शिवरूपकः ॥ ४ ॥ तिथयः श्रावणे मासि सर्वाश्च व्रतसंयुताः ॥ प्राधान्यतस्तथापि त्वां वच्मि काश्चित्सुशोभनाः ॥५॥ तिथिवारविमिश्रं तु व्रतं मासे वदामि ते ॥ प्रतिपच्छ्रावणे मासि यदा सोमयुता भवेत्

कार्तिक मास श्रेष्ठ है, कार्तिक से माघ मास श्रेष्ठ है, माघ से वैशाख मास श्रेष्ठ है, और वैशाख से श्रेष्ठ हरि भगवान् को मार्गशीर्ष मास प्रिय है ॥३॥ विश्वरूप भगवान् ने इन चार महीनों को अपना प्रिय मास कहा है और बारह महीनों में श्रावण मास को शिव का स्वरूप बतलाया है ॥४॥ तथा श्रावण मास की समस्त तिथियां व्रतवाली कहीं हैं। फिर भी उनमें प्रधान रूप से उत्तम हैं उन तिथियों को मैं तुमसे कहता हूँ ॥ ५ ॥ प्रथम तिथि और वार के योग से जो व्रत हैं

उनको मैं कहता हूँ। श्रावणमास के प्रतिपत् तिथि को सोमवार होवे तो ॥६॥ उस मास में पाँच सोमवार होवेंगे और उस योग का रोटक व्रत नाम होगा। उस दिन मनुष्यों को व्रत करना चाहिए ॥७॥ अथवा ३॥ साढ़े तीन मास का भी रोटक व्रत होता है यह रोटक व्रत लक्ष्मी को बढ़ाने वाला और समस्त कामना तथा अर्थसिद्धि को देनेवाला है ॥ ८ ॥

॥ ६ ॥ सोमवारास्तदा पञ्च पतन्त्यत्र हि मासिके ॥ रोटकाख्यं व्रतं तत्र कर्तव्यं श्रावणे नरैः ॥ ७ ॥ सार्धमासत्रयं वापि रोटकाख्यं व्रतं भवेत् ॥ लक्ष्मीवृद्धिकरं प्रोक्तं सर्वकामार्थसिद्धिदम् ॥ ८ ॥ विधानं तस्य वक्ष्यामि शृणुष्वावहितो मुने ॥ श्रावणस्य सिते पक्षे प्रतिपत्सोमवासरे ॥ ९ ॥ प्रातः सङ्कल्पयेद्विद्वान्करिष्ये रोटकव्रतम् ॥ अद्यारभ्य सुरश्रेष्ठ कृपां कुरु जगद्गुरो ॥ १० ॥ दिने दिने प्रकर्तव्या पूजा देवस्य शूलिनः ॥ बिल्वपत्रैरखण्डैश्च तुलसीपत्रकैस्तथा ॥ ११ ॥ नीलोत्पलैश्च कमलैः कह्लारैः कुसुमैस्तथा ॥ चम्पकैर्मालतीपुष्पैः

हे मुने! मैं उसका विधान कहूँगा आप सावधान होकर सुनिये। श्रावण मास के शुक्लपक्ष में प्रतिपत् सोमवार के दिन ॥९॥ प्रातःकाल उठकर विद्वान् रोटकव्रत का सङ्कल्प करे कि हे सुरश्रेष्ठ! आज से लेकर मैं रोटकव्रत करूँगा हे जगद्गुरो! आप मुझपर दया करें ॥ १० ॥ इस प्रकार सङ्कल्प करके प्रतिदिन शिव जी का पूजन करे। और अखण्ड (साबूत) बिल्वपत्र तथा तुलसीपत्र से ॥ ११ ॥ नीलकमल, कमल, कल्हार, चम्पा, मालती, कुन्द, अर्क आदि पुष्पों से ॥ १२ ॥

और अनेक प्रकार के ऋतुकाल में होने वाले पुष्पों से, धूप, दीप, नैवेद्य और अनेक प्रकार के फलों से पूजन करे ॥१३॥ विशेष रूप से रोटक का प्रधान नैवेद्य अर्पण करे। और पुरुष के भोजन प्रमाण से पाँच रोटक बनावे ॥ १४ ॥ विद्वान् उनमें से दो रोटक ब्राह्मण को देवे और दो रोटक स्वयं भोजन करे तथा एक रोटक शिवजी को नैवेद्य के लिए सदा

कुविन्दैरर्कपुष्पकैः ॥ १२ ॥ अन्यैर्नानाविधैः पुष्पैर्ऋतुकालोद्भवैः शुभैः ॥ धूपैर्दीपैश्च नैवेद्यैः फलैर्नानाविधैरपि ॥ १३ ॥ नैवेद्यमर्पयेन्मुख्यं रोटकानां विशेषतः ॥ कर्तव्या रोटकाः पञ्च पुरुषाहारमानतः ॥ १४ ॥ द्वौ तु विप्राय दातव्यौ द्वाभ्यां वै भोजनं मतम् ॥ एको देवाय दातव्यो नैवेद्यार्थं सदा बुधैः ॥१५॥ शेषपूजां विधायाथ अर्घ्यं दद्याद्विचक्षणः ॥ रम्भाफलं नारिकेलं जम्बीरं बीजपूरकम् ॥१६॥ खर्जूरी कर्कटी द्राक्षा नारिङ्गं मातुलुङ्गकम् ॥ अक्षोटकं च दाडिम्बं यच्चान्यदृतुसम्भवम् ॥ १७ ॥ प्रशस्तमर्घ्यदाने स्यात्तस्य पुण्यफलं शृणु ॥ सप्तसागर-संयुक्तां भूमिं दत्त्वा तु यत्फलम् ॥ १८ ॥ तत्फलं समवाप्नोति व्रतं कृत्वा विधानतः ॥

देवे ॥१५॥ बाद शेष पूजन को करके विद्वान् अर्घ्य को देवे और केला का फल, नारियल, जम्बीरी, बिजोरा ॥ १६ ॥ खजूर, ककड़ी, दाख, नारिङ्गी, मातुलिङ्ग (बिजौराफल), अक्षोट (अखरोड़), अनार और भी ऋतुकाल के फलों को ॥१७॥ अर्घ्य दान में श्रेष्ठ कहा है। इस प्रकार अर्घ्यदान करने का पुण्यफल मैं कहता हूँ, आप सुनिये। जो मनुष्य सात समुद्र

के साथ पृथिवी दान करता है और उसका जो कुछ फल होता है ॥ १८ ॥ वह फल इस व्रत को विधिपूर्वक करने से मनुष्य प्राप्त करता है। अतुल धन की इच्छा करने वाला मनुष्य इस व्रत को पाँच वर्ष तक करे ॥ १६ ॥ बाद रोटक व्रत का उद्यापन करे और उद्यापन में सुवर्ण के दो रोटक बनावे ॥२०॥ प्रथम दिन अधिवासन करके दूसरे दिन प्रातः-

पञ्चवर्षं प्रकर्तव्यमतुलं धनमीप्सुभिः ॥ १६ ॥ पश्चादुद्यापनं कुर्याद्रोटकाख्यव्रतस्य तु ॥ उद्यापने तु कर्तव्यौ हेमरूप्यौ च रोटकौ ॥ २० ॥ पूर्वेद्युरधिवास्याथ प्रातर्होमं समाचरेत् ॥ सर्पिषा शिवमन्त्रेण बिल्वपत्रैश्च शोभनैः ॥२१॥ एवं कृते व्रते तात सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥ सनत्कुमार वक्ष्यामि द्वितीयायां व्रतं शुभम् ॥ २२ ॥ यत्कृत्वा श्रद्धया मर्त्यो लक्ष्मीवान्पुत्रवान् भवेत् ॥ उदुम्बराभिधं चैव तद्व्रतं पापनाशनम् ॥ २३ ॥ श्रावणे मासि सम्प्राप्ते द्वितीयायां शुभे तिथौ ॥ प्रातः सङ्कल्प्य विधिवद् व्रतं कुर्याद्विचक्षणः ॥२४॥ नारी वाथ

काल अग्नि स्थापन कर शिवमन्त्र से घृत और बिल्वपत्र की आहुति देवे ॥२१॥ हे तात ! ऐसा करने से व्रतकर्ता समस्त कामना को प्राप्त करता है। हे सनत्कुमार ! अब द्वितीया के दिन होने वाले शुभ व्रत को कहूँगा ॥२२॥ श्रद्धा से जिस व्रत को करने से मनुष्य लक्ष्मीवान् और पुत्रवान् होता है। और वह औदुम्बर नामक व्रत समस्त पापों का नाशक है ॥२३॥ व्रतकर्ता विद्वान् श्रावणमास के आने पर द्वितीया शुभ तिथि में प्रातःकाल सङ्कल्प करके औदुम्बर व्रत को करे ॥ २४ ॥

स्त्री अथवा पुरुष हो इस व्रत को करने से वह समस्त सम्पदाओं का पात्र (अधिकारी) होता है। इस व्रत में प्रत्यक्ष गूलर वृक्ष का पूजन करे। यदि गूलर का वृक्ष न मिले तो दीवार में गूलर का वृक्ष ॥२५॥ लिखकर उसमें चार नाममन्त्रों से पूजन करे। हे उदुम्बर! आपको नमस्कार है, हे हेमपुष्पक! (सुवर्ण समान पुष्पवाले! आपको नमस्कार है ॥ २६ ॥

नरो वापि पात्रं स्यात्सर्वसम्पदाम् ॥ साक्षादुदुम्बरः पूज्यस्तदभावे तु कुड्यके ॥ २५ ॥
लिखित्वा पूजयेत्तत्र चतुर्भिर्नाममन्त्रकैः ॥ उदुम्बर नमस्तुभ्यं नमस्ते हेमपुष्पक ॥ २६ ॥
सजन्तुफलयुक्ताय नमो रक्ताण्डशालिने ॥ तत्राधिदेवते पूज्ये शिवः शुक्रस्तथैव च ॥२७॥
त्रयस्त्रिंशत्फलान्यस्य गृहीत्वा भागमाचरेत् ॥ एकादश ब्राह्मणाय दद्यात्तावन्ति दैवते ॥२८॥
तावन्ति स्वयमश्नीयान्नान्नाहारस्तु तद्दिने ॥ शिवं शुक्रञ्च सम्पूज्य रात्रौ जागरणं चरेत्
॥ २९ ॥ एवं कृत्वा व्रतं तात वर्षाण्येकादशैव तु ॥ पश्चादुद्यापनं कुर्याद्व्रतसम्पूर्णहेतवे

हे जीव सहित फलवाले! हे रक्त (लाल) अण्ड के समान फलों से शोभायमान! आपको नमस्कार है। इस तरह पूजन कर उस वृक्ष में शिव और शुक्र का पूजन करे ॥२७॥ और गूलर के ३३ (तेतीस) फलों को लेकर तीन भाग करे जिनमें से ग्यारह फल ब्राह्मण को देवे और ग्यारह फल देवता को देवे ॥ २८ ॥ तथा ग्यारह फल स्वयं भोजन करे, उस दिन अन्न का भोजन न करे और रात्रि में शिव तथा शुक्र का पूजन कर जागरण करे ॥२९॥ हे तात! इस प्रकार ग्यारह वर्ष

तक व्रत को करे, बाद व्रतपूर्ति के लिए उद्यापन को करे ॥ ३० ॥ उद्यापन में सुवर्ण का फल पुष्प पत्र आदि से युक्त गूलर का वृक्ष बनावे और उस वृक्ष में सुवर्ण की बनी हुई शिव शुक्र प्रतिमा में पूजन करे ॥३१॥ दूसरे दिन प्रातःकाल अग्निस्थापन कर सुन्दर कोमल छोटे २ गूलर के फलों से अष्टोत्तरशत (१०८) हवन करे ॥३२॥ और गूलर की समिधा

॥ ३० ॥ उदुम्बरः सुवर्णेन फलपुष्पदलान्वितः ॥ तत्र सम्पूजयेद्विद्वान्प्रतिमे शिवशुक्रयोः
॥ ३१ ॥ प्रातर्होमं चरेच्चैव उदुम्बरफलैः शुभैः ॥ कोमलैरल्पमात्रैश्च संख्ययाष्टोत्तरं शतम्
॥३२॥ उदुम्बरसमिद्भिश्च तिलैराज्यैश्च होमयेत् ॥ एवं समाप्य होमं तु आचार्यं पूजयेत्ततः
॥ ३३ ॥ ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाच्छतं शक्तौ दशाथवा ॥ एवं व्रते कृते वत्स फलं यत्स्या-
च्छृणुष्व तत् ॥ ३४ ॥ बहुजन्तुफलो वृक्षो यथायं साधकस्तथा ॥ भवेदनेकसुतवान्वंश-
वृद्धिस्तथा भवेत् ॥३५॥ हेमपुष्पैर्यथा वृक्षस्तथा लक्ष्मीप्रदो भवेत् ॥ अद्यावधि न कस्यापि

तिल घृत से हवन करे इस प्रकार हवन समाप्त कर आचार्य का पूजन करे ॥३३॥ बाद शक्ति रहने पर १०० सौ ब्राह्मणों को भोजन, अभाव में १० दश ब्राह्मणों को भोजन करावे, हे वत्स! इस प्रकार व्रत करने से जो फल होता है उसे मैं कहता हूँ तुम सुनो ॥ ३४ ॥ हे वत्स! जैसे यह वृक्ष बहुत जीवयुक्त फलों से सम्पन्न होता है वैसे ही इस व्रत को करने वाला भी बहुत पुत्रों से युक्त होता है और उसके वंश की वृद्धि होती है ॥३५॥ और जैसे सुवर्णमय पुष्पों से सम्पन्न वृक्ष वैसे

वह मनुष्य भी लक्ष्मीप्रद होता है। तथा मैंने आज तक इस व्रत को किसी से प्रकाशित नहीं किया ॥ ३६ ॥ हे वत्स ! गोप्य से भी गोप्यतर व्रत को तुमसे कहा है, इसमें संशय नहीं है। इस व्रत को भक्ति से करना ॥ ३७ ॥ इति श्री

व्रतमेतत्प्रकाशितम् ॥ ३६ ॥ गोप्याद्गोप्यतरं चैव तवाग्रे कथितं मया ॥ नैवात्र संशयः कार्यो भक्त्या चैतद्व्रतं चरेत् ॥ ३७॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावण-मासमाहात्म्ये प्रतिपद्रोटकव्रतद्वितीयोदुम्बरव्रतकथनं नामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

स्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये व्या. आ. 'विद्यारत्न' पं० माधवप्रसादव्यासकृतायां भाषाटीकायां प्रतिपद्रोटकव्रतद्वितीयोदुम्बरव्रतकथनं नामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

ईश्वर (शिवजी) सनत्कुमार जी से बोले । हे विधात्रज ! (ब्रह्मा के पुत्र !) इसके बाद श्रावणमास के शुक्लपक्ष की तृतीया तिथि के दिन होने वाले शुभप्रद स्वर्णगौरी व्रत को कहूँगा ॥१॥ उस दिन प्रातःकाल स्नान और नित्यकर्म को करके प्रथम सङ्कल्प को करे तथा षोडशोपचार से पार्वती शङ्कर का पूजन करे ॥ २ ॥ और प्रार्थना करे कि हे देवदेव !

ईश्वर उवाच—अतः परं प्रवक्ष्यामि स्वर्णगौरीव्रतं शुभम् ॥ श्रावणे शुक्लपक्षे तु तृतीयायां विधात्रज ॥ १ ॥ प्रातः स्नात्वा नित्यकर्म कृत्वा सङ्कल्पमाचरेत् ॥ पार्वतीशङ्करौ पूज्यौ षोडशैरुपचारकैः ॥ २ ॥ देवदेव समागच्छ प्रार्थयेऽहं जगत्पते ॥ इमां मया कृतां पूजां गृहाण सुरसत्तम ॥ ३ ॥ वायनानि प्रदेयानि दम्पतीभ्यस्तु षोडश ॥ भवान्याश्च महादेव्या व्रतसम्पूर्णहेतवे ॥ ४ ॥ प्रीतये द्विजवर्याय वायनं प्रददाम्यहम् ॥ धानाषोडशपक्वान्नैर्वेणुपात्राणि षोडश ॥ ५ ॥ कुर्याद्वस्त्रादिभिर्युक्तान्याहूय द्विजदम्पतीन् ॥ व्रतसम्पूर्ण-

आप यहाँ आइये, हे जगत्पते ! मैं प्रार्थना करता हूँ, हे सुरसत्तम ! मुझसे की हुई पूजा को आप ग्रहण करें ॥ ३ ॥ बाद महादेवी पार्वती के प्रसन्नार्थ और व्रत की पूर्ति के लिये स्त्री पुरुषों को सोलह (१६) वायन का दान करे ॥ ४ ॥ और यह कहे कि मैं पार्वती के प्रसन्नार्थ तथा व्रतपूर्ति के लिये ब्राह्मणश्रेष्ठ को देता हूँ । चावल के पिसान के बने सोलह पकान्न सोलह बांस के पात्र में रखकर ॥ ५ ॥ सोलह वस्त्रों से युक्त कर सोलह सपत्नीक ब्राह्मणों को बुलाकर कहे कि मैं

व्रत की पूर्ति के लिये ब्राह्मणों को देता हूँ ।। ६ ।। अलङ्कार आदि से युक्त ये पातिव्रत धर्म से भूषित सुवासिनी स्त्रियाँ मेरे कार्यसमृद्धि के लिये ग्रहण करें ।७।। इस तरह सोलह वर्ष, आठ वर्ष, चार वर्ष, अथवा एक वर्ष व्रत को करके तत्काल उद्यापन को करे ।।८।। इस प्रकार पूजन के अन्त में कथा को सुनकर वाचक (व्यास) का सम्यक पूजन करे ।। ९ ।।

तार्थं तु ब्राह्मणेभ्यो ददाम्यहम् ।। ६ ।। स्वलङ्कृताः सुवासिन्यः पातिव्रत्येन भूषिता ।। मम कार्यसमृद्ध्यर्थं प्रतिगृह्णन्तु शोभनाः ।। ७ ।। एवं षोडश वर्षाणि अष्टौ चत्वारि वा पुनः ।। एकवर्षं तु सद्यो वा कृत्वा चोद्यापनं चरेत् ।। ८ ।। पूजान्ते च कथां श्रुत्वा वाचकं सम्प्रपूजयेत् ।। ९ ।। सनत्कुमार उवाच—केन चीर्णं व्रतमिदं माहात्म्यं चास्य कीदृशम् ।। उद्यापनं कथं कार्यं तत्सर्वं वद मे प्रभो ।। १० ।। ईश्वर उवाच—साधु पृष्टं महाभाग कथयामि तवाग्रतः ।। स्वर्णगौरीव्रतं नाम सर्वसम्पत्करं नृणाम् ।।११।। पुरा सरस्वतीतीरे

तब सनत्कुमार जी शिवजी से बोले कि हे प्रभो ! इस व्रत को किसने किया ? और इसका माहात्म्य कैसा है ? तथा इसका उद्यापन कैसे किया जाय ? यह सब आप मुझसे कहिये ।। १० ।। श्रीशिवजी सनत्कुमार जी से बोले कि हे महाभाग ! आपने बहुत अच्छा प्रश्न किया मैं तुम्हारे सामने कहता हूँ, हे सनत्कुमारजी ! यह स्वर्णगौरी नामक व्रत मनुष्यों को समस्त सम्पत्ति को देने वाला है ।। ११ ।। पहिले सरस्वती नदी के तट पर सुविला नाम से प्रसिद्ध महापुरी

सुविलाख्या महापुरी ॥ तत्र चन्द्रप्रभो नाम राजाऽऽसीद्धनदोपमः ॥ १२ ॥ तस्याऽऽस्तां
रूपलावण्ये सौन्दर्यस्मरविभ्रमे ॥ महादेवीविशालाख्ये द्विभार्ये कामलेक्षणे ॥ १३ ॥ तयोः
प्रियतरा ज्येष्ठा तस्याऽऽसीन्नृपतेर्मता ॥ स कदाचिद्वनं भेजे मृगयाऽऽसक्तमानसः ॥ १४ ॥
सिंहशार्दूलवाराहवनमाहिषकुञ्जरान् ॥ हत्वा बभ्राम तृष्णार्तः स राजा विपिनं महत् ॥१५॥
चक्रकारण्डवाकीर्णं चञ्चरीकपिकाकुलम् ॥ उत्फुल्लमल्लिकाजातिकुमुदोत्पलमण्डितम् ॥१६॥
अपूर्वमवनीशोऽसौ ददर्शाप्सरसां सरः ॥ समासाद्य सरस्तीरं पीत्वा जलमनुत्तमम् ॥१७॥

थी, उस महापुरी में कुबेर के समान चन्द्रप्रभ नाम का राजा था ॥ १२ ॥ उस राजा को रूप लावण्य से सम्पन्न सौन्दर्य और मन्द मुसकान से सुन्दर, और कमल समान नेत्रवाली महादेवी तथा दूसरी विशाला नाम से प्रसिद्ध दो स्त्री थीं ॥ १३ ॥ उन दोनों में से उस चन्द्रप्रभ राजा को बड़ी महादेवी रानी अधिक प्रिय थी। एक दिन चन्द्रप्रभ राजा शिकार खेलने की इच्छा से वन को गया ॥१४। और सिंह, शार्दूल, सूकर, अरना, भैंसा तथा हाथी को मारकर प्यास से पीड़ित वह राजा उस महान् वन में भ्रमण करने लगा ॥ १५ ॥ इस प्रकार वन में भ्रमण करता हुआ राजा अनेक प्रकार के रङ्ग विरङ्ग के विकसित कुमुद उत्पल आदि कमलों से और मल्लिका चमेली आदि पुष्पों से सुशोभित, तथा भ्रमर चक्रवाक कारण्डव पपीहा आदि जीवों से घिरा हुआ ॥१६॥ ——— ओं के क्रीडासार (तालाब) को देखकर तालाब के

तट पर गया और उस तालाब के उत्तम जल को पीकर ॥ १७ ॥ भक्ति से गौरी का पूजन करते अप्सरागणों को देखता भया और राजीवलोचन (कमलनेत्र) राजा ने उन अप्सरागणों से पूछा कि आप लोग यह क्या करती हैं ? ॥ १८ ॥ अप्सराओं ने राजा से कहा कि हे नृपोत्तम ! हमलोग श्रेष्ठ स्वर्णगौरीव्रत को करती हैं, यह व्रत मनुष्यों को समस्त सम्पत्ति को देनेवाला है इसलिये हे नृपोत्तम ! आप भी इस व्रत को करिये ॥ १९ ॥ राजा ने कहा कि हे देवि ! आपलोग इसकी

भक्त्या गौरीमर्चयन्तं ददर्शाप्सरसां गणम् ॥ किमेतदिति पप्रच्छ राजा राजीवलोचनः ॥१८॥
स्वर्णगौरीव्रतमिदं क्रियतेऽस्माभिरुत्तमम् ॥ सर्वसम्पत्करं नृणां तत्कुरुष्व नृपोत्तम ॥ १९ ॥
राजोवाच—विधानं कीदृशं ब्रूत किं फलं विस्तरान्मम ॥ ता ऊचुर्योषितः सर्वास्तृतीयायां नभोयुजि ॥२०॥ कर्तव्यं व्रतमेतद्धि स्वर्णगौरीतिसंज्ञितम् ॥ पार्वतीशाङ्करौ पूज्यौ भक्त्या परमया मुदा ॥२१॥ दोरकं षोडशगुणं बध्नीयाद्दक्षिणे करे ॥ नरो वामे तु नारीणां गले वा बन्धनं मतम् ॥ २२ ॥ तत्कृत्वा सोऽपि जग्राह व्रतं नियतमानसः ॥ गुणैः षोडशभि-

विधि मुझसे कहिये और इसका फल क्या है उसको भी विस्तार से कहिये । इस प्रकार राजा के पूछने पर उन स्त्रियों ने कहा कि हे राजन् ! श्रावण शुक्ल तृतीया के दिन ॥ २० ॥ यह स्वर्णगौरी नामक व्रत किया जाता है और इस व्रत में परम भक्ति से प्रसन्नता पूर्वक पार्वती शङ्कर की पूजा की जाती है ॥२१॥ तथा सोलह तार का डोरा पुरुष अपने दाहने हाथ में और स्त्रियाँ वाम हाथ में अथवा दोनों स्त्री पुरुष कण्ठ में बाँधे ऐसा सभी का मत है ॥२२॥ यह सुनकर चन्द्रप्रभ

युक्तं दोरकं दक्षिणे करे ॥२३॥ बध्नामि देवदेवेशि प्रसादं कुरु मे वरम् ॥ एवं देव्या व्रतं
कृत्वा आजगाम निजं गृहम् ॥२४॥ पप्रच्छ दोरकं हस्ते दृष्ट्वा ज्येष्ठातिकोपना ॥ त्रोटयित्वा
च चिक्षेप बाह्ये शुष्कतरूपरि ॥ २५ ॥ न कर्तव्यं न कर्तव्यमिति राज्ञि वदत्यपि ॥ तेन
संस्पृष्टमात्रेण तरुः पल्लवितोऽभवत् ॥२६॥ तद्द्वितीया ततो दृष्ट्वा विस्मयाकुलिताऽभवत् ॥
तत्रस्थं दोरकं छिन्नं गृहीत्वा सा बबन्ध ह ॥ २७ ॥ ततस्तन्मासमाहात्म्यात्पत्युः प्रियतरा-
ऽभवत् ॥ ज्येष्ठा व्रतोपचारेण सा त्यक्ता दुःखिता वनम् ॥ २८ ॥ प्रययौ सा महादेवी

राजा ने भी व्रत के कृत्य को किया और विधिपूर्वक सोलह तार का डोरा अपने दहिने हाथ में बाँधकर व्रत को ग्रहण किया ॥ २३ ॥ और राजा ने कहा कि हे देवदेवेशि ! इस डोरा को व्रतार्थ में बांधता हूँ मुझपर आप कृपा करें । इस प्रकार देवी का व्रतकर राजा अपने घर आया ॥ २४ ॥ घर आने पर बड़ी रानी ने हाथ में डोरा को देखकर अति क्रुद्ध होती हुई । राजा से पूछा और बाद उस डोरा को हाथ से तोड़ कर बाहर सूखे वृक्ष पर फेंक दिया ॥ २५ ॥ राजा ने रानी से कहा कि हे रानी ! ऐसा मत करो, ऐसा मत करो, इस प्रकार मना करने पर भी रानी नहीं मानी । और सूखा वृक्ष उस डोरा के स्पर्शमात्र से हरे पत्रों से युक्त हो गया ॥२६॥ इस वृत्तान्त को दूसरो छोटी रानी ने देखकर विस्मित होती हुई उस वृक्ष से टूटे डोरे को लेकर अपने वाम हाथ में बाँध लिया ॥ २७ ॥ उस दिन से उस मासव्रत के माहात्म्य से वह छोट रानी राजा को अधिक प्रिय हो गई और बड़ी रानी व्रत का अपमान करने से राजा से त्याग की गई दुःखित होकर

ध्यायन्ती मनसा च ह ॥ मुनीनामाश्रमे पुण्ये निवसन्ती क्वचित्क्वचित् ॥२९॥ निवारिता मुनिवरैर्गच्छ पापे यथासुखम् ॥ धावन्ती विपिनं घोरं निर्विण्णा निषसाद च ॥ ३० ॥ ततस्तत्कृपया देवी प्रादुरासीत्तदग्रतः ॥ तां दृष्ट्वा दण्डवद्भूमौ नत्वा स्तुत्वा नृपप्रिया ॥३१॥ जय देवि नमस्तुभ्यं जय भक्तवरप्रदे ॥ जय शङ्करवामाङ्गे जयमङ्गलमङ्गले ॥ ३२ ॥ ततो भक्त्या वरं लब्ध्वा गौरीमभ्यर्च्य यद्व्रतम् ॥ चक्रे तस्य प्रभावेण भर्ता तां चानयद्गृहम् ॥ ३३ ॥ ततो देव्याः प्रसादेन सर्वान्कामानवाप सा ॥ ततस्ताभ्यां नृपो राज्यं चक्रे सर्वं

वन को चली गई ॥२८॥ और महादेवी का मन से ध्यान करती हुई पवित्र मुनियों के आश्रम में कहीं २ वास करती हुई ॥२९॥ परन्तु आश्रमवासी मुनियों ने उसको देखकर कहा कि हे पापे ! यहाँ से यथासुख चली जा, इस प्रकार तिरस्कार होने से दुःखित वह रानी घोर वन में भ्रमण करती हुई बैठ गई ॥३०॥ तदनन्तर उस समय रानी पर कृपाकर देवी प्रकट हो गई, बाद रानी ने देवी को देखकर पृथ्वी पर दण्डवत् प्रणाम कर स्तुति की ॥३१॥ कि हे देवि ! आपकी जय हो, आपको नमस्कार है, हे भक्तवरप्रदे ! (भक्तों को वर देनेवाली) आपकी जय हो, हे शङ्कर की वामाङ्गे ! आपकी जय हो, हे मङ्गलों की मङ्गलरूपे । आपकी जय हो ॥३२॥ इस प्रकार भक्ति के कारण देवी से वर को प्राप्त किया और गौरी का पूजन कर व्रत को किया, बाद व्रत के प्रभाव से राजा उस बड़ी रानी को घर ले आया ॥३३॥ घर आकर रानी ने देवी के प्रसाद से समस्त कामनाओं को प्राप्त किया । राजा दोनों रानियों के साथ समस्त राज्य का उपभोग करता हुआ

समृद्धिमान् हुआ ॥३४॥ और अन्त में राजा दोनों स्त्रियों के साथ शिवलोक को गया ॥३५॥ शिवजी सनत्कुमारजी से कहते हैं कि हे सनत्कुमारजी ! जो प्राणी इस पार्वतीजी के शोभन व्रत को करता है वह मेरा और पार्वती जी का अत्यन्त प्रियपात्र होता है और इस पृथ्वी पर उत्तम अधिक लक्ष्मी को प्राप्त कर तथा शत्रुसमुदाय को जीतकर अन्त में

समृद्धिमान् ॥ ३४ ॥ अन्ते शिवपदं प्राप्तः कान्ताभ्यां सहितो नृप ॥ ३५ ॥ यः शोभनं व्रतमिदं कुरुते शिवायाः कुर्यान्मम प्रियतरो भविता च गौर्याः ॥ प्राप्य श्रियं समधिकां भुवि शत्रुसङ्घं निर्जित्य निर्मलपदं स शिवस्य याति ॥ ३६ ॥ एतस्योद्यापनविधिं सावधानमनाः शृणु ॥ शुभे तिथौ शुभे वारे चन्द्रे ताराबलान्विते ॥ ३७ ॥ मण्डपेऽष्टदले पद्मे कुम्भं धान्योपरि न्यसेत् ॥ पूर्णपात्रं ताम्रमयं पलषोडशनिर्मितम् ॥ ३८ ॥ तिलपूर्णं तत्र देवीशङ्करप्रतिमे न्यसेत् ॥ श्वेतवस्त्रयुगच्छन्नं श्वेतयज्ञोपवीतिनम् ॥ ३९ ॥ वेदोक्तेन प्रतिष्ठा

शिवजी के निर्मल पद (कैलास) को जाता है ॥ ३६ ॥ हे सनत्कुमार जी ! इस व्रत की उद्यापनविधि को आप सावधान होकर सुनिये । शुभ तिथि शुभ वार ताराबल चन्द्रबल होने पर ॥३७॥ मण्डप बनाकर अष्टदल कमल के ऊपर धान्यराशि रखकर घट की स्थापना करे और घट के ऊपर सोलह पल (६४ भर) का ताम्रमय पूर्णपात्र स्थापित करे ॥३८॥ उस पूर्णपात्र को तिल से पूर्ण करे उस पर पार्वती शङ्कर की प्रतिमा स्थापित करे और दो श्वेत वस्त्र तथा श्वेत जनेऊ अर्पण

करे ॥३९॥ तथा वेदोक्त मन्त्रों से यथाविधि प्रतिष्ठा कर अच्छी तरह पूजा करे और रात्रि में जागरण करे ॥४०॥ दूसरे दिन प्रातःकाल पुनः पूजा करके हवन करे प्रथम ग्रहहोम करके प्रधान का हवन करे ॥४१॥ तिल जव घृत मिलाकर एक हजार अथवा एक सौ प्रधान आहुति देवे ॥४२॥ वस्त्र अलङ्कार धेनु आदि से आचार्य का पूजन करे और १६ वायनोंका

च कर्तव्या तु यथाविधि ॥ सम्यक्पूजां तु सम्पाद्य रात्रौ जागरणं चरेत् ॥४०॥ प्रातः पूजां ततः कृत्वा ततो होमं समाचरेत् ॥ ग्रहहोमं पुरा कृत्वा प्रधानं जुहुयात्ततः ॥४१॥ तिलाश्च यवसम्मिश्रा आज्येन च परिप्लुताः ॥ द्रव्यप्रधाने संख्या तु सहस्रमथवा शतम् ॥४२॥ आचार्यं पूजयेत्तत्र वस्त्रालङ्कारधेनुभिः ॥ वायनानि च देयानि ब्राह्मणांश्चैव भोजयेत् ॥४३॥ दम्पतीन्भोजयेच्चैव संख्यया षोडशैव तु ॥ भूयसीं दक्षिणां दद्यात्स्वस्य वित्तानुसारतः ॥ बन्धुभिः सह भुञ्जीत हर्षोत्सवसमन्वितः ॥ ४४ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये तृतीयायां स्वर्णगौरीव्रतकथनं नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

दान करे तथा ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥४३॥ और सोलह सपत्नीक ब्राह्मणों को भोजन करावे तथा वित्त के अनुसार भूयसी दक्षिणा देवे । बाद हर्ष उत्सव पूर्वक बन्धुओं के साथ स्वयं भोजन करे ॥ ४४ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वर-सनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये व्या. आ. 'विद्यारत्न' पं. माधवप्रसादव्यासकृत भाषाटीकायां तृतीयायां स्वर्णगौरीव्रतकथनं नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

सनत्कुमारजी शिवजी से बोले कि हे भगवन् ! किस व्रत को करने से अतुल सौभाग्य होता है और मनुष्य पुत्र पौत्र धन ऐश्वर्य को प्राप्त करता है तथा सुख की वृद्धि होती है, हे महादेव जी ! ऐसे व्रतों में उत्तम व्रत को मुझसे कहिये ॥ १ ॥ यह सुनकर शिवजी सनत्कुमारजी से बोले कि हे सनत्कुमारजी। त्रैलोक्य में प्रसिद्ध दूर्वागणपति नाम का व्रत है इस व्रत को पहिले भगवती श्रीपार्वती जी ने श्रद्धा से किया था ॥२॥ हे मुनिसत्तम ! इस व्रत को सरस्वती इन्द्र

सनत्कुमार उवाच—केन व्रतेन भगवन् सौभाग्यमतुलं भवेत् ॥ पुत्रपौत्रधनैश्वर्यं मनुजः सुखमेधते ॥ तन्मे वद महादेव व्रतानामुत्तमं व्रतम् ॥ ॥ १ ॥ ईश्वर उवाच—अस्ति दूर्वा गणपतेर्व्रतं त्रैलोक्यविश्रुतम् ॥ भगवत्या पुरा चीर्णं पार्वत्या श्रद्धया सह ॥ २ ॥ सरस्वत्या महेन्द्रेण विष्णुना धनदेन च ॥ अन्यैश्च देवैर्मुनिभिर्गन्धर्वैः किन्नरैस्तथा ॥ चीर्णमेतद्व्रतं सर्वैः पुराऽभून्मुनिसत्तम ॥ ३ ॥ चतुर्थी या भवेच्छुद्धा नभोमासि सुपुण्यदा ॥ तस्यां व्रत-मिदं कुर्यात्सर्वपापौघनाशनम् ॥ ४ ॥ गजाननं चतुर्थ्यां तु एकदन्तविपाटितम् ॥ विधाय हेम्ना विघ्नेशं हेमपीठासने स्थितम् ॥ ५ ॥ तदा हेममयी दूर्वा तदाधारे व्यवस्थितम् ॥

विष्णु कुबेर और बहुत से देवता मुनि गन्धर्व किन्नरों ने तथा पहिले सभी लोगों ने किया है ॥ ३ ॥ श्रावणमास शुक्लपक्ष की पवित्र चतुर्थी के दिन समस्त पापों को नाश करनेवाले इस व्रत को करे ॥४॥ चतुर्थी के दिन एक दाँत की गज के समान मुख वाले गणेश की सुवर्णमय प्रतिमा बनवाकर सुवर्ण सिंहासन पर स्थापित करे ॥५॥ और उस सिंहासन में सुवर्ण

की दूर्वा बिछाकर ताम्रकलश के ऊपर स्थापित करे ॥६॥ तथा लालवस्त्र बिछाकर सर्वतोभद्र मण्डल बनावे और उस पर कलश स्थापित करे, लाल पुष्पों से पाँच पत्रों से पूजन करे ॥७॥ अपामार्ग (चिचिड़ा), शमी, दूर्वा, तुलसी, बिल्वपत्र और अन्य सुगन्धित ऋतुकाल में होने वाले पुष्पों से ॥८॥ अनेक प्रकार के फल मोदक आदि का नैवेद्य के लिये रखकर

संस्थाप्य विघ्नहर्तारं कलशे ताम्रभाजने ॥ ६ ॥ वेष्टिते रक्तवस्त्रेण सर्वतोभद्रमण्डले ॥ पूजये-
द्रक्तकुसुमैः पत्रिकाभिश्च पञ्चभिः ॥ ७ ॥ अपामार्गशमीदूर्वातुलसीबिल्वपत्रकैः ॥ अन्यैः
सुगन्धैः कुसुमैर्यथालब्धैः सुगन्धिभिः ॥ ८ ॥ फलैश्च मोदकैः पश्चादुपहारं प्रकल्पयेत् ॥
यथावदुपचारैश्च पूजयेद्गिरिजासुतम् ॥ ९ ॥ प्रतिमायां स्वर्णमय्यां निर्मितायां यथाविधि ॥
आवाहयामि विघ्नेशमागच्छतु कृपानिधिः ॥ १० ॥ रत्नबद्धमिदं हैमं सिंहासनमनुत्तमम् ॥
आसनार्थमिदं दत्तं प्रतिगृह्णातु विघ्नराट् ॥११॥ उमासुत नमस्तुभ्यं विश्वव्यापिन् सनातन ॥
विघ्नौघं छिन्धि सकलं मम पाद्यं ददामि ते ॥१२॥ गणेश्वराय देवाय उमापुत्राय वेधसे ॥

षोडशोपचार से गणेशजी का पूजन करे ॥ ९ ॥ तथा यह प्रार्थना करे कि इस स्वर्णमय बनी प्रतिमा में विघ्नेश का आवाहन करता हूँ, कृपानिधि यहाँ आकर विराजमान होवें ॥१०॥ यह रत्नों से जड़ित उत्तम सुवर्णमय सिंहासन आसन के लिये देता हूँ, इसको विघ्नराट् ग्रहण करें ॥११॥ हे उमासुत ! हे विश्वव्यापिन् ! हे सनातन ! आपको नमस्कार है, मेरे विघ्न-

समूह का नाश करें, यह पाद्य आपको देता हूँ ॥ १२ ॥ हे भगवन् ! आप गणेश्वर, देव, उमापुत्र, विधाता हो, आपके लिये इस अर्घ्य को देता हूँ, हे भगवन् ! इसको आप ग्रहण करें ॥१३॥ विनायक, शूर, वरदाता गणेश को नमस्कार है, नमस्कार है, हे भगवन् ! इस आचमनीय (आचमनार्थ जल) को आपके लिये देता हूँ आप ग्रहण करें ॥१४॥ हे सुरपुङ्गव !

अर्घ्यमेतत्प्रयच्छामि गृहाण भगवन्मम ॥ १३ ॥ विनायकाय शूराय वरदाय नमोनमः ॥
इदमाचमनीयं ते ददामि प्रतिगृह्यताम् ॥१४॥ गङ्गादिसर्वतीर्थेभ्यो मया प्रार्थनयाऽऽहृतम् ॥
स्नानार्थं ते मया दत्तं गृहाण सुरपुङ्गव ॥१५॥ सिन्दूरेण यथा लक्ष्म कुङ्कुमैरञ्जितं मया ॥
वस्त्रयुग्ममिदं दत्तं गृहाण च नमोऽस्तु ते ॥ १६ ॥ लम्बोदराय देवाय सर्वविघ्नापहारिणे ॥
उमाङ्गमलसम्भूतं चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ॥ १७ ॥ अक्षताश्च सुरश्रेष्ठ रक्तचन्दनचर्चिताः ॥
मया निवेदिता भक्त्या गृहाण सुरसत्तम ॥ १८ ॥ चम्पकैः केतकीपत्रैर्जपाकुसुमसङ्कुकैः ॥

प्रार्थना पूर्वक आपके स्नानार्थ समस्त तीर्थों से इस जल को लाया हूँ आप इस जल को ग्रहण करें ॥१५॥ सिन्दूर केसर का रंगा हुआ यह दो वस्त्र आपके लिये मैंने दिया है, हे भगवन् ! आप ग्रहण करें, आपको नमस्कार है ॥१६॥ हे पार्वती के अङ्गमल से सम्भूत ! आप लम्बोदर देव समस्त विघ्नों के नाशकर्ता हैं, आप इस चन्दन को ग्रहण करें ॥१७॥ हे सुरश्रेष्ठ ! रक्तचन्दन से रञ्जित इन अक्षतों को मैंने भक्ति से दिया है, हे सुरश्रेष्ठ ! आप इसको ग्रहण करें ॥ १८ ॥ चम्पक केतकी

जपा पुष्पों से गौरीपुत्र का मैं पूजन करता हूँ, वे मुझपर प्रसन्न होवें ॥ १६ ॥ त्रैलोक्य के कल्याण के लिये और दानवों के वध के लिये स्कन्दगुरु (स्कन्द हैं गुरु जिसके) आपका अवतार है, हे भगवन् ! प्रसन्नता से आप इस धूप को ग्रहण करें । २०॥ आप श्रेष्ठ ज्योति के प्रकाशक, समस्त सिद्धि के दाता, महादेव के पुत्र हैं, आपके लिये इस दीपक को देता

गौरीपुत्र पूजयामि प्रसीदतु ममोपरि ॥१६॥ अनुग्रहाय लोकानां दानवानां वधाय च ॥
अवतीर्णः स्कन्दगुरुर्धूपं गृह्णातु वै मुदा ॥२०॥ परञ्ज्योतिःप्रकाशाय सर्वसिद्धप्रदाय च ॥
दीपं तुभ्यं प्रदास्यामि महादेवात्मने नमः ॥२१॥ गणानान्त्वेति नैवेद्यमर्पयेन्मोदकादिकम् ॥
अन्नं चतुर्विधं चैव पायसं लड्डुकादिकम् ॥२२॥ कर्पूरैलादिसंयुक्तं नागवल्लीदलान्वितम् ॥
ताम्बूलं ते प्रदास्यामि मुखवासार्थमादरात् ॥२३॥ हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः ॥
दक्षिणां ते प्रदास्यामि ह्यतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥ २४ ॥ गणेश्वर गणाध्यक्ष गौरीपुत्र

हूँ, आपको नमस्कार है ॥२१॥ बाद 'गणनांत्वा–' इस मन्त्र से मोदक आदि और चतुर्विध (भक्ष्य भोज्य लेह्य चोष्य) अन्नों को तथा दूध के मोदक आदि नैवेद्य के लिये अर्पण करे ॥२२॥ कपूर ईलायची से युक्त नागवल्लीदल (पान) को मैं आदर पूर्वक मुखसुगन्धि के लिये आपको देता हूँ ॥ २३ ॥ हिरण्यगर्भ के गर्भ में स्थित अग्नि दैवत सुवर्ण बीज को आपके लिये दक्षिणार्थ देता हूँ, इसलिये आप मुझको शान्ति प्रदान करें ॥ २४ ॥ हे गणेश्वर ! हे गणाध्यक्ष ! हे

गौरीपुत्र ! हे गजानन ! हे इभानन ! आपके प्रसाद से मेरा व्रत पूर्ण होवे ॥ २५ ॥ इस प्रकार अपने विभव विस्तार के अनुसार विघ्नेश का पूजन कर मय सामग्री के गणध्यक्ष को आचार्य के लिये दे देवे ॥ २६ ॥ और यह प्रार्थना करे कि—हे भगवन् ! हे ब्रह्मन् ! दक्षिणा सहित - गणराज को आप ग्रहण करें, आपके वचन से मेरा यह व्रत पूर्ण

गजानन ॥ व्रतं सम्पूर्णतां यातु त्वत्प्रसादादिभानन ॥ २५ ॥ एवं सम्पूज्य विघ्नेशं यथा-विभवविस्तरैः ॥ सोपस्करं गणाध्यक्षमाचार्याय निवेदयेत् ॥ २६ ॥ गृहाण भगवन् ब्रह्मन् गणराजं सदक्षिणम् ॥ एतत्त्वद्वचनादद्य पूर्णतां यातु मे व्रतम् ॥ २७ ॥ एवं यः पञ्चवर्षाणि कृत्वोद्यापनमाचरेत ॥ ईप्सिताँल्लभते कामान्देहान्ते शाङ्करं पदम् ॥ २८ ॥ यद्वा वर्षत्रयं कुर्यात्सर्वसिद्धिमवाप्नुयात् ॥ उद्यापनं विना यस्तु करोति व्रतमुत्तमम् ॥२९॥ सर्वंनिष्फलतां याति यथाविध्यपि यत्कृतम् ॥ उद्यापनदिने प्रातस्तिलैः स्नानं समाचरेत् ॥ ३० ॥ हेम्नः

होवे ॥२७॥ इस प्रकार जो मनुष्य पांच वर्ष तक व्रत करके उद्यापन करता है वह मनुष्य अपने मनोरथों को प्राप्त करता है और शरीरान्त होने पर शङ्कर के कैलास पद को जाता है ॥ २८ ॥ अथवा इस व्रत को तीन वर्ष तक करे तो समस्त सिद्धि को प्राप्त करता है। जो पुरुष इस व्रत को विना उद्यापन के करता है ॥ २९ ॥ तो यथाविधि व्रत करने पर भी सब निष्फल हो जाता है। उद्यापन के दिन प्रातःकाल तिलों को जल में मिलाकर स्नान करे ॥ ३० ॥ विद्वान् एक पल

(चार तोला) अथवा आधा पल अथवा चौथाई पल सुवर्ण की प्रतिमा गणेश की बनावे और पञ्चगव्य से स्नान कराकर, दूर्वा से पूजन करे ॥ ३१ ॥ भक्ति श्रद्धापूर्वक मनुष्य दस नाममन्त्रों से पूजन करे। हे गणाधीश ! हे उमापुत्र ! हे अघनाशन ! आपको नमस्कार है ॥ ३२ ॥ हे विनायक ! हे ईशपुत्र ! हे सर्वसिद्धि के प्रदायक ! हे इभवक्त्र ! हे मूषक-

पलात्तदर्धार्धात्कृत्वा गणपतिं बुधः ॥ पञ्चगव्यैस्तु संस्नाप्य दूर्वाभिस्तु प्रपूजयेत् ॥ ३१ ॥
मन्त्रैस्तु दशभिर्भक्त्या श्रद्धया सहितो नरः ॥ गणाधीश नमस्तुभ्यमुमापुत्राघनाशन ॥३२॥
विनायकेशपुत्रेति सर्वसिद्धिप्रदायक ॥ एकदन्तेभवक्त्रेति तथा मूषकवाहन ॥३३॥ कुमार-
गुरवे तुभ्यमिति नामपदैः पृथक् ॥ पूर्वेद्युरधिवास्यैव प्रातर्होमं समाचरेत् ॥३४॥ दूर्वाभिर्मो-
दकैश्चैव ग्रहहोमपुरःसरम् ॥ पूर्णाहुतिं ततो हुत्वा आचार्यादीन् प्रपूजयेत् ॥ ३५ ॥
गां सवत्सां घटोध्नीं च दद्याद्वित्तानुसारतः ॥ एवं कृते व्रते वत्स सर्वान्कामानवा-

वाहन ! ॥३३॥ हे कुमारगुरो ! आपको नमस्कार है, इन दश नामों से पृथक् २ चतुर्थ्यन्त नमः पद जोड़कर पूजन करे, प्रथम दिन अधिवासन करके दूसरे दिन प्रातःकाल हवन करे ॥ ३४ ॥ ग्रहहोम करके दूर्वा, मोदक से प्रधान हवन करे

१ गणाधीशाय नमः, उमापुत्राय नमः, अघनाशनाय नमः, विनायकाय नमः, ईशपुत्राय नमः, सर्वसिद्धिप्रदायकाय नमः, एकदन्ताय नमः, इभवक्त्राय नमः, मूषकवाहनाय नमः, कुमारगुरवे नमः।

और पूर्णाहुति देकर आचार्य आदि की पूजा करे ॥३५॥ अपने विचानुसार घट समान स्तनवाली बछड़ा सहित गौ का
दान करे। हे वत्स! इस प्रकार व्रत करने से समस्त कामना को प्राप्त करता है ॥३६॥ शिवजी सनत्कुमारजी से कहते हैं
कि हे सनत्कुमार जी! मेरे प्रियपुत्र के व्रत से मैं प्रसन्न होकर पृथिवी के समस्त सुख भोगों को देता हूँ और अन्त में

प्नुयात् ॥ ३६ ॥ मदीयप्रियपुत्रस्य व्रतेनाहं च तोषितः ॥ भुवि दत्त्वा सर्वभोगं ददाम्यन्ते
च सद्गतिम् ॥ ३७ ॥ यथा शाखाप्रशाखाभिर्दूर्वा वृद्धिं गता भवेत् ॥ तथैव पुत्रपौत्रादिस-
न्ततिर्वृद्धिगामिनी ॥३८॥ इत्येतत्कथितं गुह्यं दूर्वागणपतिव्रतम् ॥ श्रेष्ठाच्छ्रेष्ठतरं चैव कर्तव्यं
सुखमीप्सुभिः ॥ ३९ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे
दूर्वागणपतिव्रतकथनं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

सद्गति को देता हूँ ॥३७॥ जैसे शाखा प्रशाखाओं से दूर्वा बढ़ा करती है वैसे ही पुत्र पौत्र आदि सन्तति वृद्धि को प्राप्त
होती है ॥३८॥ हे सनत्कुमार जी! यह गुप्त दूर्वागणपति व्रत मैंने आपसे कहा, यह श्रेष्ठ से भी श्रेष्ठ है, सुख की इच्छा
करने वाले पुरुषों को करना चाहिये ॥ ३९ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे व्या. आ.
'विचारत्न' पं. माधवप्रसादकृतायां भाषाटीकायां दूर्वागणपतिव्रतकथनं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

ईश्वर उवाच—अतः परं प्रवक्ष्यामि श्रावणे शुक्लपक्षके ॥ पञ्चम्यां यच्च कर्तव्यं तच्छृणुष्व महामुने ॥ १ ॥ चतुर्थ्यामेकभुक्तं तु नक्तं स्यात्पञ्चमीदिने ॥ कृत्वा स्वर्णमयं नागमथवा रौप्यसम्भवम् ॥ २ ॥ कृत्वा दारुमयं वापि अथवा मृन्मयं शुभम् ॥ पञ्चम्यामर्चयेद्भक्त्या नागं पञ्चफणान्वितम् ॥ ३ ॥ द्वारस्योभयतो लेख्या गोमयेन विषोल्बणाः ॥ पूजयेद्विधिवच्चैव दधिदूर्वाङ्कुरैः शुभैः ॥ ४ ॥ करवीरैर्मालतीभिर्जातिपुष्पैश्च चम्पकैः ॥ तथा गन्धैरक्षतैश्च धूपैर्दीपैर्मनोहरैः ॥ ५ ॥ ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात् घृतमोदकपायसैः ॥ अनन्तं वासुकिं शेषं पद्मनाभं च कम्बलम् ॥ ६ ॥ तथा कर्कोटकं नाम नागमश्वं तथाष्टमम् ॥ धृतराष्ट्रं

ईश्वर सनत्कुमारजी से बोले कि हे महामुने ! अब इसके बाद श्रावणशुक्लपक्ष की पञ्चमी तिथि को जो कर्तव्य है उसको मैं कहूँगा। हे महामुने! आप उसको सुनिये ॥१॥ पञ्चमी व्रतकर्ता चतुर्थी को एकबार भोजन करे और पञ्चमी को नक्तव्रत करे तथा सुवर्ण अथवा चाँदी का नाग बनावे ॥२॥ अथवा काष्ठ का या मिट्टी का पाँच फणों से युक्त नाग की प्रतिमा बनाकर पञ्चमी के दिन भक्ति से पूजन करे ॥३॥ द्वार के दोनों तरफ गोबर से सर्प का आकार बनाने और विधिपूर्वक दही दूर्वा से पूजन करे ॥४॥ कनेर (कनेल) मालती चमेली चम्पा के पुष्पों से मनोहर गन्ध अक्षत धूप दीप से पूजन करे ॥५॥ बाद ब्राह्मणों को घृताधिक मोदक खीर भोजन करावे। अनन्त, वासुकि, शेष, पद्मनाग, कम्बल ॥ ६ ॥

कर्कोटक, अश्व, धृतराष्ट्र, शङ्खपाल, कालीय और तक्षक ॥ ७ ॥ इन नाग कुल के स्वामी को हरिद्रा (हरदी) चन्दन से भित्ति में लिखकर और नागमाता कद्रू को लिखकर पुष्पादि से पूजन करे ॥८॥ तदनन्तर विद्वान् वामी में नागों की पूजा कर यथेष्ट घृत शर्करा युक्त दूध पिलावे ॥९॥ और उस दिन लोह की कढ़ाई में कोई वस्तु न बनावे तथा नैवेद्य के लिये

शङ्खपालं कालीयं तक्षकं तथा ॥७॥ हरिद्रया चन्दनेन कुड्ये नागकुलाधिपान् ॥ नवकद्रूंश्च संलिख्य पूजयेत्कुसुमादिभिः ॥ ८ ॥ वाल्मीके पूजयेन्नागान् दुग्धं चैव तु पाययेत् ॥ घृतयुक्तं शर्कराढ्यं यथेष्टं चार्पयेद्बुधः ॥ ९ ॥ लोहपात्रे पोलिकादि न कुर्यात्तद्दिने नरः ॥ गोधूमपायसं कुर्यान्नैवेद्यार्थं तु भक्तितः ॥१०॥ भर्जिताश्चणकाश्चैव व्रीहयो यावनालिकाः ॥ अर्पणीयाश्च सर्पेभ्यः स्वयं चैव तु भक्षयेत ॥११॥ बालकेभ्योऽर्पणीयाश्च दृढा दन्ता भवन्ति हि ॥ वल्मीकस्य समीपे तु गायनं वाद्यमेव च ॥ १२ ॥ स्त्रीभिः कार्यं भूषिताभिः कार्यश्चैवोत्सवो महान् ॥ एवं कृते कदाचिच्च सर्पतो न भयं भवेत् ॥१३॥ अन्यच्च शृणुयाद्विप्रलोकाना हित-

गोधूम दूध का पायस भक्ति से बनावे ॥१०॥ तथा भूने हुए चने, धान का लावा, भूना हुआ जव (बहुरी) को सर्पों के लिये देवे और स्वयं भी इन्हीं वस्तुओं को भोजन करे ॥११॥ तथा बालकों को देवे, इस दिन बालकों को देने से उन बालकों के दांत मजबूत होते हैं। वल्मीक (वामी) के समीप गायन, वाद्य आदि उत्सव को करे ॥१२॥ और स्त्रियों को भी अपना वस्त्र भूषण आदि से शृङ्गार करके उत्सव करना चाहिये । ऐ... ने से कभी सर्प से भय नहीं होता है ॥१३॥

हे विप्र ! और भी सुनिये । हे महामुने ! मैं संसार के प्राणियों की हितकामना के लिये कुछ आपसे कहूँगा, उसको आप सुनिये ॥ १४ ॥ हे वत्स ! सर्प के काटने से मनुष्य अधोगति को जाता है । बाद तमोगुणी होकर सर्प होता है इसमें सन्देह नहीं है ॥ १५ ॥ पूर्वोक्त विधि से एक भुक्त आदि नियम को करे और ब्राह्मणों के साथ प्रेम से नाग बनाकर

काम्यया ॥ कथयिष्यामि किञ्चित्ते तच्छृणुष्व महामुने ॥ १४ ॥ नागदष्टो नरो वत्स प्राप्य मृत्युं व्रजत्यधः ॥ अधो गत्वा भवेत्सर्पस्तामसो नात्र संशयः ॥ १५ ॥ पूर्वोक्तविधिना सर्वमेकभुक्तादि कारयेत् ॥ नागनिर्माणपूजादि विप्रैः सह तथादरात् ॥१६॥ एवं द्वादशमासेषु मासि मासि व्रतं चरेत् ॥ पञ्चम्यां शुक्लपक्षस्य पूर्णे संवत्सरे पुनः ॥१७॥ ब्राह्मणांश्च यतींश्चैव नागानुद्दिश्य भोजयेत् ॥ इतिहासविदे नागं काञ्चनं रत्नचित्रितम् ॥१८॥ गां च दद्यात्सवत्सां वै सर्वोपस्करसंयुताम् ॥ दानकाले पठेद्यो हि स्मरन्नारायणं विभुम् ॥ १९ ॥ सर्वगं सर्वदा

पूजन आदि कार्य को करे ॥ १६ ॥ इस प्रकार बारह मासों में शुक्लपक्ष पञ्चमी के दिन व्रत को करे । वर्ष पूर्ण होने पर शुक्लपक्ष पञ्चमी के दिन पूजन आदि पुनः करे ॥१७॥ और नागों के प्रसन्नार्थ ब्राह्मणों को संन्यासियों को भोजन करावे तथा इतिहासवेत्ता व्यास को रत्नों से भूषित सुवर्ण के नाग को देवे ॥१८॥ सब सामग्री के वत्स (बछवा) सहित गौ का दान करे और दान के समय विभु (व्यापक) नारायण का स्मरण करता हुआ यह पढ़े ॥१९॥ जो कि सर्वत्र व्यापक है,

सब वस्तुओं का दाता है, अनन्त है और अपराजित है अर्थात् किसी से हारने वाला नहीं है उस नारायण का स्मरण करता हुआ यह कहे कि हे गोविन्द ! जो मेरे कुल में प्राणी सर्प के काटने से अधोगति को चले गये हैं ॥२०॥ वे इस व्रत और नागदान से मुक्ति के भागी होवें, इस तरह कहकर सफेद चन्दन से मिश्रित अक्षतों से युक्त ॥ २१ ॥ जल को

तारमनन्तमपराजितम् ॥ ये केचिन्मे कुले सर्पदष्टाः प्राप्ता ह्यधोगतिम् ॥ २० ॥ व्रतदानेन गोविन्द मुक्तिभाजो भवन्तु ते ॥ इत्युच्चार्याक्षतैर्युक्तं सितचन्दनमिश्रितम् ॥२१॥ वासुदेवाग्रतो भक्त्या तोये तोयं विनिक्षिपेत् ॥ अनेन विधिना सर्वे ये मरिष्यन्ति वा मृताः ॥२२॥ सर्पतस्तेऽभियास्यन्ति स्वर्गतिं मुनिसत्तम ॥ एवं सर्वान्समुद्धृत्य कुलजान्कुलनन्दन ॥२३॥ प्रयाति शिवसान्निध्यं सेव्यमानोऽप्सरोगणैः ॥ वित्तशाठ्यविहीनो यः सर्वमेतत्फलं लभेत् ॥२४॥ नक्तेन भक्तिसहिताः सितपञ्चमीषु ये पूजयन्ति सुभगान्कुसुमोपहारैः ॥ तेषां गृहेष्व-

वासुदेव के सामने जल में भक्ति से छोड़ देवे, इस प्रकार व्रत पूजन दान करने से जो प्राणी मर गये हैं अथवा मरेंगे ॥२२॥ हे मुनिसत्तम ! वे प्राणी सर्पयोनि से छूट कर स्वर्गलोक के अधिकारी होंगे । हे कुलनन्दन ! इस प्रकार व्रतकर्ता समस्त कुल का उद्धार करके ॥२३॥ अप्सरागण से सेवित होता हुआ शिवलोक (कैलास) में शिव के समीप जाकर वास करता है जो इस व्रत को धनशठता का त्याग कर करता है वह इस समस्त फल को प्राप्त करता है ॥२४॥ जो मनुष्य श्रावण-

शुक्ल पञ्चमी के दिन भक्तिपूर्वं नक्तव्रत को करता हुआ पुष्प आदि उपहारों से नागों का पूजन करते हैं उनके गृह में अभय देने वाले मणिकिरणों से विभूषित अङ्गवाले सर्प प्रसन्नचित्त होकर वास करते हैं ॥२५॥ जो ब्राह्मण गृहदान के प्रतिग्रह को लेते हैं वे घोर यमयातना को भोगकर सर्पयोनि में जाते हैं ॥२६॥ हे मुनिसत्तम ! जो अन्त समय नाग द्वारा मृत्यु के

भयदा हि भवन्ति सर्पा हर्षान्विता मणिमयूखविभासिताङ्गाः ॥ २५ ॥ प्रतिग्रहं ये च कुर्युर्गृहदानस्य वाडवाः ॥ प्रयान्ति सर्पतां तेऽपि घोरां भुक्त्वा तु यातनाम् ॥२६॥ अन्त-काले च ये केचिन्नागहत्यावशादिह ॥ मृतापत्या अपुत्रा वा भवन्ति मुनिसत्तम ॥ २७ ॥ कार्पण्यवशातः स्त्रीणां सर्पतां यान्ति केचन ॥ निक्षेपानृतवादाच्च केचित्सर्पा भवन्ति हि ॥ २८ ॥ अन्यैश्चापि निमित्तैर्ये सर्पतां यान्ति मानवाः ॥ उपायोऽयं विनिर्दिष्टः सर्वेषां निष्कृतौ परः ॥२९॥ वित्तशाठ्यविहीनेन कृता चेन्नागपञ्चमी ॥ तद्धितार्थं हरिं शेषः सर्व-

भागी होते हैं वे इस लोक में आकर मृत सन्तान वाले अथवा पुत्र हीन होते हैं ॥२७॥ कोई मनुष्य स्त्रियों के कृपणता के कारण सर्पयोनि में जाते हैं, कोई मनुष्य धरोहर रखकर झूठ बोलने से सर्पयोनि में जाते हैं ॥२८॥ जो मनुष्य अन्यान्य कारणों से सर्पयोनि को जाते हैं उन समस्त लोगों के लिये उद्धार का यह उत्तम उपाय कहा गया है ॥ २९ ॥ जो मनुष्य धनशठता को छोड़कर नागपञ्चमी का व्रत और पूजन करता है उस मनुष्य के हित के लिये समस्त नागों के मालिक शेष

भगवान् हरि (विष्णु) से ॥ ३० ॥ तथा वासुकी नाग हाथ जोड़कर सदाशिव से प्रार्थना करते हैं। इन शेष वासुकी की प्रार्थना से शिव विष्णु भगवान् प्रसन्न होकर ॥ ३१ ॥ उस प्राणी के समस्त मनोरथों को पूर्ण करते हैं और वह प्राणी नाग लोक में विविध प्रकार के बहुत सुख भोगों को भोगकर ॥ ३२ ॥ अन्त में वैकुण्ठलोक अथवा शोभमान कैलास

नागाधिपो विभुम् ॥ ३० ॥ बद्धाञ्जलिः प्रार्थयते वासुकिश्च सदाशिवम् ॥ शेषवासुकि-
विज्ञप्त्या शिवविष्णू प्रसादितौ ॥३१॥ मनोरथांस्तस्य सर्वान्कुरुतः परमेश्वरौ ॥ नागलोके
तु तान्भोगान्भुक्त्वा तु विविधान्बहून् ॥ ३२ ॥ ततो वैकुण्ठमासाद्य कैलासं वापि शोभ-
नम् ॥ शिवविष्णुगणो भूत्वा लभते परमं सुखम् ॥ ३३ ॥ एतत्ते कथितं वत्स नागानां
पञ्चमीव्रतम् ॥ अतः परं किमन्यत्त्वं श्रोतुमिच्छसि तद्वद ॥३४॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वर-
सनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये नागपञ्चमीव्रतकथनं नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

को जाकर विष्णु या शिव का गण होकर परम सुख का भागी होता है ॥ ३३ ॥ हे वत्स ! मैंने तुमसे यह नागों का नागपञ्चमी व्रत कहा, अब इसके बाद और क्या सुनने की इच्छा करते हो वह तुम मुझसे कहो ॥ ३४ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये व्या० आ० 'विद्यारत्न' पं० माधवप्रसादव्यासकृतायां भाषाटीकायां नागपञ्चमीव्रतकथनं नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

श्रीसनत्कुमारजी शिवजी से बोले कि हे देवेश ! मैंने आश्चर्यकारी नागों के पञ्चमी व्रत को सुना, हे देवेश ! अब आप षष्ठी के दिन होनेवाले व्रत को कहिये, व्रत का नाम और विधान क्या है? ॥१॥ श्रीशिवजी सनत्कुमारजी से बोले कि विपेन्द्र ! श्रावण शुक्लपक्ष की षष्ठी तिथि को महामृत्युनाशक श्रेष्ठ सूपौदन नामक व्रत करना चाहिये ॥२॥ शिवालय

सनत्कुमार उवाच—श्रुतमाश्चर्यजनकं नागानां पञ्चमीव्रतम् ॥ षष्ठ्यां कथय देवेश किं व्रतं कीदृशो विधिः ॥१॥ ईश्वर उवाच—शुक्लपक्षे श्रावणे तु षष्ठ्यां कार्यं व्रतं शुभम् ॥ सूपौदनाख्यं विपेन्द्र महामृत्युविनाशनम् ॥२॥ शिवालये गृहे वापि शिवं सम्पूज्य यत्नतः ॥ सूपौदनस्य नैवेद्यमर्पयेद्विधिसंयुतः ॥३॥ आम्रस्य लवणं शाकं साधने परिकल्पयेत् ॥ नैवेद्यस्य पदार्थैस्तु वायनं ब्राह्मणस्य च ॥४॥ य एतद्विधिना कुर्यात्तस्य पुण्यमनन्तकम् ॥ अत्रैवोदाहरन्तीममितिहासं पुरातनम् ॥५॥ राजाऽऽसीद्रोहितो नाम बहुकालमपुत्रवान् ॥ पुत्रार्थी स तपश्चक्रे महत्परमदारुणम् ॥६॥ प्रारब्धे नास्ति ते पुत्रो बोधितोऽपि स वेधसा ॥

अथवा गृह में यत्नपूर्वक शिवजी का पूजन कर विधिपूर्वक सूपौद (दाल भात) का नैवेद्य अर्पण करे ॥ ३ ॥ नमक मिश्रित आम्र का शाक रक्खे और नैवेद्य के पदार्थों का वायन ब्राह्मण को देवे ॥४॥ जो इस व्रत को विधिपूर्वक करता है उसको अनन्त पुण्य होता है। इस विषय में इस पुरातन इतिहास को लोग कहा करते हैं ॥५॥ एक रोहित नाम का राजा

बहुत काल तक पुत्रहीन था, राजा ने पुत्र के लिये परम दारुण तप को किया ॥६। ब्रह्मा ने तप से प्रकट होकर उस राजा को कहा कि हे राजन्! तुम्हारे प्रारब्ध में पुत्र नहीं है परन्तु पुत्र की अधिक लालसा के कारण हठ करता हुआ राजा तप से विरक्त नहीं हुआ ॥७॥ तब ब्रह्मा सङ्कट में पड़कर फिर प्रकट हुए और राजा से बोले कि हे राजन्! मैंने तुमको पुत्र दिया,

निर्बन्धान्न निवृत्तोऽभूत्तपसः सोऽतिलालसः ॥७॥ ततः सङ्कटमापन्नो वेधाः प्रादुरभूत्पुनः ॥ पुत्रो दत्तस्तव मया अल्पायुः स भविष्यति ॥ ८ ॥ पत्नी राजा मन्त्रयेतां वन्ध्यात्वं तु गमिष्यति ॥ अपुत्रत्वापवादश्च अलमित्येव जायताम् ॥ ९ ॥ ततो ब्रह्मवरात्पुत्रो हर्षशोकपरोऽभवत् ॥ जातकर्मादिसंस्कारांश्चक्रे राजा यथाविधि ॥१०॥ राज्ञी सा दक्षिणा नाम राजा चैव स रोहितः ॥ शिवदत्त इति प्रेम्णा चक्रतुर्नाम तस्य तौ ॥११॥ उपनीतश्च तनयो राज्ञा तु भयचेतसा ॥ विवाहं न चकारास्य भूमिपालो स्मृतेर्भयात् ॥ १२ ॥ तदा षोडशवर्षेऽसौ

परन्तु वह पुत्र अल्पायु होगा ॥ ८ ॥ इस पर रानी राजा दोनों ने विचार किया कि पुत्र होने से वन्ध्यापन तो दूर हो जायगा, और संसार में पुत्रहीन होने की निन्दा दूर हो जायगी, इतना ही बहुत है ॥ ९ ॥ बाद ब्रह्मा के वरदान से हर्ष शोक को देनेवाला पुत्र हुआ। राजा ने यथाविधि जातकर्मादि संस्कारों को किया ॥ १० ॥ उस दक्षिणा नाम की रानी और रोहित राजा ने उस पुत्र का प्रेम से शिवदत्त नाम रक्खा ॥११॥ भय करता हुआ राजा ने उस बालक का उपनयन

(जनेऊ) संस्कार किया परन्तु मृत्यु के भय से विवाह नहीं किया ॥१२॥ जब १६ वर्ष की अवस्था में बालक की मृत्यु हो गई तब उस ब्रह्मचारी बालक की मृत्यु का स्मरण कर राजा बड़ी चिन्ता करने लगा ॥ १३ ॥ जिनके कुल में ब्रह्मचारी की मृत्यु होती है उस कुल का नाश हो जाता है और वह ब्रह्मचारी भी दुर्गति का भागी होता है ॥ १४ ॥

मरणं प्राप पुत्रकः ॥ चिन्तामाप परां राजा ब्रह्मचारिमृतिं स्मरन् ॥१३॥ येषां कुले ब्रह्मचारी निधनं प्राप्नुयाद्यदि ॥ तत्कुलं क्षयमायाति सोऽपि दुर्गतिमापतेत् ॥ १४ ॥ सनत्कुमार उवाच—देवदेव जगन्नाथ परिहारोऽस्ति वा न वा ॥ अस्ति चेच्च वदस्वाद्य दोषशांतिर्यदा भवेत् ॥१५॥ ईश्वर उवाच—स्नातको ब्रह्मचारी च निधनं प्राप्नुयाद्यदि ॥ स योज्यश्चार्क-विधिना संयोज्यौ तौ परस्परम् ॥१६॥ देशकालौ तु संकीर्त्याऽमुकगोत्रादि नामतः ॥ व्रतं वैसर्गिकं कुर्वे मृतस्य ब्रह्मचारिणः ॥ १७ ॥ हेम्नाऽऽभ्युदयिकं कृत्वा प्रतिष्ठाप्य च पावकम् ॥

सनत्कुमारजी शिवजी से बोले कि हे देवदेव ! हे जगन्नाथ ! इसका कोई परिहार है या नहीं। यदि कोई परिहार है तो मुझसे कहिये जिसके करने से दोष की शान्ति होवे ॥१५॥ श्रीशिवजी सनत्कुमारजी से बोले कि हे सनत्कुमारजी ! यदि स्नातक या ब्रह्मचारी मर जावे तब अर्कविवाह विधि से संयोग कराकर वृक्ष और ब्रह्मचारी को संयुक्त कर ॥ १६ ॥ देश काल गोत्र नाम को कहकर कहे कि मैं मृत ब्रह्मचारी के दोष शान्त्यर्थं वैसर्गिक व्रत को करता हूँ ॥ १७ ॥ प्रथम

सुवर्ण से आभ्युदयिक श्राद्ध करके अग्नि की स्थापना कर आघारान्त आहुति देकर चार व्याहृतियों से हवन करे ॥१८॥ फिर व्रतानुष्ठान के श्रेष्ठ फल के लिये व्रतपति अग्नि को और विश्वेदेवा को घृत की आहुति देवे ॥१९॥ बाद स्विष्टकृत् आहुति देकर होमशेष समाप्त करे। पुनः देश काल का स्मरण कर कहे कि मैं अर्कविवाह करूँगा ॥ २० ॥ सुवर्ण से

आघारान्तं च सम्पाद्य चतुर्व्याहृतिभिर्हुनेत् ॥ १८ ॥ व्रतपत्यग्नये चैव व्रतानुष्ठानसत्फलम् ॥ सम्पादनाय विश्वेभ्यो देवेभ्यश्च हुनेद्घृतम् ॥ १९ ॥ ततः स्विष्टकृते हुत्वा होमशेषं समापयेत् ॥ देशकालौ पुनः स्मृत्वा करिष्येऽर्कविवाहकम् ॥ २० ॥ हेम्नाऽऽभ्युदयिकं कृत्वा अर्कशाखां शवं तथा ॥ लिप्त्वा तैलहरिद्राभ्यां पीतसूत्रेण वेष्टयेत् ॥ २१ ॥ पीतवस्त्रयुगेनापि अग्निं संस्थापयेत्ततः ॥ आघारान्तेऽग्नये चैव विवाहविधियोजकम् ॥ २२ ॥ बृहस्पतये कामाय चतुर्व्याहृतिभिस्तथा ॥ आज्यं स्विष्टकृतं हुत्वा कर्म चैवं समापयेत् ॥ २३ ॥ अर्कशाखां शवं चैव दाहयेच्च यथाविधि ॥ मृतस्य म्रियमाणस्य षडब्दं व्रतमाचरेत् ॥ २४ ॥ त्रिंशद्भ्यो

आभ्युदयिक श्राद्ध करके अर्क (पीपल) की शाखा और शव को हरदी तैल से लेपन कर पीत सूत्र से वेष्टन करे ॥२१॥ और दो पीत वस्त्र से आच्छादन करे, बाद अग्नि स्थापन कर विवाहविधि से आघारान्त आहुति देकर अग्नि को ॥ २२ ॥ बृहस्पति, काम को और चार व्याहृतियों से आहुति देकर स्विष्टकृत् आहुति दे, बाद कर्म समाप्त करे ॥ २३ ॥

यथाविधि अर्कशाखा (पीपर की डार) को और शव को जलावे । मृत अथवा मरने योग्य हो उसके निमित्त इस व्रत को ६ वर्ष तक करे ॥ २४ ॥ और ३० ब्रह्मचारियों को नूतन कौपीन देवे तथा एक २ हाथ के अथवा कर्णमात्र कृष्णमृग चर्म देवे ॥ २५ ॥ पादुका (खड़ाऊँ) छत्र (छाता) माला गोपीचन्दन मणी प्रवाल की माला और आभूपण

ब्रह्मचारिभ्यो दद्यात्कौपीनकान्नवान् ॥ हस्तमात्राः कर्णमात्रा दद्यात्कृष्णाजिनानि च ॥२५॥
पादुकाछत्रमाल्यानि गोपीचन्दनमेव च ॥ मणिप्रवालमाल्यं च भूषणानि समर्पयेत् ॥२६॥
एवं कृते विधानेन विघ्नः कोऽपि न जायते ॥ ईश्वर उवाच—एवं श्रुत्वा ब्राह्मणेभ्यो राजा
हृदि व्यचारयत् ॥ २७ ॥ भाति मेऽर्कविवाहोऽमनुकल्पो न मुख्यकः ॥ न ददाति प्रमी-
तस्य कन्यां कश्चिद्वधूं यतः ॥ २८ ॥ अहं राजाऽस्मि प्रददे रत्नानि च धनं बहु ॥ ददामि
तस्मै यः कश्चिद्दास्यतेऽस्य वधूं यदि ॥२९॥ विप्रः कश्चित्पुरे तस्मिन्नासीद्देशान्तरं गतः ॥

अर्पण करे ॥ २६ ॥ इस प्रकार विधि से करने पर कोई विघ्न नहीं होता । शिवजी सनत्कुमारजी से बोले कि हे विप्रेन्द्र ! इस विधान को ब्राह्मणों से सुनकर राजा अपने हृदय में विचार करने लगा ॥ २७ ॥ कि यह अनुकल्प (गौण) अर्क-विवाह मुझे ठीक नहीं जँचता है, मुख्य विवाह होना ठीक है । जिस कारण मृत प्राणी के लिये कोई कन्या को नहीं देता है ॥ २८ ॥ सो मैं राजा हूँ जो इस ब्रह्मचारी के निमित्त कन्या को देवेगा उसके लिये मैं रत्न और बहुत सा धन

दूँगा ॥ २९ ॥ इस समाचार को पाकर उस राजा के पुर में एक ब्राह्मण रहता था जो कि देशान्तर चला गया था उस ब्राह्मण की पहिली मृत स्त्री से एक कन्या थी ॥ ३० ॥ और दूसरे ब्याह की स्त्री दुष्टा थी उसने सवत के डाह से तथा बहुत धन के लोभ से सवत की कन्या को देने का विचार किया ॥ ३१ ॥ और उसने एक लक्ष रुपया लेकर दशवर्ष की

तस्य पूर्वंमृतायास्तु भार्यायाः कन्यका शुभा ॥ ३० ॥ आसीद्द्वितीया भार्या तु दुष्टचित्ता व्यचारयत् ॥ सपत्नीद्वेषतश्चापि बहुद्रव्यस्य लोभतः ॥ ३१ ॥ दशवर्षा तु सा बाला दीना मातृवशंगता ॥ सापत्नमाता सा लक्षं गृहीत्वा प्रददौ सुताम् ॥ ३२ ॥ कन्यां गृहीत्वा जग्मुस्ते श्मशानं सरितस्तटे ॥ विवाहं चक्रुश्चैव शवेन सह कन्यकाम् ॥३३॥ भोजयित्वा विधानेन दग्धुं समुपचक्रमुः ॥ ततः सा कन्यकाऽपृच्छत्किमिदं क्रियते जनाः ॥ ३४ ॥ ततस्ते दुःखिताः प्रोचुर्दह्यतेऽयं पतिस्तव ॥ ततः प्रोवाच सा भीता रुदती बालभावतः

बाला दीन कन्या को मृत राजपुत्र के लिये दे दिया ॥ ३२ ॥ उस कन्या को लेकर वे लोग नदी के तट पर श्मशान भूमि को गये और उस शव के साथ कन्या का विवाह कर दिया ॥ ३३ ॥ जब लोगों ने विधिपूर्वक शव के साथ सम्बन्ध कराकर दग्ध करने को उद्यत हुए तब कन्या ने कहा कि आपलोग यह क्या कर रहे हैं ॥ ३४ ॥ कन्या के इस वचन को सुनकर वे लोग दुःखित होकर बोले कि यह तुम्हारा पति है इसके मृत शरीर को जला रहे हैं, यह सुनकर

कन्या बालकपन स्वभाव से डरी और रोदन करती हुई ॥ ३५ ॥ बोली कि इस मेरे पति को क्यों दग्ध करते हो ? मैं दग्ध करने को नहीं दूँगी। आप सब लोग यहाँ से चले जायँ, मैं यहां अकेली रहूँगी ॥ ३६ ॥ जब यह पतिदेव उठेंगे तब इनके साथ जाऊँगी, इस प्रकार कन्या के हठ को देखकर सभी लोग करुणा से दीनचित्त हो गये ॥ ३७ ॥ वहां पर

॥३५॥ पतिः किं दह्यते मेऽसौ दग्धुं नैव ददाम्यहम् ॥ गच्छध्वं सहिताः सर्वे तिष्ठाम्यत्राहमेकिका ॥ ३६ ॥ पत्या सह गमिष्यामि उत्तिष्ठति यदा ह्यसौ ॥ दृष्ट्वा तस्यास्तु निर्बन्धं करुणादीनचेतसः ॥ ३७ ॥ प्रारब्धवादिनो वृद्धाः केचित्तत्रैवमूचिरे ॥ अहो किं वा भावि कर्म ज्ञायते नैव कस्यचित् ॥ ३८ ॥ दीनपालः कृपालुश्च भगवान् किं करिष्यति ॥ निराश्रिता च कन्येयं मातुः सापत्नभावतः ॥३९॥ विक्रीता स्यादतो देवः कदाचित्पालको भवेत् ॥ अतोऽस्माभिरशक्येयं दग्धुं चायं तथा शवः ॥४०॥ अतोऽस्माभिश्च गतव्यं सर्वेषां रोचते यदि ॥ सम्मन्त्र्यैवं तु सर्वेऽपि गतास्ते नगरं प्रति ॥ ४१ ॥ सैका शिवं पार्वतीं च

प्रारब्ध (दैव) वादी जो वृद्ध थे उन लोगों ने कहा कि अहो ! अति कष्ट है कि किसी का भावि कर्म नहीं जाना जा सकता ॥ ३८ ॥ वह दीन रक्षक और दयालु भगवन् क्या करेगा ? यह आश्रयहीन कन्या सापत्नभाव (सौतडाह) के कारण दूसरी माता से ॥३९॥ विक्री कर दी गई है इसलिये वह देव कदाचित् रक्षक हो जाय, अतः यह कन्या और यह

मृत राजकुमार हम लोगों के जलाने योग्य नहीं है ॥४०॥ यदि हमारी बात आप लोगों को रुचती हो तो हम लोग यहाँ से घर को चलें, बाद विचार निश्चय कर सब लोग नगर के प्रति चले गये ॥ ४१ ॥ भय से विह्वल वहाँ वह अकेली कन्या शिव तथा पार्वती का स्मरण करती हुई बालभाव के कारण अपिरिचित होकर बोली कि यह क्या है ? इत्यादि

स्मरन्ती भयविह्वला ॥ अजानती बालभावात्किमेतदिति विह्वला ॥ ४२ ॥ तस्याः संस्मरणाद्दैन्यात्सर्वज्ञौ पार्वतीशिवौ ॥ करुणापूर्णहृदयौ तत्राजग्मतुरञ्जसा ॥४३॥ वृषारूढौ तु तौ दृष्ट्वा दम्पती तेजसां निधि ॥ ननाम दण्डवद्भूमौ न जानत्यपि देवते ॥४४॥ आश्वासनं परं लेभे आगता सङ्गतिस्त्विति ॥ उवाच च पतिः किं मे जागृतो नैव जायते ॥ ४५ ॥ प्रसन्नौ बालभावेन दयया च परिप्लुतौ ॥ ऊचतुस्ते जनन्यास्तु व्रतं सूपौदनाभिधम् ॥ ४६ ॥ व्रतं सङ्कल्प्य सतिलं गृहीत्वाऽस्य प्रयच्छ मे ॥ ब्रूहि यन्मज्जनन्यास्ति व्रतं

कहकर विह्वल हो गई ॥ ४२ ॥ उस कन्या के स्मरण करने से करुणा से पूर्ण सर्वज्ञ पार्वती शङ्कर शीघ्र वहाँ पर आगये ॥ ४३ ॥ तेज के निधि बैल पर सवार पार्वती शङ्कर को देखकर प्रणाम किया परन्तु ये देवता हैं इस बात को नहीं जानती है ॥ ४४ ॥ उन पार्वती शङ्कर के आने से कन्या को बहुत आश्वासन मिला और उनसे बोली कि क्या मेरा पति जागृत न होवेगा ? ॥ ४५ ॥ उस कन्या के बालभाव के कारण दयार्द्र होकर पार्वती शङ्कर बोले कि हे कन्ये ! तुम्हारी

माता ने सूपौदन नामक व्रत को किया है ॥ ४६ ॥ उस व्रत का फल तिल जल लेकर सङ्कल्प करके अपने पति को दे और मुझसे यह कहो कि मेरी माताने जो सूपौदन नामक व्रत को किया है ॥ ४७ ॥ उस व्रत के प्रभाव से मेरा पति उठकर खड़ा हो जाय। उस कन्या ने पार्वती शङ्कर के कहे अनुसार सब किया तथा सूपौदन नामक व्रत के प्रभाव से शिवदत्त उठ खड़ा हो गया ॥ ४८ ॥ बाद पार्वती शङ्कर उस कन्या को व्रत का उपदेश देकर अन्तर्धान हो गये।

सूपौदनाभिधम् ॥४७॥ कृतं तस्य प्रभावेण उत्तिष्ठतु पतिर्मम ॥ तथा कृतं तथा सर्वं शिवदत्तस्तथोत्थितः ॥ ४८ ॥ उपदिश्य व्रतं तस्यास्तदान्तर्दधतुः शिवौ ॥ शिवदत्तस्तु पप्रच्छ का त्वं केहागतोऽस्म्यहम् ॥४९॥ सा चाह किञ्चिद्वृत्तान्तं रात्रिश्चापि गताऽभवत् ॥ प्रातर्नदीतीरगता जना राज्ञे न्यवेदयन् ॥ ५० ॥ राजन् पुत्रः स्नुषा चैव नदीतीरेऽवतिष्ठतः ॥ प्रामाणिकेभ्यः श्रुत्वाऽसौ हर्षं लोकोत्तरं ययौ ॥ ५१ ॥ हर्षभेरीं वादयन् स नदीतीरे समा-

बाद शङ्कर के चले जाने पर शिवदत्त ने कन्या से पूछा कि तू कौन है ? और मैं यहाँ कैसे आया ? ॥ ४९ ॥ तब कन्या ने शिवदत्त से कुछ वृत्तान्त को कहा और रात्रि भी बीत गई। प्रातःकाल होने पर नदी तट पर आये हुये मनुष्यों ने राजा से जाकर सब वृत्तान्त कहा ॥ ५० ॥ हे राजन् ! आपका पुत्र और पुत्रवधू नदी के तट पर स्थित हैं, प्रामाणिक लोगों से इस बात को सुनकर लोकोत्तर (अत्यन्त) हर्ष से युक्त राजा ॥ ५१ ॥ हर्ष की भेरी (नगाड़ा) को बजवाता

हुआ नदीतट पर आया, और सभी प्रसन्न होकर राजा की प्रशंसा करने लगे ॥ ५२ ॥ कि हे राजन् ! यह आपका मृत पुत्र काल के गृह से पुनः लौटकर आगया। तब राजा ने पुत्रवधू की प्रशंसा की और कहा कि ये लोग मेरी प्रशंसा क्यों कर रहे हैं ॥ ५३ ॥ मैं तो बड़ा मन्दभाग्य वाला अधम हूँ, यह सुभगा मेरी पुत्रवधू धन्य है, इसके पुण्य प्रभाव से यह

ययौ ॥ जनाश्च मुदिताः सर्वे प्रशशंसुर्जनाऽधिपम् ॥ ५२ ॥ राजन् गतः कालगृहं पुत्रस्ते पुनरागतः ॥ प्रशशंस स्नुषां राजा किमहं शस्यते जनैः ॥ ५३ ॥ दुरदृष्टोऽधमश्चाहं धन्येयं सुभगा स्नुषा ॥ एतत्पुण्यप्रभावेण पुत्रोऽयं जीवितो मम ॥ ५४ ॥ एवं स्नुषां सुसम्भाव्य राजा ब्राह्मणसत्तमान् ॥ पूजयामास विभवैर्दानमानपुरःसरम् ॥ ५५ ॥ बहिर्नीतप्रमीतस्य पुनर्ग्रामप्रवेशने ॥ विधिं ब्राह्मणसंदिष्टं शान्तिकं विधिनाऽऽचरत् ॥ ५६ ॥ एतत्ते कथितं वत्स व्रतं सूपौदनाभिधम् ॥ पञ्चवर्षाणि कृत्वैतत्पश्चादुद्यापनं चरेत् ॥५७॥ प्रतिमां पार्वती-

मेरा पुत्र जीवित हुआ ॥ ५४ ॥ इस प्रकार राजा ने पुत्रवधू की प्रशंसा कर श्रेष्ठ ब्राह्मणों का विभव दान मान से पूजन किया ॥ ५५ ॥ और मृत पुरुष को ग्राम से बाहर कर देने पर पुनः जीवित होने पर ग्रामप्रवेश के लिये ब्राह्मण के कथनानुसार शान्तिक विधि को विधान से किया ॥ ५६ ॥ हे वत्स ! मैंने यह सूपौदन नामक व्रत को तुमसे कहा, इस व्रत को पाँच वर्ष करके बाद उद्यापन को करे ॥ ५७ ॥ पार्वती शङ्कर का प्रतिदिन पूजन करे और चरु आम्रपत्रों से

प्रातःकाल के समय हवन करे ॥५८॥ तथा व्रत में उक्त विधान से नैवेद्य और वायन को देवे। इस प्रकार व्रत करने से चिरायु पुत्र को प्राप्त कर अन्त में शिवपुर को जाता है॥५६॥ श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये

शस्य अर्चयेत्प्रतिवासरे ॥ प्रातर्होमं प्रकुर्वीत चरुणाऽऽज्यदलैस्तथा ॥ ५८ ॥ नैवेद्यं वायनं चैव व्रतोक्तविधिना चरेत् ॥ पुत्रं चिरायुषं लब्ध्वा अन्ते शिवपुरं व्रजेत् ॥ ५६ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये सूपौदनषष्ठीव्रतकथनं नाम पञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

व्या. आ. 'विद्यारत्न' पं. माधवप्रसादव्यासकृतायां भाषाटीकायां सूपौदनषष्ठीव्रतकथनं नाम पञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

शिवजी बोले कि हे सनत्कुमारजी ! अब इसके बाद में शीतला सप्तमी के व्रत को कहूंगा, श्रावणमास शुक्लपक्ष में सप्तमी के दिन इस व्रत को करे ॥१॥ प्रथम कुड्य (दीवार) में वावली को लिखकर उसमें अशरीरी संज्ञक दिव्य रूपधारी गिनती के सात जलदेवता को लिखे ॥२॥ दो बालकों से युक्त पुरुषत्रय संज्ञावाली नारी, एक घोड़ा, एक बैल, नरवाहन

ईश्वर उवाच—अतःपरं प्रवक्ष्यामि शीतलासप्तमीव्रतम् ॥ श्रावणे शुक्लपक्षे तु सप्तम्याचरेद्व्रतम् ॥ १ ॥ कुड्ये लिखित्वा वापीं तु तथा सलिलदेवताः ॥ सप्तसंख्या दिव्यरूपा अशरीरिणसंज्ञकाः ॥२॥ बालद्वययुता नारी पुरुषत्रयसंज्ञिता ॥ अश्वश्च वृषभश्चैव शिविका नरवाहना ॥ ३ ॥ पूजा वार्देवतानां स्यात् षोडशैरुपचारकैः ॥ दध्योदनस्य नैवेद्यं साधने कर्कटीफलम् ॥ ४ ॥ द्विजाय वायनं दद्यान्नैवेद्यस्य पदार्थकैः सप्तवर्षाणि कृत्वैवं सुवासिन्यश्च सप्त वै ॥ ५ ॥ प्रत्यब्दं भोजनीयाः स्युः पश्चादुद्यापनं चरेत् ॥ वार्देवतानां प्रतिमा एकस्मिन्स्वर्णपात्रके ॥ ६ ॥ बालेन सहिताः पूज्याः सायं पूर्वेऽह्नि भक्तितः ॥ प्रातर्होमं च

सहित पालकी को लिखे ॥३॥ बाद षोडशोपचार से जलदेवताओं का पूजा करे और ककड़ी दही ओदन (भात) का नैवेद्य अर्पण करे ॥४॥ और नैवेद्य के पदार्थों का वायन ब्राह्मण के लिए देवे, इस प्रकार सात वर्ष तक व्रत को करे और प्रतिवर्ष सात सोहागिन को ॥५॥ भोजन करावे, बाद उद्यापन को करे। एक सुवर्णपात्र में ७ जलदेवताओं की प्रतिमा

रखकर ॥६॥ बालक के साथ उन प्रतिमा में पहिले दिन सायंकाल के समय भक्ति से पूजन करे, दूसरे दिन प्रातःकाल ग्रहहोम पूर्वक चरु से हवन करे ॥ ७ ॥ पहिले इस व्रत को जिन लोगों ने किया है उनको फल भी मिला है उसको आप श्रवण करें। सौराष्ट्र देश में शोभन नामक नगर था ॥ ८ ॥ उस नगर में एक धनिक समस्त धर्म का पालन करने

चरुणा ग्रहहोमपुरःसरम् ॥ ७ ॥ व्रतमेत्पुरा चीर्णं फलितं च तथा शृणु ॥ सौराष्ट्रदेशे नगरमासीच्छोभनसंज्ञितम् ॥८॥ तत्रासीद्धनिकः कश्चित्सर्वधर्मपरायणः ॥ स वापीः खानयामास निर्जले विजने वने ॥ ९ ॥ पादमार्गं शुभां रम्यां बहुद्रव्यव्ययेन सः ॥ पशूनां जलपानाय अपि योग्यां दृढाश्मभिः ॥१०॥ बद्धां चिरस्थायिनीं च बहिः प्रान्ते द्रुमैर्युतम् ॥ आरामं कारयामास श्रान्तपान्थसुखाय च ॥ ११ ॥ परं शुष्कं जलं तत्र न लब्धं बिन्दुमात्रकम् ॥ प्रयासो मे वृथा जातो द्रव्यं च व्ययितं वृथा ॥१२॥ इति चिन्तापरश्चासीद्धनिको

वाला रहता था उसने निर्जल और जनशून्य वन में बावली खुदवाई ॥९॥ और उस बावली में उतर कर पशुओं के जल पीने के निमित्त बहुत धन खर्चकर दृढ़ पत्थरों के सुन्दर पादमार्ग (सीढ़ी) बनवाई ॥ १० ॥ जो अधिक समय तक रहने वाला और मजबूत बँधा था जिसके चारो तरफ थके हुए पथिकों के निमित्त वृक्षों से युक्त आराम (बगीचा) बनवाया ॥११॥ परन्तु उस बावली में जल सूख गया, बिन्दुमात्र भी जल नहीं मिला। उस समय धनिक ने दुखी होकर कहा

कि मेरा परिश्रम वृथा और व्यर्थ में धन भी खर्च हुआ ॥ १२ ॥ इस प्रकार वह धनद नामक धनिक चिन्तित हो गया और रात्रि के समय उस बावली के समीप सो गया उस धनद को स्वप्न में जल देवताओं ने ॥ १३ ॥ आकर कहा कि हे धनद ! जल निकलने का उपाय सुनो; यदि तुम अपने पौत्र को आदरपूर्वक हम लोगों के निमित्त बलि करके दे

धनदाभिधः ॥ रात्रौ तत्रैव सुष्वाप स्वप्ने तं जलदेवताः ॥ १३ ॥ आगत्य कथयामासुः शृणूपायं जलागमे ॥ दास्यसे यदि ते पौत्रं बलिमस्माकमादृतः ॥ १४ ॥ तदैव वापिकेयं ते जलपूर्णा भविष्यति ॥ दृष्ट्वैवं गृहमागत्य पुत्रायाकथयद्धनी ॥ १५ ॥ द्रविणो नाम तत्पुत्रः सोऽपि धर्मपरायणः ॥ शृणुष्व मम वत्सस्य भवान्मज्जनको यतः ॥१६॥ तत्राप्येतद्धर्मकार्यं किं विचार्यमिह त्वया ॥ स्थावरश्चास्ति धर्मोऽयं नश्वरं च सुतादिकम् ॥१७॥ अल्पमौल्यं महावस्तु लाभोऽयं दुर्लभः क्रयः ॥ शीतांशुश्चैव चण्डांशुर्वर्तेते तनयौ मम ॥ १८ ॥ शीतां-

दोगे ॥ १४ ॥ तो उसी समय यह बावली जल से पूर्ण हो जायगी, इस प्रकार स्वप्न को देखकर धनिक ने घर आकर अपने पुत्र से सब स्वप्न कहा ॥ १५ ॥ उस धनद का पुत्र द्रविण नामक था वह भी धर्म में तत्पर रहा करता था उसने पिता से कहा कि पिता जी ! आप मेरे और मेरे पुत्र के भी जनक हैं ॥ १६ ॥ उस पर यह धर्मकार्य है इस विषय में आपको विचार करना क्या है ? । धर्म स्थायी है और पुत्रादिक सब नाशशील हैं ॥ १७ ॥ थोड़े मूल्य से

शुर्नाम ज्येष्ठोऽयं बलिर्देयोऽविचारतः॥ मन्त्रोऽयं सर्वथा स्त्रीभिर्ज्ञातव्यो नैव भोः पितः ॥१६॥ उपायस्तत्र मत्पत्नी गर्भिणी वर्ततेऽधुना ॥ आसन्नप्रसवा चैव, गन्त्र्यसौ स्वपितुर्गृहे ॥ २० ॥ प्रसूत्यर्थं कनिष्ठोऽसौ तया सह गमिष्यति ॥ तदा कार्यमिदं तात निर्विघ्नेन भविष्यति ॥२१॥ इति श्रुत्वा पुत्रवाक्यं पिता तं स तुतोष ह ॥ धन्योऽसि पुत्र धन्योऽहं त्वया पुत्रेण पुत्रवान् ॥ २२ ॥ एतस्मिन्नन्तरे तस्याः सुशीलायाः पितुर्गृहात् ॥ आकारणं समगमत्तदा सा च जगाम ह ॥ ज्येष्ठोऽस्माकं समीपेऽस्तु कनिष्ठो नीयतां त्वया ॥ सा तथैव

महान् वस्तु का मिलना दुर्लभ लाभ कहा जाता है। मेरे शीतांशु चण्डांशु नामक दो पुत्र हैं ॥ १८ ॥ सो ज्येष्ठ शीतांशु नामक पुत्र को विना विचार किये बलि दे देवें परन्तु हे पिता जी ! इस विचार को उवंजा स्त्रियों से गुप्त रखना चाहिए ॥ १६ ॥ तथा गुप्त रखने का उपाय यह है कि मेरी स्त्री गर्भिणी है प्रसवकाल समीप आ गया है वह अपने पिता के घर जायगी ॥२०॥ प्रसव के बाद आयेगी और उसके साथ छोटा लड़का भी जायगा उस समय हे तात ! यह कार्य निर्विघ्न हो जायगा ॥ २१ ॥ वह धनद इस प्रकार अपने पुत्र का वचन सुनकर प्रसन्न हुआ और बोला कि हे पुत्र ! तुम धन्य हो और तुम मेरे पुत्र हो इसलिए मैं भी धन्य हूँ तथा मैं अपने को पुत्रवान् समझता हूँ ॥ २२ ॥ इसी बीच में उस सुशीला स्त्री के पिता के घर से बुलावा आया और वह सुशीला भी पिता के घर चली गई ॥ २३ ॥

उस समय द्रविण ने स्त्री से यह कहा कि यह बड़ा लड़का मेरे पास रहेगा और छोटा तुम्हारे साथ जायगा, सुशीला ने पति तथा श्वसुर के कहने से वैसा ही किया ॥ २४ ॥ बाद उसके चले जाने पर दोनों धनद द्रविण पिता पुत्र ने उस शीतांशु बालक के शरीर में तैल लगाकर स्नान कराया और सुन्दर वस्त्र भूषण भूषित किया ॥ २५ ॥ पूर्वाषाढ़ा वरुण नक्षत्र के आने पर प्रसन्नता पूर्वक उस बावली के तट पर उस बालक को खड़ा किया और दोनों ने यह कहा कि इस

सती चक्रे भर्तृश्वशुरवाक्यतः ॥ २४ ॥ तदा तौ पुत्रपितरौ तलेनाभ्यज्य बालकम् ॥
स्नापयित्वा सुवस्त्रैश्च भूषणैः समलंकृतम् ॥ २५ ॥ पूर्वाषाढावारुणर्क्षे स्थापयामासतुर्मुदा ॥
वाप्या वा देवतास्तुष्टा भवन्त्विति समूचतुः ॥२६॥ तदैव वापी पूर्णाऽभूत्सुधातुल्येन वारिणा ॥
उभौ गृहं जग्मतुस्तौ हर्षशोकसमन्वितौ ॥ २७ ॥ सासुशीला पितुर्गेहे सूत पुत्रं तृतीय-
कम् ॥ मासत्रयोत्तरं गेहं निजं गतुं च निर्गता ॥ २८ ॥ वापीसमीपं प्राप्ताऽसौ वापीं पूर्णां
ददर्श ह ॥ विस्मयं परमं प्राप तत्र स्नानं चकार ह ॥२९॥ श्वशुरस्य प्रयासो मे सार्थकश्च

पुत्र के बलिदान से जलदेवता प्रसन्न होवैं ॥ २६ ॥ उसी समय उस पुत्र की बलि से अमृत तुल्य जल से बावली पूर्ण हो गई । बाद दोनों बावली को जलपूर्ण देखकर प्रसन्न तथा पुत्रनाश से शोकयुक्त होकर अपने गृह को आये ॥ २७ ॥ उस सुशीला ने अपने पिता के घर तृतीय पुत्र को पैदा किया और तीन महीना बीतने पर अपने घर चलने को निकली ॥ २८ ॥ जब वह उस बावली के समीप पहुंची तो उसने उस बावली को जल से पूर्ण देखा तथा आश्चर्य करती हुई

उसमें स्नान किया ॥ २० ॥ और कहा कि मेरे श्वसुर का प्रयास यथा धन खर्च सार्थक हुआ । उस दिन श्रावण मास शुक्ल पक्ष की सप्तमी तिथि रही ॥ ३० ॥ सुशीला ने शीतला का शुभ व्रत को किया वहाँ पर दही चावल मँगाकर सुन्दर पाक तैयार किया ॥३१॥ और जलदेवता का पूजन करके दही चावल ककड़ी फल का नैवेद्य अर्पण किया तथा ब्राह्मण

धनव्ययः ॥ तद्दिने सप्तमी चासीच्छ्रावणे शुक्लपक्षके ॥ ३० ॥ सुशीलाया व्रतं चासीच्छीतलासंज्ञितं शुभम् ॥ सा तत्र पाकमकरोदोदनं चानयद्दधि ॥ ३१ ॥ वार्देवताश्च सम्पूज्य दध्यन्नं कर्कटीफलम् ॥ नैवेद्यं कल्पयामास दत्त्वा विप्राय वायनम् ॥ ३२ ॥ स्वयं तदेव बुभुजे सहिता सह वासिभिः ॥ ततो योजनमात्रं तु तस्या ग्रामो बभूव ह ॥ ३३ ॥ ततः सा निर्गता चासीदारुह्य शिबिकां शुभाम् ॥ बालकद्वयसंयुक्ता तदा ता जलदेवताः ॥ ३४ ॥ ऊचुः परस्परं चास्याः पुत्रो देयो यतोऽनया ॥ अस्माकं व्रतमाचीर्णं प्रज्ञा च विहिता परा ॥ ३५ ॥ एतद्व्रतप्रभावेण नूतनो दीयते सुतः ॥ पूर्वजातो यदि ग्राह्यो

को वायन दिया ॥ ३२ ॥ और स्वयं भी अपने साथ लोगों के उस दही चावल ककड़ी का भोजन किया । वहाँ से सुशीला का ग्राम एक योजन (४ कोश) पर था ॥३३॥ वहाँ से जब वह सुशीला सुन्दर पालकी पर सवार होकर घर के तरफ दोनों बालकों के साथ चली, तब वे जलदेवता ॥३४॥ परस्पर कहने लगे कि इसका पुत्र दे देना चाहिये, क्योंकि

इसने हमलोगों का व्रत किया और बड़ा बुद्धि के साथ किया ॥ ३५ ॥ इस व्रत के प्रभाव से नूतन पुत्र दिया जाय। यदि पहिले का उत्पन्न पुत्र नहीं दिया तो हमलोगों की प्रसन्नता का फल क्या होगा ? ॥ ३६ ॥ इस प्रकार दयालु जलदेवताओं ने परस्पर बात-चीत कर उस बालक को जल के बाहर निकाल माता को दिखाकर विदा किया ॥ ३७ ॥ माता को देखकर बालक माता के पीछे दौड़ता हुआ हे माँ! कहकर पुकारने लगा, बाद पुत्र के शब्द को सुनकर माता ने

ह्यस्मद्घोषस्य किं फलम् ॥ ३६ ॥ विसर्जयामासुरिति उक्त्वाऽन्योन्यं दयालवः ॥ मातरं दर्शयामासुर्गोप्या निष्कास्य बाह्यतः ॥ ३७ ॥ अधावत्पृष्ठतो मातुर्मातरित्याह्वयञ्छिशुः ॥ संश्रुत्य पुत्रशब्दं सा परावृत्याऽवलोकयत् ॥३८॥ दृष्ट्वा सा नन्दनं स्वीयं चकिता साऽभवद्धृदि ॥ स्थाप्याङ्के मूर्ध्न्यवघ्राय किञ्चित्पप्रच्छ नो सुतम् ॥ ३९ ॥ बिभेष्यतीति बुद्ध्या सा हृदये त्वन्वचिन्तयत् ॥ तस्करैर्यदि वाऽऽनीतस्तर्ह्यलङ्कारवान्कथम् ॥ ४० ॥ पिशाचैर्यदि वाऽऽनीतो मोचितश्च पुनः कथम् ॥ चिन्तासमुद्रे मग्नाः स्युर्गृहसम्बन्धिनो जनाः ॥ ४१ ॥

लौटकर देखा ॥३८॥ सुशीला अपने पुत्र को देखकर हृदय से चकित होती हुई पुत्र को गोद में बैठाकर शिर को सूँघने लगी, परन्तु पुत्र से कुछ पूछा नहीं ॥ ३९ ॥ कि यदि इस बालक से पूछती हूँ तो यह डर जायगा। और अपने मन में यह विचार करने लगी कि यदि इस बालक को यहाँ चोर उठा ले आये होते तो इसका अलङ्कारों से भूपित होना सम्भव कैसे हो सकता था ॥ ४० ॥ यदि पिशाचों ने यहाँ लाया होता तो पुनः छोड़ा कैसे ? और घर के सम्बन्धी लोग चिन्तारूपी

समुद्र में डूब रहे होंगे ॥४१॥ इस प्रकार चिन्ता करती हुई सुशीला अपने घर के द्वार पर आ गई तथा ग्रामवासी लोगों ने सुशीला के आने का समाचार कहा ॥४२॥ धनद द्रविण दोनों पिता पुत्र इस समाचार को सुनकर चिन्तित हो गये कि सुशीला क्या कहेगी ? और उसके पूछने पर हमलोग क्या कहेंगे ? ॥ ४३ ॥ इसी बीच में तीन पुत्रों को साथ लिये

इत्येवं चिन्तयन्ती सा नगरद्वारमाप सा ॥ जनाः संकथयामासुः सुशीला सुसमागता ॥४२॥
श्रुत्वा तु पितृपुत्रौ तौ परां चिन्तामवापतुः ॥ किं वदिष्यति चास्माकमस्माभिर्वा किमुच्यताम्
॥४३॥ एतस्मिन्नन्तरे प्राप्ता पुत्रत्रयसमन्विता ॥ ज्येष्ठं दृष्ट्वा तु तं बालं श्वशुरश्च पतिश्च सः
॥४४॥ आश्चर्यं परमं प्राप परां मुदमवाप च ॥ त्वया किं पुण्यमाचीर्णं व्रतं वापि शुचिस्मिते
॥ ४५ ॥ पतिव्रताऽसि धन्याऽसि पुण्यवत्यसि भामिनि ॥ मासद्वयं तु सञ्जातमकस्माच्चा-
स्त्वभूच्छिशुः ॥ ४६ ॥ स च त्वया पुनर्लब्धो वापी पूर्णाऽपि चाऽभवत् ॥ एकपुत्रा
गताऽस्तत्त्वमागताऽसि त्रयान्विता ॥४७॥ त्वयोद्धृतं कुलं सुभ्रु किं त्वां स्तौमि शुभानने ॥

सुशीला अपने घर पहुँच गई। श्वसुर और पति ने ज्येष्ठ शीतांशु पुत्र को देखकर ॥ ४४ ॥ अत्यन्त आश्चर्य किया और प्रसन्न होकर पूछा कि हे शुचिस्मिते ! तुमने किस पुण्य या व्रत को किया ? ॥४५ हे भामिनी ! तुम पतिव्रता हो, धन्य हो और पुण्यवती हो, इस शीतांशु को मरे आज दो मास बीत गये ॥४६॥ सो तुमने पुनः शीतांशु को पास किया और बावली भी जल से पूर्ण हो गई। यहाँ से जाते समय एक पुत्र को लेकर गई और आने के समय तीन पुत्रों को लेकर

आई ॥४७॥ हे सुभ्रू ! तुमने कुल का उद्धार किया है शुभानने ! तुम्हारी मैं क्या स्तुति करूँ । इस प्रकार श्वसुर ने प्रशंसा की और पति ने प्रेम से सुशीला को देखा ॥ ४८ ॥ सास ने भी प्रशंसा की, तब सुशीला ने प्रसन्न होकर कहा कि यह सब मार्ग के पुण्य का फल है । इस समाचार को सुनकर सभी इस लोक के इच्छित भोग को भोगकर परम आनन्द को प्राप्त हुए ॥ ४९ ॥ हे वत्स ! तुमसे यह शीतला सप्तमी का व्रत कहा । इस व्रत में शीतल (ठण्ढा) दही चावल, शीतल

श्वशुरेण स्तुतैवं सा पत्या प्रेम्णा च वीक्षिता ॥४८॥ श्वश्र्वा चानन्दितोवाच पुण्यं मार्गस्य सर्वशः ॥ प्रापुः सर्वेऽपि चानन्दं भुक्त्वा भोगान्यथेप्सितान् ॥ ४९ ॥ इत्येतत्कथितं वत्स शीतलासप्तमीव्रतम् ॥ दध्योदनं शीतलं च शीतलं कर्कटीफलम् ॥५०॥ वापीजलं शीतलं तु शीतलाश्चापि देवताः ॥ तापत्रयस्य सन्तापाच्छीतलाव्रतिनस्ततः ॥ ५१ ॥ अतो हेतोः सप्तमीयं शीतलेति यथार्थिका ॥५२॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये शीतलासप्तमीव्रतकथनं नाम षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

ककड़ी का फल ॥५०॥ शीतल बावली का जल और शीतला देवता कहे गये हैं इसलिये इस व्रत को करनेवाले तापत्रय (आधिभौतिक, आधिदैविक, आध्यात्मिक) से शीतल (मुक्त) हो जाते हैं ॥ ५१ ॥ इसीलिये श्रावणमास शुक्ल पक्ष की सप्तमी का यथार्थ शीतला सप्तमी नाम पड़ा है ॥५२॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे सनत्कुमारेश्वरसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये व्या. आ. 'विद्यारत्न' पं० माधवप्रसादव्यासकृतायां भाषाटीकायां शीतलासप्तमीव्रतकथनं नाम षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

श्रीशिवजी सनत्कुमारजी से बोले कि हे देवेश ! अब शुभ पवित्रारोपण को कहूँगा । प्रथम सप्तमी के दिन अधिवासन करके अष्टमी के दिन उस पवित्र को अर्पण करे ॥ १ ॥ जो प्राणी पवित्र को ननवाता है उसके पुण्य फल को सुनिये । हे विप्र ! वह समस्त यज्ञ, व्रत दान और समस्त तीर्थों में अभिषेक (स्नान) के फल को ॥२॥ प्राप्त करता है

ईश्वर उवाच—अथ वक्ष्यामि देवेश पवित्रारोपणं शुभम् ॥ सप्तम्यामधिवास्याथ अष्टम्यामर्पयेत्तु तत् ॥ १ ॥ पवित्रं कारयेद्यस्तु तस्य पुण्यफलं शृणु ॥ सर्वयज्ञव्रतं दानं सर्वतीर्थाभिषेचनम् ॥ २ ॥ प्राप्नुयान्नात्र सन्देहो यस्मात्सर्वगता शिवा ॥ नाधयो न च दुःखानि न पीडा व्याधयोऽपि च ॥ ३ ॥ न भयं शत्रुजं तस्य न ग्रहैः पीड्यते क्वचित् ॥ सिध्यन्ति सर्वकार्याणि अल्पानि च महान्ति च ॥ ४ ॥ नातः परतरं वत्स अन्यत्पुण्यविवृद्धये ॥ नराणां च नृपाणां च स्त्रीणां चैव विशेषतः ॥ ५ ॥ सौभाग्यजननं तात तत्र

इसमें सन्देह नहीं है क्योंकि शिवा (कल्याण) रूपा शक्ति सबमें अंशरूप से वास करती है । इसलिये न तो मानसी चिन्ता दुःख पीड़ा व्याधि होते हैं ॥३॥ और न उसको शत्रु से भय होता है तथा न कभी ग्रहजन्य पीड़ा ही होती है । और उसके समस्त कार्य छोटे या बड़े सभी सिद्ध होते रहते हैं ॥४॥ हे वत्स ! मनुष्य तथा राजाओं के लिये पुण्य को बढ़ाने वाला इससे बढ़कर दूसरा साधन नहीं है और स्त्रियों के लिये तो विशेष करके पुण्यवर्धक कहा है ॥५॥ हे तात !

यह सौभाग्य उत्पन्न करने वाला साधन तुम्हारे स्नेह से प्रकाशित किया है, हे विधातृज ! (ब्रह्मा के पुत्र !) श्रावणमास के शुक्लपक्ष की सप्तमी के दिन अधिवासन करके ॥ ६ ॥ समस्त पूजन सामग्री को लेकर देवी में श्रेष्ठ भक्तिपूर्वक गन्ध पुष्प फल आदि समस्त पूजा द्रव्यों को लेकर ॥ ७ ॥ और विविध प्रकार के नैवेद्य तथा वस्त्र आमरण को एकत्रित कर

स्नेहात्प्रकाशितम् ॥ श्रावणे शुक्लसप्तम्यामधिवास्य विधातृज ॥ ६ ॥ सर्वोपस्करसंयुक्तो देव्यां सद्भक्तिमांश्च सः ॥ सर्वाणि पूजाद्रव्याणि गन्धपुष्पफलानि च ॥ ७ ॥ नैवेद्यान्विविधांश्चैव वस्त्राद्याभरणानि च ॥ सम्पाद्य शोधयेदेतान्प्राशयेत्पञ्चगव्यकम् ॥ ८ ॥ चरुणा दिग्बलिं दद्यात्कार्यं चैवाधिवासनम् ॥ छादयेत्सदृशैर्वस्त्रैः पत्रैश्चैतत्पवित्रकम् ॥ ९ ॥ देव्यास्तन्मूलमन्त्रेण शतवाराभिमन्त्रितम् ॥ स्थापयेत्पुरतो देव्याः सर्वशोभासमन्वितम् ॥ १० ॥ देव्यास्तु मण्डपं कृत्वा रात्रौ जागरणं चरेत् ॥ नटनर्तकवेश्यानां कुशलान्विविधान्गणान् ॥ ११ ॥ स्थापयेद्वाद्यगीतादीन्नृत्यविद्याविशारदान् ॥ प्रत्यूषे विधिवत्स्नात्वा दिव्यो

पवित्र करे बाद पञ्चगव्य का प्राशन करे ॥८॥ चरु से दिग्बलि देवे और अधिवासन करे तथा सुन्दर वस्त्रों से और पत्रों से पवित्र को आच्छादित करे ॥९॥ देवी के मूलमन्त्र से सौ (१००) वार अभिमन्त्रित कर सर्वशोभा से युक्त उस पवित्र को देवी के सामने स्थापित करे ॥ १० ॥ देवी के निमित्त सुन्दर मण्डप बनाकर रात्रि में जागरण करे । देवी के सामने

नट नर्तक वेश्याओं के कुशल गणों को स्थापित करे ॥११॥ जो कि वाद्य गान नृत्यविद्या में विशारद होवें। दूसरे दिन प्रातःकाल विधिपूर्वक स्नान करके पूनः दिग्बलि देवे ॥ १२ ॥ और देवी का विधिवत् पूजन कर स्त्रियों को तथा ब्राह्मणों को भोजन करावे और पवित्र को देवी के लिये अर्पण करे। पवित्रारोपण के आदि और अन्त में दक्षिणा देवे

दद्यात्पुनर्बलीन् ॥१२॥ देवीं सम्पूज्य विधिवत्स्त्रियो भोज्यास्तथा द्विजाः ॥ पवित्रमर्पयेद्देव्या आदावन्ते च दक्षिणाम् ॥ १३ ॥ यथाशक्ति भवेद्वत्स नियमः कार्यसाधकः ॥ स्त्रियोऽक्षा मृगया मांसं राज्ञा वर्ज्यं प्रयत्नतः ॥ १४ ॥ स्वाध्यायश्च द्विजाचार्यैर्न कार्यं कर्षणं कृषेः ॥ वणिग्भर्न च वाणिज्यं सप्तपञ्चदिनानि वा ॥ १५॥ अथवा त्रीणि चैकं वा दिनं तस्यार्धमेव वा ॥ देव्या व्यापार आसक्तिः कर्तव्या सततं हृदि ॥ १६ ॥ न करोति विधानेन पवित्रारोपणं बुधः ॥ तस्य सांवत्सरी पूजा निष्फला मुनिसत्तम ॥ १७ ॥ तस्माद्भक्तिसमायुक्तैर्न-

॥१३॥ हे वत्स! अपने शक्ति के अनुसार कार्य सिद्ध करने वाले नियम को ग्रहण करे। राजा यत्नपूर्वक स्त्री जूआ शिकार और मांस का त्याग करे ॥१४॥ ब्राह्मण और आचार्य स्वाध्याय का, वणिक् जन खेती तथा व्यापार का काम सात या पाँच दिन तक न करें ॥१५॥ अथवा तीन दिन, एक दिन, आधा दिन व्यवहार के कार्य को छोड़कर निरन्तर हृदय से देवी के व्यापार में मन को लगावे ॥१६॥ जो विद्वान् विधि से पवित्रारोपण नहीं करता है हे मुनिश्रेष्ठ! उसके वर्ष भर

रैर्देवीपरायणैः ॥ वर्षे वर्षे प्रकर्तव्यं पवित्रारोपणं शुभम् ॥ १८ ॥ कर्कटकगते सूर्ये तथा सिंहगतेऽपि वा ॥ अष्टम्यां शुक्लपक्षस्य दद्याद्देव्याः पवित्रकम् ॥१९॥ एतस्याकरणे दोषो नित्यमेतत्प्रकीर्तितम् ॥ २० ॥ सनत्कुमार उवाच—देवदेव महादेव पवित्रं यत्त्वयोदितम् ॥ निर्मितव्यं कथं स्वामिंस्तद्विधिं वद सर्वशः ॥२१॥ ईश्वर उवाच—हेमताम्रक्षौमरूप्यैः सूत्रैः कौशेयपट्टजैः ॥ कुशैः काशैश्च कार्पासैर्ब्राह्मण्या कर्तितैः शुभैः ॥२२॥ कृत्वा त्रिगुणितं सूत्रं त्रिगुणीकृत्य साधयेत् ॥ तदोत्तमं पवित्रं तु षष्ट्या सह शतैस्त्रिभिः ॥२३॥ सप्तत्या सहितं

की पूजा निष्फल हो जाती है ॥१७॥ इसलिए मनुष्य भक्ति से देवी में परायण होकर प्रतिवर्ष शुभ पवित्रारोपण कर्म को करे ॥१८॥ कर्क या सिंह राशि के सूर्य होने पर श्रावण शुक्लपक्ष की अष्टमी के दिन देवी को पवित्रारोपण करे ॥१९॥ इस पवित्रारोपण कर्म न करने से दोष होता है क्योंकि यह नित्यकर्म कहा गया है ॥ २० ॥ सनत्कुमार जी बोले हे देवदेव ! हे महादेव ! आपने पवित्रारोपण के लिये कहा, हे स्वामिन् ! उस पवित्र को किस तरह बनाया जाता है उसकी सब विधि मुझसे कहिये ॥२१॥ ईश्वर बोले—हे सनत्कुमार जी ! सुवर्ण, ताम्बा, क्षौम, चांदी के सूत्र से अथवा रेशमी वस्त्र से या कुशा, काश से बनाये गये तथा कार्पास सूत्र से तथा ब्राह्मणी द्वारा काते गये ॥२२॥ सूत्रों को त्रिगुणित करके फिर त्रिगुणित करे । ३६० सूत्रों का पवित्र उत्तम कहा गया है॥२३॥ और २७० सूत्रों का पवित्र मध्यम कहा जाता है

तथा १८० सूत्रों का कनिष्ठ पवित्र होता है ॥ २४ ॥ १०० ग्रन्थियों का उत्तम, ५० ग्रन्थियों का मध्यम और ३६ ग्रन्थियों का कनिष्ठ पवित्र होता है ॥ २५ ॥ अथवा छ, तीन, चार, दो, बारह, चौबीस, बारह, आठ ग्रन्थियों का पवित्र बनावे ॥ २६ ॥ अथवा १०८ ग्रन्थियों का उत्तम, ५४ ग्रन्थियों का मध्यम, २७ ग्रन्थियों का कनिष्ठ पवित्र होता है

द्वाभ्यां-शताभ्यां मध्यमं स्मृतम् ॥ साशीतिना शतेनैव कनिष्ठं तत्समाचरेत् ॥ २४ ॥ उत्तमं तु शतग्रन्थि पञ्चाशद्ग्रन्थि मध्यमम् ॥ पवित्रकं कनिष्ठं स्यात्षट्त्रिंशद्ग्रन्थि शोभनम् ॥२५॥ अथवाङ्गगुणैर्वेदैर्द्वाभ्यां द्वादशतोऽपि वा ॥ चतुर्विंशद्द्वादशाष्टग्रन्थिभिर्वा पवित्रकम् ॥२६॥ अथ चाष्टोत्तरशतं चतुःपञ्चाशदेव वा ॥ सप्तविंशतिरेवैवं ज्येष्ठमध्यकनीयसम् ॥ २७ ॥ अधमं नाभिमात्रं स्यादूरुमात्रं तु मध्यमम् ॥ उत्तमं जानुमात्रं तत्प्रतिमाया निगद्यते ॥ २८ ॥ रञ्ज्याः सर्वाः कुङ्कुमेन पवित्रग्रन्थयः शुभाः ॥ देवीं पूज्य पुरोभागे सर्वतोमण्डले शुभे ॥२९॥ कलशे वेणुपटले पवित्राणि निधापयेत् ॥ त्रिसूत्र्यां ब्रह्मविष्णवीशानावाह्य च ततः शृणु

॥२७॥ देवी की प्रतिमा के नाभि तक का पवित्र कनिष्ठ, जांघ तक का पवित्र मध्यम, जानु (नली) तक का पवित्र उत्तम होता है ॥२८॥ उस पवित्र के समस्त ग्रन्थियों को केशर से रंगे और सर्वतोभद्र पर देवी का पूजन कर देवी के सामने ॥ २९ ॥ कलश या वैणव (बांस का) पात्र पर पवित्र को स्थापित करे। तीन सूत्रों में ब्रह्मा, विष्णु, शङ्कर का

आवाहन करे तदनन्तर ॥३०॥ नौ सूत्रों में ओंकार, सोम, वह्नि, विधि, नाग, चन्द्र, रवि, ईश और विश्वेदेव का आवाहन तथा स्थापन करे ॥ ३१ ॥ अब इसके बाद ग्रन्थियों में देवताओं के स्थापन का प्रकार कहूँगा। क्रिया, पौरुषी, वीरा, विजया, अपराजिता, ॥३२॥ मनोन्मनी, जया, भद्रा, मुक्ति और ईशा, इन नामों के आदि में प्रणव लगाकर चतुर्थ्यन्त पद

॥ ३० ॥ नवसूत्र्यां तथोङ्कारं सोमं वह्निं विधिं तथा ॥ नागांश्चन्द्ररवीशांश्च विश्वेदेवांश्च स्थापयेत् ॥ ३१ ॥ अतः परं प्रवक्ष्यामि स्थाप्या ग्रन्थिषु देवताः ॥ क्रिया च पौरुषी वीरा विजया चापराजिता ॥ ३२ ॥ मनोन्मनी जया भद्रा मुक्तिरीशा तथैव च ॥ प्रणवादिन्मोन्तैश्च नामभिर्ग्रन्थिसंख्यया ॥ ३३ ॥ आवर्त्यमानैरावाह्य पूजयेच्चन्दनादिभिः ॥ धूपितं प्रणवेनाभिमन्त्र्य देव्यै समर्पयेत् ॥ ३४ ॥ एतत्ते कथितं देव्याः पवित्रारोपणं शुभम् ॥ अन्येषां चैव देवानां प्रतिपत्प्रभृतिष्वपि ॥३५॥ पवित्रारोपणं कार्यं देवतास्ता वदामि ते ॥

के अन्त में नमः पद जोड़कर ग्रन्थिसंख्या के अनुसार ॥३३॥ आवृत्ति करके आवाहन करे और चन्दनादि से पूजन करे। धूप देकर प्रणव से अभिमन्त्रित कर देवी को समर्पण करे ॥३४॥ हे सनत्कुमारजी! यह देवी का पवित्रारोपण विधान मैंने आपसे कहा। इसी तरह अन्य देवताओं को प्रतिपत् आदि तिथियों में ॥३५॥ पवित्रारोपण करना चाहिये। उन देवताओं

१ ॐ क्रियायै नमः, ॐ पौरुष्यै नमः, ॐ वीरायै नमः, ॐ विजयायै नमः, ॐ अपराजितायै नमः, ॐ मनोन्मन्यै नमः, ॐ जयायै नमः, ॐ भद्रायै नमः, ॐ मुक्त्यै नमः, ॐ ईशायै नमः।

को मैं तुमसे कहता हूं—धनद (कुवेर), श्री, गौरी, गणेश, चन्द्रमा, बृहस्पति, ॥३६॥ सूर्य, चण्डिका, अम्बा, वासुकि, ऋषि, चक्रपाणि, अनन्त, शिव, ब्रह्मा, और पितर ॥३७॥ प्रतिपत् आदि तिथियों में इन देवताओं का पूजन करे और यह पवित्रारोपण प्रधान देवता को मैंने कहा है ॥३८॥ तथा अङ्ग देवता को तीन तार का पवित्र अर्पण करे ॥३९॥ शिवजी

धनदः श्रीस्तथा गौरी गणेशः सोमराड् गुरुः ॥ ३६ ॥ भास्करश्चण्डिकाम्बा च वासुकिश्च तथर्षयः ॥ चक्रपाणिर्ह्यनन्तश्च शिवः कः पितरस्तथा ॥ ३७ ॥ प्रतिपत्प्रभृतिष्वेताः पूज्यास्तिथिषु देवताः ॥ मुख्याया देवतायास्तु पवित्रारोपणं त्विदम् ॥ ३८ ॥ तदङ्गदेवतायास्तु त्रिसूत्रं स्यात्पवित्रकम् ॥ ३९ ॥ ईश्वर उवाच ॥ अतः परं प्रवक्ष्यामि कर्तव्यं नवमीदिने ॥ श्रावणे मासि विप्रेन्द्र पक्षयोरुभयोरपि ॥४०॥ कुमारी नामिका दुर्गा पूजनीया यथाविधिः ॥ कुर्यान्नक्तव्रतं तत्र क्षीरमाक्षिकभोजनम् ॥४१॥ उपवासपरो वा स्यान्नवम्यां पक्षयोर्द्वयोः ॥ कुमारी वेति नाम्ना वै चण्डिकामर्चयेत्सदा ॥ ४२ ॥ कृत्वा रौप्यमयीं भक्त्या दुर्गां वै पाप-

बोले कि हे विप्रेन्द्र (सनत्कुमारजी !) अब इसके बाद श्रावण मास के दोनों पक्ष को नवमी तिथि के दिन जो कुछ कर्तव्य है उसको मैं कहूँगा ॥४०॥ हे विप्रेन्द्र ! नवमी के दिन कुमारी नामक दुर्गा का यथाविधि पूजन करे और नक्तव्रत करे तथा दूध सहद मिलाकर भोजन करे ॥ ४१ ॥ अथवा दोनों पक्ष की नवमी को उपवास करे और कुमारी नाम से सदा चण्डिका का पूजन करे ॥४२॥ चांदी की प्रतिमा बनाकर उसमें भक्ति से पापनाशिनी दुर्गा का कनैल के पुष्पों से और

गन्ध अगर चन्दन से ॥४३॥ दशाङ्ग धूप से तथा मोदक से पूजन करे। बाद कुमारी (कन्या) को भोजन करावे और भक्ति से ब्राह्मण ब्राह्मणियों को भोजन करावे ॥४४॥ तदनन्तर मौन होकर बिल्वपत्र भोजन करके रह जाय। इस प्रकार श्रेष्ठ भक्ति से जो दुर्गा का पूजन करता है ॥४५॥ वह जहां बृहस्पति वास करते हैं उस उत्तम गुरु लोक को जाता है, हे

नाशिनीम् ॥ करवीरस्य पुष्पैस्तु गन्धैरगरुचन्दनैः ॥ ४३ ॥ धूपेन च दशाङ्गेन मोदकैश्चापि पूजयेत् ॥ कुमारीं भोजयेत्पश्चात्स्त्रियो विप्रांश्च भक्तितः ॥ ४४ ॥ भुञ्जीत वाग्यतः पश्चाद्बिल्वपत्रकृताशनः ॥ एवं यः पूजयेद्दुर्गां श्रद्धया परया युतः ॥ ४५ ॥ स याति परमं स्थानं यत्र देवो गुरुः स्थितः ॥ एतत्ते नवमीकृत्यं कथितं विधिनन्दन ॥ ४६ ॥ सर्वपापप्रशमनं सर्वसम्पत्करं नृणाम् ॥ पुत्रपौत्रादिजननमन्ते सद्गतिदायकम् ॥ ४७ ॥ इति श्रीस्कन्द० ईश्वर० श्रा०माहात्म्येऽष्टम्यां देवीपवित्रारोपणं नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥१७॥

सनत्कुमारजी! यह मैंने तुमसे नवमी का कृत्य कहा ॥ ४६ ॥ यह मनुष्यों के समस्त पापों का नाश करने वाला तथा समस्त सम्पत्ति को देनेवाला और पुत्र पौत्रादि को बढ़ानेवाला तथा अन्त में उत्तम गति को देनेवाला है ॥ ४७ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये व्या. आ. 'विद्यारत्न' पं० माधवप्रसादव्यासकृतायां भाषाटीकायां देवीपवित्रारोपणं नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

सनत्कुमार जी शिवजी से बोले कि हे भगवन्! हे पार्वतीनाथ! हे भक्तों पर अनुग्रह करने वाले! हे दयासिन्धो! दशमी तिथि का माहात्म्य कहिये ॥ १ ॥ शिवजी बोले हे–सनत्कुमार जी! श्रावण मास के शुक्लपक्ष की दशमी तिथि के दिन इस व्रत को आरम्भ करे, प्रतिमास के शुक्लपक्ष की दशमी तिथि के दिन व्रत को करे ॥ २ ॥ इस प्रकार बारह मास श्रेष्ठ व्रत

सनत्कुमार उवाच—भगवन्पार्वतीनाथ भक्तानुग्रहकारक ॥ कथयस्व दयासिन्धो महात्म्यं दशमीतिथेः ॥ १ ॥ ईश्वर उवाच—श्रावणे शुक्लपक्षे तु दशम्यां प्रारभेद्व्रतम् ॥ प्रतिमासे दशम्यां तु शुक्लायां व्रतमाचरेत् ॥ २ ॥ एवं द्वादशमासेषु कृत्वा व्रतमनुत्तमम् ॥ नभः-शुक्लदशम्यां तु तत उद्यापनं चरेत् ॥ ३ ॥ राज्याशयो राजपुत्रः कृष्यर्थं च कृषीवलः ॥ वाणिज्यार्थं वणिक्पुत्रः पुत्रार्थं गुर्विणी तथा ॥ ४ ॥ धर्मार्थकामसिद्ध्यर्थं लोकः कन्या वरार्थिनो ॥ यष्टुकामो द्विजवरोऽरोग्यारोग्यार्थमेव च ॥ ५ ॥ चिरप्रवसिते कान्ते पत्नी तस्यागमाय च ॥ एतेष्वन्येषु कर्तव्यमाशाव्रतमिदं तदा ॥ ६ ॥ यस्माद्यस्य भवेदार्तिः

को करके श्रावण शुक्ल दशमी के दिन उद्यापन करे ॥ ३ ॥ इस आषाढ़दशमी नामक व्रत को राजपुत्र राज्य की आशा से, किसान खेती के लिये, वणिकपुत्र वाणिज्य के लिये, गुर्विणी (गर्भिणी) स्त्री पुत्र के लिये, ॥ ४ ॥ मनुष्यमात्र धर्म अर्थ काम सिद्धि के लिये, कन्या वर के लिये, ब्राह्मण यज्ञ के लिये, रोगी आरोग्यता के लिये ॥५॥ परदेश में अधिक समय बीतने

पर पति के आगमन के लिये स्त्री व्रत को करे। इन कार्यों में तथा अन्य कार्यों में इस आशादशमी व्रत को करे ॥६॥ जिसको जिससे दुःख होवे वह इस श्रावण शुक्ल दशमी के दिन स्नान कर देवता पूजन कर व्रत को करे ॥ ७ ॥ रात्रि में दश दिशाओं में पुष्प पल्लव चन्दन अथवा जव के पिसान से गृह के आंगन में देवताओं को लिखकर ॥ ८ ॥ शस्त्र वाहन

कार्यं तेन तदा व्रतम् ॥ नभः शुक्लदशम्यां तु स्नात्वा सम्पूज्य देवताम् ॥ ७ ॥ नक्तमाशासु पूज्या वै पुष्पपल्लवचन्दनैः ॥ गृहाङ्गणे लेखयित्वा यवपिष्टातकेन वा ॥ ८ ॥ स्त्रीरूपाश्चाधि देवस्य शस्त्रवाहनचिह्निताः ॥ दत्त्वा घृताक्तं नैवेद्यं पृथग्दीपांश्च दापयेत् ॥ ६ ॥ फलानि कालजातानि ततः कार्यं निवेदयेत् ॥ आशाः स्वाशाः सदा सन्तु सिद्ध्यन्तु मे मनोरथाः ॥ १० ॥ भवतीनां प्रसादेन सदा कल्याणमस्त्विति ॥ एवं सम्पूज्य विधिवद्दत्त्वा विप्राय दक्षिणाम् ॥ ११ ॥ अनेन क्रमयोगेन मासि मासि सदा चरेत् ॥ वर्षमेकं मुनिश्रेष्ठ तत उद्यापनं चरेत् ॥१२॥ सौवर्णीः कारयेदाशा रौप्याः पिष्टातकेन वा ॥ ज्ञातिबन्धुजनैः सार्धं

सहित स्त्री चिह्न से चिह्नित करे और घृत के बने नैवेद्य देकर पृथक् २ दीपक देवे ॥ ६ ॥ तथा ऋतुकाल में होनेवाले फलों को देकर अपने कार्य को कहे कि मेरी आशा शोभन होवें और मेरे मनोरथ सदा सिद्ध होवें ॥ १० ॥ तथा आप लोगों के प्रसाद से सदा कल्याण होवे। इस प्रकार विधिवत् पूजन कर ब्राह्मण को दक्षिणा देवे ॥ ११ ॥ इसी क्रम से

प्रतिमास सदा व्रत को करे हे मुनिश्रेष्ठ ! एक वर्ष व्रत को करके उद्यापन करे ॥ १२ ॥ सुवर्ण या चांदी या पिसान की प्रतिमा दश दिशाओं की बनवावे और जाति बन्धुजनों के साथ स्नानकर वस्त्र भूषण से अलङ्कृत होकर ॥१३॥ भक्तियुक्त चित्त से गृह के आंगन में क्रम से मन्त्र द्वारा दश दिशाओं का आवाहन स्थापन और पूजन करे ॥१४॥ ये दश दिशाओं के मन्त्र हैं—हे दिशा के देवता ऐन्द्रि ! सुर असुर से नमस्कृत और इस भुवन का स्वामी इन्द्र तुम्हारे समीप वास

स्नातः सम्यगलङ्कृतः ॥ १३ ॥ पूजयेद्भक्तियुक्तेन चेतसा दश देवताः ॥ स्थापयेत्क्रमयोगेन मन्त्रैरेभिर्गृहाङ्गणे ॥१४॥ त्वयि सन्निहितः शक्रः सुरासुरनमस्कृतः ॥ स्वामी च भुवनस्यास्य ऐन्द्रीदिग्देवते नमः ॥१५॥ अग्नेः परिग्रहादाशे त्वमाग्नेयीति पठ्यते ॥ तेजरूपा पराशक्ति-रतस्त्वं वरदा भव ॥१६॥ धर्मराजः समाश्रित्य लोकान् संयमयत्यसौ ॥ तेन संयमिनि चासि याम्ये सत्कामदा भव ॥ १७ ॥ खड्गहस्तातिविक्रान्ता निर्ऋतिस्थानमाश्रिता ॥ तेन

करता है ऐसे आपको नमस्कार है ॥ १५ ॥ हे आशे ! अग्निदेवता के निवास से आग्नेयी कही जाती हैं और आप तेजोरूप पराशक्ति हैं इसलिये हे आग्नेयि ! आप मेरे लिये वर देने वाली होवें ॥१६॥ हे याम्ये ! ये धर्मराज आपका आश्रय लेकर समस्त लोकों को दण्ड देते हैं इसलिये आप संयमनी कही जाती हैं, हे संयमिनि ! आप मेरे लिये श्रेष्ठ कार्य को देने वाली होवें ॥१७॥ हे आशे ! हाथ में खड्ग लिये अत्यन्त विकराल रूप धारी मृत्यु देवता आपके निर्ऋति स्थान में वास

करते हैं इसलिये आप निर्ऋतिरूपा हो, हे नैर्ऋति ! आप मेरी आशा को पूर्ण करें ॥१८॥ हे वारुणि ! भुवन के आधार और जलजन्तुओं के अधिपति वरुण देवता आप में वास करते हैं इसलिये हे वारुणि ! आप मेरे कार्य के लिये तथा धर्म के लिये तत्पर रहें ॥ १९ ॥ हे वायव्ये ! जगत् के आदि कारण प्राणरूप वायु देवता से आप अधिष्ठित हैं इसलिये हे

निर्ऋतिरूपासि त्वमाशां पूरयस्व मे ॥१८॥ त्वय्याऽस्ते भुवनाधारो वरुणो यादसांपतिः ॥ कार्यार्थं मम धर्मार्थं वारुणि प्रवणा भव ॥ १९ ॥ अधिष्ठितासि यस्मात्त्वं वायुना जगदादिना ॥ वायव्ये त्वमतः शान्तिं नित्यं यच्छ ममालये ॥ २० ॥ धनाधिपाधिष्ठितासि प्रख्याता त्वमिहोत्तरा ॥ निरुत्तरा भवास्मासु दत्त्वा सद्यो मनोरथम् ॥२१॥ ऐशानि जगदीशेन शम्भुना त्वमलंकृता ॥ पूरयस्व शुभे देवि वाञ्छितानि नमो नमः ॥२२॥ सर्वलोकोपरिगता सर्वदा त्वं शिवप्रदा ॥ सनकाद्यैः परिवृता मां त्राहि त्राहि सर्वदा ॥२३॥ नक्षत्राणि

वायव्ये ! आप मेरे गृह में नित्य शान्ति को देवें ॥२०॥ हे कौबेरि ! आपकी दिशा में कुबेर देवता वास करते हैं इसलिये आप उत्तरादिक् कही जाती हैं आप मेरे मनोरथ को देकर मेरे विषय में निरुत्तरा होवें ॥ २१ ॥ हे ऐशानि ! आप जगदीश शिव से अलङ्कृत हो हे शुभे ! हे देवि ! मेरे मनोरथों को पूर्ण करो, आपको नमस्कार है, नमस्कार है ॥२२॥ समस्त लोकों के ऊपर रहनेवाली, सर्वदा कल्याण देनेवाली, सनक सनन्दन सनातन सनत्कुमार आदि मुनिजनों के साथ रहने

वाली आप सर्वदा मेरी रक्षा करो, रक्षा करो ॥२३॥ समस्त नक्षत्र, और ग्रह तथा तारागण और नक्षत्र मातायें तथा भूत प्रेत विनायक की ॥२४॥ और मैंने भक्तियुक्त चित्त से दिग्देवताओं की पूजा की है, वे देवता सर्वदा मेरे इष्टसिद्धि को देने वाले होवें ॥ २५ ॥ सर्प और नकुल (नेवला) से आप नीचे के लोकों में सेवित हैं इसलिये आप आज मेरे ऊपर नागाङ्गनाओं के

च सर्वाणि ग्रहास्तारागणास्तथा ॥ नक्षत्रमातरो याश्च भूतप्रेतविनायकाः ॥२४॥ पूजितास्तु मया भक्त्या भक्तिप्रवणचेतसा ॥ सर्वे ममेष्टसिद्ध्यर्थं भवन्तु प्रवणाः सदा ॥ २५ ॥ भुजङ्गनकुलेन त्वं सेवितासि यतो ह्यधः ॥ नागाङ्गनाभिः सहिता तुष्टा भव ममाद्य वै ॥२६॥ एभिर्मन्त्रैः समभ्यर्च्य पुष्पधूपादिना ततः ॥ अलङ्कारांश्च वासांसि फलानि च निवेदयेत् ॥ २७ ॥ ततो वाद्यादिनादेन गीतनृत्यादिमङ्गलैः ॥ नृत्यतीभिर्वरस्त्रीभिर्जागरणे निशां नयेत् ॥२८॥ कुङ्कुमाक्षतताम्बूलदानमानादिभिः सुखम् ॥ अतिवाह्य च तां रात्रिं हर्षयुक्तेन चेतसा ॥२९॥ प्रभाते प्रतिमा अर्च्यं ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥ अनेन विधिना कृत्वा क्षमाप्य

सहित प्रसन्न होवें ॥२६॥ इन मन्त्रों को पढ़कर पुष्प धूप आदि से पूजन कर अलङ्कार वस्त्र फल निवेदन करे ॥ २७ ॥ बाद वाद्य (बाजा) के बजाने से गीत (गान) नृत्य (नाच) आदि मङ्गलों से और नृत्य करनेवाली वेश्याओं के नाच से जागरण कर रात्रि को व्यतीत करे ॥ २८ ॥ कुङ्कुम (केशर) अक्षत ताम्बूल दान मानादि से और हर्षयुक्त चित्त से उस

रात्रि को व्यतीत करे ॥२९॥ प्रातःकाल पुनः प्रतिमा का पूजनकर ब्राह्मण को दे देवे। इस विधि से पूजन कर अपराध क्षमापन कराकर प्रणाम करे ॥३०॥ बाद मित्रों के साथ और सुहृद बन्धुजनों के साथ भोजन करे, हे तात! इस प्रकार जो आदरपूर्वक दशमी का व्रत करता है ॥३१॥ वह अपने इच्छानुसार समस्त कामनाओं को प्राप्त करता है। और यह

प्रणिपत्य च ॥ ३० ॥ भुञ्जीत मित्रैः सहितः सुहृद्बन्धुजनेन च ॥ एवं यः कुरुते तात
दशमीव्रतमादरात् ॥ ३१ ॥ सर्वान्कामानवाप्नोति मनसोऽभिमतान्नरः ॥ स्त्रीभिर्विशेषतः
कार्यं व्रतमेतत्सनातनम् ॥ ३२ ॥ प्राणिवर्गे यतो नार्यः श्रद्धाकामपरायणाः ॥ धन्यं यश-
स्यमायुष्यं सर्वकामफलप्रदम् ॥ ३३ ॥ कथितं च मुनिश्रेष्ठ मया व्रतमिदं तव ॥ नानेन
सदृशं चान्यद्व्रतमस्ति जगत्त्रये ॥ ३४ ॥ ये मनवा विधिजपुङ्गव कामकामाः सम्पूजयन्ति
दशमीषु सदा दशाशाः ॥ तेषामशेषनिहितान्हृदयेऽतिकामानाशाः फलन्ति किमिहास्ति बहु-

सनातन व्रत है इस व्रत को स्त्रियां अवश्य करें ॥३२॥ क्योंकि प्राणिमात्र में स्त्रीजन श्रद्धा और अनेक कामनाओं से युक्त हुआ करती हैं। हे मुनिश्रेष्ठ! यह व्रत धन यश आयुष्य और समस्त कामनाओं के फल को देनेवाला है ॥३३॥ इस व्रत को मैंने आपसे कहा। हे मुनिश्रेष्ठ! त्रैलोक्य में इस व्रत के समान दूसरा व्रत नहीं है ॥३४॥ हे ब्रह्मा के पुत्रों में श्रेष्ठ! कामनाओं के फल की चाहना करनेवाले जो मनुष्य सर्वदा दशमी के दिन दश दिशाओं का पूजन करते हैं उनके हृदय में

स्थित समस्त कामनाओं को दिग्देवता सफल करते हैं। हे ब्रह्मपुत्र ! इस विषय में विशेष कहने से क्या काम है ॥३५॥ यह व्रत मोक्ष फल को देनेवाला है, इसमें विचार नहीं करना। इस व्रत के समान दूसरा व्रत न हुआ न होगा ॥३६॥

दितेन ॥३५॥ मोक्षप्रदाने नायासो नात्रकार्या विचारणा ॥ व्रतं चानेन सदृशं न भूतं न भविष्यति ॥ ३६ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये आशादशमीव्रतकथनं नामाऽष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये व्या. आ. 'विद्यारत्न' पं० माधवप्रसादव्यासकृतायां भाषाटीकायां आशादशमीव्रतकथनं नामाष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥



ईश्वर (शिवजी) सनत्कुमारजी से बोले कि हे महामुने ! अब श्रावण मास के दोनों पक्ष की एकादशी तिथि के दिन जो कृत्य करना चाहिये उसको मैं कहूँगा, आप उसको सुनिये ॥ १ ॥ हे वत्स ! मैंने इस व्रत को किसी से भी नहीं कहा, यह गुप्त रखने के योग्य है, श्रेष्ठ है, महान् पुण्य को देनेवाला है और महान् पापों को नाश करनेवाला

ईश्वर उवाच—अथ वक्ष्ये नभोमासि पक्षयोरुभयोरपि ॥ एकादश्यां तु यत्कृत्यं यच्छृणुष्व महामुने ॥ १ ॥ न कस्यचिन्मयाख्यातं गुह्यमेतदनुत्तमम् ॥ महापुण्यप्रदं वत्स महापातकनाशनम् ॥ २ ॥ वाञ्छितार्थप्रदं नृणां श्रुतं पापापहारकम् ॥ श्रेष्ठं व्रतानां सर्वेषां शुभमेकादशीव्रतम् ॥ ३ ॥ तत्तेऽहं सम्प्रवक्ष्यामि समाहितमनाः शृणु ॥ दशम्यामुषसि स्नात्वा कृतसन्ध्यादिकः शुचिः ॥ ४ ॥ प्राप्याज्ञां वेदविदुषः पुराणज्ञाञ्जितेन्द्रियान् ॥ सम्पूज्य देवदेवेशं षोडशैरुपचारकैः ॥५॥ एकादश्यां निराहारः स्थित्वाऽहमपरेऽहनि ॥ भोक्ष्यामि पुण्ड-

है ॥२॥ मनुष्यों के इच्छित फल का दाता और श्रवणमात्र से पापनाशक तथा समस्त व्रतों में श्रेष्ठ यह पवित्र एकादशी का व्रत है ॥३॥ हे विप्र ! उसको मैं आपसे कहूँगा आप एकाग्रचित्त होकर सुने। दशमी के दिन प्रातःकाल स्नान सन्ध्या करके पवित्र होकर ॥ ४ ॥ गुरु की आज्ञा लेकर वेदवेत्ता पुराणवेत्ता जितेन्द्रिय ब्राह्मणों की पूजा कर देवदेवेश विष्णु भगवान् का षोडशोपचार से पूजन कर ॥ ५ ॥ और यह प्रार्थना करे कि हे पुण्डरीकाक्ष ! मैं कल्ह एकादशी के दिन

निराहार होकर रहूँगा और उसके दूसरे दिन भोजन करूँगा हे अच्युत ! आप मेरे रक्षक होवें ॥६॥ हे वत्स ! उस दिन गुरु देवता अग्नि के समीप नियम को करे और पृथिवी में शयन करे तथा काम क्रोध का त्याग करे ॥७॥ बाद एकादशी के दिन प्रातःकाल केशव भगवान् में मन लगाकर मार्ग चलते समय बात-चीत करते समय आदि समस्त कार्य को करता

रीकाच्च शरणं मे भवाच्युत ॥६॥ कुर्याच्च नियमं वत्स गुरुदेवाग्निसन्निधौ ॥ तद्दिने भूमिशायी स्यात्कामक्रोधविवर्जितः ॥७॥ ततः प्रभाते विमले केशवार्पितमानसः ॥ श्रीधरेति तदा वाक्यं क्षुतप्रस्खलनादिषु ॥८॥ पाखण्डादिभिरालापं दर्शनं श्रवणं तथा ॥ त्यजेद्दिनत्रयं वत्स व्रतं कैवल्यकारकम् ॥ ९ ॥ ततो मध्याह्नसमये नद्यादौ विमले जले ॥ स्नानं कुर्याज्जितक्रोधः पञ्चगव्यपुरःसरम् ॥ १० ॥ आदित्याय नमस्कृत्य श्रीधरं शरणं व्रजेत् ॥ स्ववर्णाचारविधिना कृतकृत्यो गृहं व्रजेत् ॥ ११ ॥ पूजयेच्छ्रीधरं तत्र श्रद्धाभक्तिपुरः-

हुआ 'श्रीधर' इस नाम का उच्चारण करे ॥८॥ हे वत्स ! तीन दिन पाखण्डी आदि के साथ बात-चीत तथा उनका देखना और उनके बात का सुनना भी त्याग करे, हे वत्स ! ऐसा करने से व्रत मोक्षफलदायक होता है ॥९॥ बाद मध्याह्न के समय पञ्चगव्य को लेकर नदी आदि के स्वच्छ जल में क्रोध रहित होकर स्नान को करे ॥१०॥ श्री सूर्य भगवान् को नमस्कार कर श्रीधर भगवान् के शरण में जाय और अपने वर्ण के अनुसार आचार विधान से, समस्त कार्य को करके

गृह को जाय ॥११॥ गृह में आकर श्रद्धा भक्ति से पुष्प, धूप, दीप विविध प्रकार के नैवेद्य से श्रीधर भगवान् का पूजन करे ॥ १२ ॥ और रात्रि के समय गीत वाद्य कथा श्रवण आदि को करता हुआ जागरण करे। प्रथम घट स्थापन कर उसमें पञ्चरत्न सुवर्ण डालकर श्वेत चन्दन से पूजन कर दो वस्त्र से आच्छादित करे ॥१३॥ देवदेव (श्रीधर) की प्रतिमा

सरम् ॥ पुष्पधूपैस्तथा दीपैर्नैवेद्यैर्विविधैरपि ॥ १२ ॥ गीतवाद्यैः कथाभिश्च जागरं कारये-न्निशि ॥ कुम्भं संस्थापयित्वा तु रत्नगर्भं सकाञ्चनम् ॥१३॥ छादितं वस्त्रयुग्मेन सितचन्दन-चर्चितम् ॥ प्रतिमां देवदेवस्य शंखचक्रगदाभृताम् ॥ १४ ॥ कृत्वा यथावत्सम्पूज्य प्रभाते विमले सति ॥ द्वादश्यां कृतकृत्यस्तु श्रीधरेति जपेद्बुधः ॥१५॥ पूजयेद्देवदेवेशं शंखचक्र-गदाधरम् ॥ विप्राय दद्यात्कलशं हेमदक्षिणयान्वितम् ॥ १६ ॥ विशेषान्नवनीतं तु तत्र देयं द्विजातये ॥ श्रीधरः प्रीयतां मेऽद्य श्रियं पुष्णात्वनुत्तमाम् ॥ १७ ॥ इत्युच्चार्य मुनि-

शङ्ख, चक्र, गदा से युक्त प्रतिमा को करके ॥१४॥ विधिवत् प्रतिमा में पूजन करे बाद विद्वान् द्वादशी के दिन प्रातःकाल नित्यक्रिया को करके 'श्रीधर' नाम का जप करे ॥१५॥ और शङ्ख, चक्र, गदाधारी देवदेवेश भगवान् का पूजन करे तथा सुवर्ण दक्षिणा के साथ कलश को ब्राह्मण के लिये दे देवे ॥१६॥ ब्राह्मण को उस घटदान के साथ नवनीत (मक्खन) अवश्य देवें और यह कहे कि श्रीधर भगवान् प्रसन्न हों और मुझको अत्युत्तम लक्ष्मी को देवें ॥ १७ ॥ ऐसा कहके

जगद्गुरु श्रीधर का पूजन कर उत्तम ब्राह्मणों को भोजन कराकर यथाशक्ति दक्षिणा देवे ॥ १८ ॥ बाद भृत्य (नौकर) वर्ग को भोजन कराकर गौ को भूसा घास दिलावे और स्वयं बन्धु बान्धव सुहृद के साथ भोजन करे ॥ १९ ॥ हे सनत्कुमार ! यह 'शुक्लपक्ष के एकादशी तिथिव्रत का विधान तुमसे कहा । इसी तरह श्रावण कृष्णपक्ष की एकादशी के

श्रेष्ठ समभ्यर्च्य जगद्गुरुम् ॥ सम्भोज्य विप्रमुख्यांश्च दद्याच्छक्त्या च दक्षिणाम् ॥ १८ ॥
भृत्यादीन्भोजयित्वा तु यवसं गोषु दापयेत् ॥ स्वयं भुञ्जीत च ततः सुहृद्बन्धुसमन्वितः
॥१९॥ सनत्कुमारकथितस्ते शुक्लैकादशीविधिः ॥ एवमेव नभोमासि कृष्णायामपि साधयेत्
॥ २० ॥ अनुष्ठानं तुल्यमेव देवनाम्नि परं भिदा ॥ जनार्दनः प्रीयतां मे वाक्यमेतदुदीर-
येत् ॥ २१ ॥ शुक्लायां श्रीधरो देवः कृष्णायां तु जनार्दनः ॥ एतत्ते सम्यगाख्यातमुभयै-
कादशीव्रतम् ॥२२ ॥ नानेन सदृशं पुण्यं न भूतं न भविष्यति ॥ इदं त्वया गोपनीयं

दिन भी कृत्य को करे ॥२०॥ शुक्लपक्ष और कृष्णपक्ष का विधान समान है केवल नाम में भेद है । कृष्णपक्ष में यह कहै कि जनार्दन भगवान् प्रसन्न हों और मुझको अत्युत्तम लक्ष्मी को देवें ॥२१॥ शुक्लपक्ष में श्रीधर भगवान् और कृष्णपक्ष में जनार्दन भगवान् देवता कहे गये हैं । हे विप्र! यह दोनों पक्ष के एकादशीव्रत का विधान आपसे कहा है ॥२२॥ इस व्रत के समान पुण्यफल देनेवाला कोई व्रत न हुआ न होगा । हे विप्र ! इस व्रत को गुप्त रखना इसको दुष्ट मनुष्य को नहीं

देना चाहिये ॥ २३ ॥ ईश्वर सनत्कुमार से बोले। हे विप्र! अब द्वादशी के दिन विष्णु भगवान् के लिये पवित्रारोपण कहूँगा। प्रायः देवी के पवित्रारोपण में विधान मैंने तुमसे कहा है ॥ २४ ॥ विष्णु के पवित्रारोपण में विशेष विधि को कहूँगा उसको आप सावधान होकर सुनिये। हे महामुने! इसमें अधिकारी कौन है उसको भी सुनिये ॥२५॥ ब्राह्मण क्षत्रिय

न देयं दुष्टमानसे ॥ २३ ॥ ईश्वर उवाच ॥ अथ वक्ष्यामि द्वादश्यां पवित्रारोपणं हरेः ॥ उक्तः प्रायो विधिर्देव्याः पवित्रारोपणे तव ॥ २४ ॥ विशेषो यश्च तं वक्ष्ये सावधानमनाः शृणु ॥ अत्राधिकारी संदिष्टस्तं शृणुष्व महामुने ॥ २५ ॥ ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यस्तथा स्त्री शूद्र एव च ॥ स्वधर्मावस्थिताः सर्वे भक्त्या कुर्युः पवित्रकम् ॥ २६ ॥ अतो देवेति मन्त्रेण द्विजो विष्णोर्निवेदयेत् ॥ स्त्रीशूद्राणां नाममन्त्रो येन सम्पूजयेद्धरिम् ॥ २७ ॥ कद्रुद्रायेति मन्त्रेण द्विजः शम्भोर्निवेदयेत् ॥ स्त्रीशूद्राणां नाममन्त्रो येन सम्पूजयेद्धरिम्

वैश्य स्त्री और शूद्र तथा स्वधर्म (अपने वर्णधर्म) में स्थित सब लोग भक्ति से पवित्रारोपण कर्म को करें ॥२६॥ ब्राह्मण 'अतो देव' इस मन्त्र से पवित्रारोपण करें और स्त्री शूद्र नाममन्त्र से अर्थात् जिस मन्त्र से पूजन उस मन्त्र से पवित्रारोपण करे ॥२७॥ ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य 'कद्रुद्राय' मन्त्र से और स्त्री शूद्र नाममन्त्र से शङ्कर भगवान् के लिये पवित्रारोपण करे ॥२८॥

सतयुग में मणियों का, त्रेता में सुवर्ण का, द्वापर में रेशम का और कलि में कार्पास (रूई) का पवित्र बनाकर अर्पण करे ॥२९॥ यति (संन्यासी) मानसी पवित्रारोपण करें; प्रथम पवित्रा को बांस के पात्र में ॥३०॥ रखकर शुद्ध वस्त्र से आच्छादित कर श्रीधर भगवान् के आगे रक्खें और यह कहै कि हे प्रभो ! जो आपने क्रियालोप के लिये यह पिहित

॥ २८ ॥ कृते मणिमयं कार्यं त्रेतायां हेमसम्भवम् ॥ पट्टजं द्वापरे सूत्रं कार्पासं तु कलौ ॥ २९ ॥ यतिभिर्मानसं कार्यं परित्रारोपणं शुभम् ॥ कृतानि च पवित्राणि वैणवे पट्टले शुभे ॥ ३० ॥ संस्थाप्य शुचिवस्त्रेण पिधाय्य पुरतो न्यसेत् ॥ क्रियालोपविधानार्थं यत्त्वया पिहितं प्रभो ॥३१॥ मयैतत्क्रियते देव तव तुष्ट्यै पवित्रकम् ॥ न मे विघ्नो भवेद्देव कुरु नाथ दयां मयि ॥ ३२ ॥ सर्वथा सर्वदा देव मम त्वं परमा गतिः ॥ एतत्पवित्रतोऽहं त्वां तोषयामि जगत्पते ॥ ३३ ॥ कामक्रोधादयोऽप्येते न मे स्युर्व्रतघातकाः ॥ अद्यप्रभृति देवेश यावत्स्याद्वार्षिकं दिनम् ॥ ३४ ॥ तावद्रक्षा त्वया कार्या त्वद्भक्तस्य नमोऽस्तु ते ॥

(आच्छादित) किया है ॥३१॥ हे देव ! उस पवित्र के तोपने का विधान आपके प्रीत्यर्थ मैं करता हूँ । हे देव ! मेरे कार्य में विघ्न न होवे, हे नाथ ! मुझपर आप दया करें ॥३२॥ हे देव ! मेरे सब प्रकार से सर्वदा आप ही गति हो, हे जगत्पते ! मैं इस पवित्र से आपको प्रसन्न करता हूँ ॥ ३३ ॥ हे देवेश ! आज से लेकर वर्ष पर्यन्त ये काम क्रोध आदि व्रतघातक न

होवें ॥३४॥ हे देवेश ! तब तक मेरी रक्षा करें, मैं आपका भक्त हूँ आपको नमस्कार है। इस तरह श्रीधर भगवान् की प्रार्थना कर कलश पर स्थापित वैणव (बांस) पात्र में ॥३५॥ स्थित पवित्र की आदर से प्रार्थना कर कहे कि हे पवित्र ! वर्षपर्यन्त कृत पूजन को पवित्र करने के लिये ॥ ३६ ॥ विष्णुलोक से आज यहां आवें, आपको नमस्कार है। हे देव !

देवं सम्प्रार्थ्य कलशे पात्रे वेणुमये शुभे ॥३५॥ संस्थितस्य पवित्रस्य कुर्यात्प्रार्थनमादृतः ॥ संवत्सरकृतार्चाया: पवित्रीकरणाय भोः ॥३६॥ विष्णुलोकात्पवित्राद्य आगच्छेह नमोऽस्तु ते ॥ विष्णुतेजोद्भवं रम्यं सर्वपापप्रणाशनम् ॥ ३७ ॥ सर्वकामप्रदं देव तवाङ्गे धारयाम्यहम् ॥ आमान्त्रितोऽसि देवेश पुराणपुरुषोत्तम् ॥ ३८ ॥ अतस्त्वां पूजयिष्यामि सान्निध्यं कुरु ते नमः ॥ निवेदयाम्यहं तुभ्यं प्रातरेतत्पवित्रकम् ॥ ३९ ॥ ततः पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा रात्रौ जागरणं चरेत् ॥ एकादश्यामधिवसेद्द्वादश्यामर्चयेद्बुधः ॥ ४० ॥ गन्धदूर्वाक्षतैर्युक्तं

विष्णु तेज से उत्पन्न, रम्य और समस्त पापों के नाशक ॥३७॥ तथा समस्त कामना के दायक पवित्र को आपके अङ्ग में धारण करता हूँ, हे देवेश ! हे पुराण पुरुषोत्तम ! मुझसे आप आमन्त्रित हैं ॥३८॥ इसलिये आपकी पूजा करूंगा आप मेरे समीप होवें, आपको नमस्कार है। हे देव ! प्रातःकाल इस पवित्र को आपके लिये अर्पण करूँगा ॥ ३९ ॥ तदनन्तर पुष्पाञ्जलि देकर रात्रि में जागरण करे। एकादशी के दिन अधिवासन करके द्वादशी के दिन प्रातःकाल पूजन करे ॥४०॥

गन्ध दूर्वा अक्षत और पवित्र को हाथ में लेकर कहे कि हे देवदेव ! आपको नमस्कार है, आप इस पवित्र को ग्रहण करें ॥४१॥ पवित्र करने के लिये वर्षपर्यन्त पूजन के फलदायक पवित्र को निवेदन करता हूँ। मुझे आप पवित्र करें, हे देव ! मैंने जो कुछ दुष्कृत (पाप) किया है ॥४२॥ हे देव ! हे सुरेश्वर ! उस पाप से आपके प्रसाद से मैं शुद्ध हो जाऊं। मूलमन्त्र से पवित्र

समादाय पवित्रकम् ॥ देवदेव नमस्तुभ्यं गृहाणेदं पवित्रकम् ॥ ४१ ॥ पवित्रीकरणार्थाय वर्षपूजाफलप्रदम् ॥ पवित्रं मां कुरुष्वाद्य यन्मया दुष्कृतं कृतम् ॥ ४२ ॥ शुद्धो भवाम्यहं देव त्वत्प्रसादात्सुरेश्वर ॥ मूलसम्पुटितैरेतैर्मन्त्रैर्दद्यात्पवित्रकम् ॥ ४३ ॥ महानैवेद्यकं दत्त्वा नीराज्यं प्रार्थयेत्ततः ॥ मूलमन्त्रेण जुहुयाद्वह्नौ सघृतपायसम् ॥ ४४ ॥ विसर्जयित्वा मन्त्रेण अनेनैव पवित्रकम् ॥ सांवत्सरीं शुभां पूजां सम्पाद्य विधिवन्मम ॥ ४५ ॥ व्रजेदानीं पवित्र त्वं विष्णुलोकं विसर्जितम् ॥ उत्तार्य ब्राह्मणे दद्यात्तोये वाथ विसर्जयेत् ॥ ४६ ॥ एतत्ते

को सम्पुटित कर अर्पण करे ॥४३॥ और महानैवेद्य देकर नीराजन कर प्रार्थना करे और अग्नि में मूलमन्त्र से घृत पायस की आहुति देवे ॥४४॥ तथा इसी मन्त्र से पवित्र को विसर्जन करे और यह कहे कि हे पवित्र ! एक वर्ष की मेरी शुभ पूजा को विधिवत् पूर्ण करके ॥ ४५ ॥ हे पवित्र ! इस समय मुझसे विसर्जित होकर विष्णुलोक को जायँ, ऐसा कहकर ब्राह्मण को दे देवे या जल में डार (पधरा) देवे ॥४६॥ हे वत्स ! मैंने आपसे यह विष्णु भगवान् का पवित्रारोपण विधान

कथितं वत्स पवित्रारोपणं हरेः ॥ इह लोके सुखं भुक्त्वा अन्ते वैकुण्ठमाप्नुयात् ॥ ४७ ॥
इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये उभयैकादशीव्रतकथनं नामैकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

को कहा । हे वत्स ! जो कोई मनुष्य इस पवित्रारोपण को करता है वह इस लोक में सुख भोगकर अन्त होनेपर वैकुण्ठ लोक को जाता है ॥ ४७ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये व्या; आ. 'विद्यारत्न' पं० माधवप्रसादव्यासकृतायां भाषाटीकायां उभयैकादशीव्रतकथनं नामैकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

शिवजी सनत्कुमारजी से बोले कि हे सनत्कुमारजी ! अब आपके सामने त्रयोदशी दिन के कृत्य को कहता हूँ, श्रावण त्रयोदशी के दिन अनङ्ग (कामदेव) का षोडश उपचार से पूजन करना चाहिये ॥१॥ अशोक, मालती पुष्प, पद्म, देवप्रिय, कौसुम्भ, बकुल, और अन्य मादक पुष्पों से ॥२॥ लाऊवर्ण के अक्षत, पीत चन्दन, सुगन्धि द्रव्य, पौष्टिक द्रव्य

ईश्वर उवाच—त्रयोदशीदिने कृत्यं कथयामि तवाग्रतः ॥ अत्रानङ्गः पूजनीयः षोडशै-रुपचारकैः ॥ १ ॥ अशोकैर्मालतीपुष्पैः पद्मैर्देवप्रियैस्तथा ॥ कौसुम्भैर्बकुलैः पुष्पैस्तथा-न्यैरपि मादकैः ॥ २ ॥ रक्ताक्षतैः पीतगन्धैर्द्रव्यैः सौगन्धिकैः शुभैः ॥ पुष्टिकाजनकैर्द्रव्यै रेतोवृद्धिकरैः परैः ॥ ३ ॥ नैवेद्यमर्पयेच्चैव ताम्बूलं मुखरोचकम् ॥ ताम्बूले योजयेद्द्रव्यं चिक्कणं क्रमुकं शुभम् ॥४॥ खादिरं चूर्णकं जातित्वचं जातिफलं तथा ॥ लवङ्गैलानारिके-लबीजस्य शकलं लघु ॥ ५ ॥ स्वर्णरूप्याणि पत्राणि कर्पूरं केशरं तथा ॥ जातानि मगधे देशे नागवल्लीदलानि च ॥ ६ ॥ श्वेतवर्णानि पक्कानि जीर्णानि च दृढानि च ॥ रक्तयु-

तथा वीर्यवर्धक पदार्थों से ॥ ३ ॥ नैवेद्य अर्पण करे मुखरोचक ताम्बूल देवे और उस ताम्बूल में सुन्दर चिकनी सुपारी ॥४॥ खैर चूना जावित्री जायफल लवङ्ग लायची गरी के छोटे २ टुकड़े ॥ ५ ॥ केशर कपूर पड़े हों और सुवर्ण चांदी के तवक ऊपर से लगे हों तथा मगध देश के उत्पन्न पान हों ॥ ६ ॥ और श्वेत वर्ण के पके अधिक दिन के पुराने, अच्छे,

रस युक्त हों, ऐसे पान को शम्बरासुर के शत्रु (कामदेव) के प्रीत्यर्थ देवे ॥ ७ ॥ माक्षीक मऊसार की बनी बत्तियों से आर्ती करके पुष्पाञ्जलि अर्पण करे ॥ ८ ॥ और कामदेव के नामों को लेकर प्रार्थना करे, हे विप्र! उन नामों को मैं आपसे कहता हूँ। सर्वोपमानसौन्दर्य (सबों का उपमान भूत सौन्दर्य वाला), प्रद्युम्न नामक कृष्ण भगवान्

कानि देयानि प्रीतये शम्बरद्विषः ॥ ७ ॥ माक्षिकमलसारेण निर्मिताभिश्च वर्तिभिः ॥
नीराजयेच्चित्तभवं पुष्पाञ्जलिमथार्पयेत् ॥ ८ ॥ प्रार्थयेन्नामभिस्तस्य तानि ते कथयाम्यहम् ॥
सर्वोपमानसौन्दर्यः प्रद्युम्नाख्यो हरेः सुतः ॥ ९ ॥ मीनकेतनकन्दर्पकानङ्गा मन्मथस्तथा ॥
मारः कामात्मसम्भूतो झषकेतुर्मनोभवः ॥ १० ॥ रतिपीनघनोत्तुङ्गस्तनयोः पत्रवल्लिका ॥
यस्य वक्षसि कस्तूर्याः शोभते परिरम्भणात् ॥११॥ पुष्पधन्वञ्छम्बरारे कुसुमेषो रतेः पते ॥
मकरध्वज पञ्चेषो मदनस्मर सुन्दर ॥ १२ ॥ देवानां कार्यसिद्ध्यर्थं शिवचक्षुहुताशन ॥

के पुत्र, ॥ ९ ॥ मीनकेतन (मत्स्यध्वजा वाला), कन्दर्प, अनङ्ग, मन्मथ, मार, कामात्मसम्भूत, झषकेतु और मनोभव ये कामदेव के नाम हैं ॥ १० ॥ जिसके वक्षःस्थल में रति (काम की स्त्री) के पीन (स्थूल), घन (कठिन) उत्तुङ्ग (ऊपर को उठे) स्तनों पर कस्तुरी की बनी पत्रवल्लिका के चिह्न आलिङ्गन करने से शोभित हो रहे हैं ॥ ११ ॥ हे पुष्पधन्वन्! हे शम्बरारे! हे कुसुमेषो! हे रतिपते! हे मकरध्वज! हे पञ्चेषो! हे मदन!

हे स्मर ! हे सुन्दर ! ॥ १२ ॥ देवताओं के कार्य सिद्धि के लिये शिवजी द्वारा भस्मीभूत ! उस कर्म से आप परोपकार की सीमा कहे जाते हैं ॥ १३ ॥ आपके द्वारा विजय कार्य में वसन्त ऋतु की सहायता निमित्तमात्र ही है। और आपके मनोरञ्जनार्थ इन्द्र दिन रात तैयार रहा करते हैं ॥ १४ ॥ क्योंकि वह इन्द्र तपस्वियों से अपने

परोपकारसीमानं ध्वनयंस्तेन कर्मणा ॥ १३ ॥ निमित्तमात्रं विजये वसन्तस्य सहायता ॥ त्वन्मनोरञ्जने शक्रस्तिष्ठत्येव दिवानिशि ॥ १४ ॥ स्वपदभ्रंशने यस्मात्तपस्विभ्यो बिभेति सः ॥ त्वदन्यः शम्भुना कोऽन्यो विरुध्येद्दृढमानसः ॥ १५ ॥ परब्रह्मानन्दसमानन्ददस्त्वद्दृतेऽत्र कः ॥ महामोहस्य सैन्येषु त्वादृशः कोऽस्ति वीर्यवान् ॥ १६ ॥ अनिरुद्धपतिः कृष्णात्मजो यश्च सुरप्रभुः ॥ मलयाचलसम्भूतचन्दनागरुवासितः ॥ १७ ॥ दक्षिणादिङ्मातरिश्वा सहायस्ते जगज्जये ॥ शरत्सुधांशुसन्मित्र जगत्सर्जनकारण ॥ १८ ॥ नाथ त्वदक्षं

स्थानच्युति के विषय में भय भीत रहते हैं और आपके सिवाय दूसरा कौन दृढचित्त होकर शङ्कर के साथ विरोध कर सकता ? अर्थात् कोई नहीं ॥ १५ ॥ तथा आपके सिवाय परब्रह्मानन्द के समान आनन्ददाता दूसरा कौन है ? और महामोह की सेना में आपके समान दूसरा वीर्यशाली कौन है ? ॥ १६ ॥ आप अनिरुद्ध के स्वामी, कृष्ण के पुत्र देवताओं के प्रभु, मलयाचल चन्दन अगरु सुगन्ध से सुगन्धित हैं ॥ १७ ॥ और जगत् के विजय में दक्षिण दिशा का वायु

आपका सहायक है। हे शरत् कालीन चन्द्रमा के श्रेष्ठ मित्र ! हे जगत्सर्जन के कारण ! ॥ १८ ॥ हे नाथ ! आपका अस्त्र श्रेष्ठ अमोघ (अनिष्फल), अत्यन्त दूरगामी, मर्मच्छेदनकारियों में करुणारहित और प्रतिकार से रहित है ॥ १९ ॥ वह अस्त्र अति कोमल है फिर भी निःसीम क्षोभ का कारण है और अपने तुल्य पदार्थ का दर्शनमात्र से

परमममोघमतिदूरगम् ॥ मर्मच्छिदामकरुणं रहितं प्रतिकारतः ॥ १९ ॥ सुकुमारं श्रुतमपि निःसीमक्षोभकारणम् ॥ स्वतुल्यस्य पदार्थस्य दर्शनादपि साधकम् ॥ २० ॥ प्रवृत्तिमुख्यालङ्कार सहायेन जगज्जये ॥ सर्वे श्रेष्ठास्त्वया देवा उपहास्याः कृता विभो ॥ २१ ॥ ब्रह्मा कन्यालम्पटोऽभूद्वृन्दासक्तो हरिः स्मृतः ॥ परदारकलङ्केन अस्पृष्टव्यः शिवो यतः ॥ २२ ॥ स्वशक्त्यामेव निरतो बहुकालं व्यवायवान् ॥ दुष्कर्मनिरतश्चेन्द्रो गौतमस्य वधूं प्रति ॥२३॥ द्विजराजो गुरोर्भार्यां बलादेवापहारवान् ॥ विश्वामित्रस्तपो भ्रष्टः केनाकारि च भूयसः ॥२४॥

साधक है ॥ २० ॥ हे विभो ! जगत् के जय में प्रवृत्ति रूप मुख्य अलङ्कार सहाय है, हे विभो ! आपने सभी श्रेष्ठ देवताओं को हास्य (हँसी) का पात्र बना दिया है ॥ २१ ॥ आपके ही कारण ब्रह्मा कन्या में लम्पट, विष्णु भगवान् वृन्दा में आसक्त, और शङ्कर परस्त्री के कलङ्क लगने से अस्पृश्य हो गये ॥ २२ ॥ और जो इन्द्र था वह गौतम की स्त्री के साथ दुष्कर्म में रत होकर बहुत समय तक अपनी शक्ति में स्थित होकर समय यापन

करता भया ॥ २३ ॥ तथा चन्द्रमा ने बलात्कार से बृहस्पति की स्त्री का हरण किया और विश्वामित्र को अनेक बार तपोभ्रष्ट किसने किया ? अर्थात् आपके ही ये सब काम हैं ॥ २४ ॥ हे मानद ! प्रधानरूप से इन लोगों की गणना की, विशेष रूप से कथन में क्या लाभ है ? हे मानद ! इस लोक में ऐसे जितेन्द्रिय ब्राह्मण विरले ही होंगे, जिनको आपने वश में न किया हो ॥ २५ ॥ तसमात् हे भगवन् ! इस पूजन से प्रसन्न हों । श्रावण शुक्ल त्रयोदशी

उक्ताः प्राधान्यतस्त्वेते किं बहूक्तेन मानद ॥ विरलाः सन्ति लोकेऽस्मिन्ब्राह्मणा वश-
वर्तिनः ॥ २५ ॥ तस्मात्प्रसीद भगवन्कृतया पूजयाऽनया ॥ पूजितः श्रावणे शुक्लत्रयो-
दश्यां मनोभवः ॥ २६ ॥ प्रवृत्तिलम्पटस्यातिवीर्यं पुष्टिं ददात्यलम् ॥ निवृत्तिमार्गनियतः
स्वविकारं हरत्यपि ॥ २७ ॥ सकामस्य स्त्रियो रम्याः पीनोत्तुङ्गपयोधराः ॥ शरत्पूर्णसुधार-
श्मिवदनाः कमलेक्षणाः ॥ २८ ॥ लम्बातिनीलकुरलस्निग्धकेश्यः सुनासिकाः ॥ रम्भो-

के दिन कामदेव पूजित होने से ॥ २६ ॥ प्रवृत्तिमार्ग में निरत मनुष्य को आप अधिक वीर्य और पुष्टि को देते हैं तथा निवृत्ति मार्ग में निरत मनुष्य के कामजन्य विकार को हर लिया करते हैं ॥ २७ ॥ और सकाम पुरुष के लिये रमणीय, पीन (ऊपर को उठे हुए स्तनवाली) शरत्कालीन पूर्णचन्द्रमा के समान किरण मुख वाली, कमलनेत्र वाली ॥२८॥ बड़े अत्यन्त नील वर्ण के घुंघुराले और चिक्कन केशवाली, सुन्दर नासिका वाली, कदली समान जघन वाली, गुप्त

गुल्फ वाली, गति में जित कुञ्जर वाली (गजगामिनी) ॥ २९ ॥ पीपल पत्र के समान योनि वाली, अधिक शोभमान, बृहत् श्रोणिवाली (विपुल पश्चाद्भागवाली), शङ्ख के समान ग्रीवा वाली, विपुल जघनों से शोभित ॥ ३० ॥ बिम्बफल के समान लाल ओठ वाली, सिंह के कटि के समान कटिशाली और अनेकविध

रूर्वा गुप्तगुल्फा गतिनिर्जितकुञ्जराः ॥२९॥ कामागारा जिताश्वत्थपलाशा अतिशोभनाः ॥ बृहच्छ्रोण्यः कम्बुकण्ठ्यो बृहज्जघनशोभिताः ॥ ३० ॥ बिम्बोष्ठ्यः सिंहकट्यश्च नानालङ्कारभूषिताः ॥ मनोरमा ददात्येष सन्तुष्टः श्रावणेऽर्चया ॥ ३१ ॥ शुक्लपक्षे त्रयोदश्यां ददाति च सुतान्बहून् ॥ चिरायुषो गुणाढ्यांश्च सुस्वरूपान् सुसन्ततीन् ॥ ३२ ॥ कर्तव्यं यत्त्रयोदश्यामेतत्ते कथितं शुभम् ॥ अतः परं चतुर्दश्यां कर्तव्यं शृणु मानद ॥ ३३ ॥ अष्टम्यां कथितं देव्याः पवित्रारोपणं तव ॥ तत्र चेन्न कृतं तर्हि चतुर्दश्यां तु

अलङ्कारों से भूषित तथा मन को रमित करने वाली स्त्रियों को श्रावण मास में पूजन से प्रसन्न होकर कामदेव दिया करते है ॥ ३१ ॥ श्रावण शुक्लपक्ष त्रयोदशी के दिन पूजित होकर चिरायु, गुणसम्पन्न, सुखदायी, उत्तम अनेक सन्तति को देते हैं ॥ ३२ ॥ हे मानद ! त्रयोदशी के दिन का कर्तव्य मैंने आपसे कहा है अब इसके बाद चतुर्दशी के दिन का कर्तव्य आप श्रवण करें ॥ ३३ ॥ हे विप्र ! जो अष्टमी के

दिन देवी का पवित्रारोपण आपसे कहा है उस दिन यदि न किया हो तो चतुर्दशी के दिन करे ॥ ३४ ॥ शङ्कर भगवान् को चतुर्दशी के दिन पवित्र अर्पण करे। पवित्र बनाने का प्रकार देवी और विष्णु के समान ही है ॥३५॥ केवल प्रार्थना और नाम में भेद की कल्पना करना। शैवागम जाबालादि स्मृति के ग्रन्थों के अनुसार मैंने कहा

कारयेत् ॥ ३४ ॥ पवित्रं तु त्रिनेत्रस्य चतुर्दश्यां समर्पयेत् ॥ पवित्रसाधनं सर्वं देवीविष्णुपवित्रवत् ॥ ३५ ॥ ऊहः परं प्रकर्तव्यः प्रार्थनादिषु नामसु ॥ शैवागमे मया प्रोक्तं जाबालादिषु यत्परम् ॥ ३६ ॥ विकल्पात्कश्चिदस्तीह विशेषस्तं वदामि ते ॥ एकादशाथवा सूत्रैस्त्रिंशता चाष्टयुक्तया ॥ ३७ ॥ पञ्चाशता वा कर्तव्यं तुल्यग्रन्थ्यन्तरालकम् ॥ द्वादशाङ्गुलमानानि तथा चाष्टाङ्गुलानि वा ॥ ३८ ॥ लिङ्गविस्तारमानानि चतुरङ्गुलिकानि वा ॥ अर्पयेच्छिवतुष्ट्यर्थं विधिः पूर्वोक्त एव हि ॥ ३९ ॥ फलादि-

है ॥ ३६ ॥ और कुछ विकल्प से यहां पर विशेष बात है उसको आपसे मैं कहता हूँ। ग्यारह अथवा अड़तीस ॥ ३७ ॥ अथवा पचास तार का सूत्रों में समान ग्रन्थि वाले और समान मध्यभाग वाले पवित्र को बनावे। पवित्र बारह अङ्गुल या आठ अङ्गुल प्रमाण के होने चाहिये ॥३८॥ अथवा लिङ्ग के विस्तार मान से अथवा चार अङ्गुल के विस्तार मान से बनावे और शिव के प्रीत्यर्थं अर्पण करे और विधान पूर्व के समान ही है ॥ ३९ ॥ तथा फल वगैरह भी पूर्व के अनुसार ही

है। हे मानद ! ऐसा करने से अन्त में कैलासलोक का गामी होता है, हे वत्स ! यह मैंने आप से पूजनविधान कहा

पूर्वमेवोक्तमन्ते कैलासमाप्नुयात् ॥ एतत्ते कथितं वत्स किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥ ४० ॥
इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये त्रयोदशीचतुर्दशी-
कर्तव्यकथनं नाम विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥

अब आप क्या सुनना चाहते हैं ॥४०॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे व्या. आ. 'विद्यारत्न' पं० माधवप्रसाद-
व्याससकृतायां भाषाटीकायां त्रयोदशीचतुर्दशीकर्तव्यकथनं नाम विंशोऽध्याय। ॥ २० ॥

सनत्कुमारजी शिवजी से बोले कि हे दयानिधे ! कृपाकर पौर्णमासी का विधान कहिये, हे स्वामिन् ! माहात्म्य सुनने वालों की श्रवण करने में इच्छा अधिक बढ़ा करती है ॥ १ ॥ शिवजी बोले कि हे सनत्कुमारजी ! श्रावण शुक्ल के पूर्णिमा दिन वेदों का उत्सर्जन उपाकर्म होता है। अथवा पौष की पूर्णिमा या माघ की पूर्णिमा तिथि

सनत्कुमार उवाच—पौर्णमास्या विधिं ब्रूहि कृपां कृत्वा दयानिधे ॥ माहात्म्यं शृण्वतां स्वामिन् श्रवणेच्छा प्रवर्धते ॥ १ ॥ ईश्वर उवाच—उत्सर्जनमुपाकर्म अध्यायानां भवेदिह ॥ पौषपूर्णा माघपूर्णा अथवोत्सर्जने तिथिः॥२॥ पौषस्य प्रतिपद्वापि माघमासस्य वा भवेत् ॥ ऋक्षं वा रोहिणी संज्ञमुत्सर्जनकृतौ भवेत् ॥ ३ ॥ अथवान्येषु कालेषु स्वस्व- शाखानुसारतः ॥ सहप्रयोगो युक्तः स्यादुत्सर्गप्रकृतिद्वये ॥ ४ ॥ अतो नभः पौर्णमास्या- मुत्सर्जनमिहेष्यते ॥ उपाकर्मणि चैवं स्याच्छ्रवणर्क्षं तु बह्वृचाम् ॥ ५ ॥ चतुर्दश्यां

उत्सर्जन में ली गई है ॥ २ ॥ अथवा पौष या माघ की प्रतिपत् तिथि अथवा रोहिणी नक्षत्र उत्सर्जन में कहा है ॥ ३ ॥ अथवा अन्य समय में अपने २ शाखानुसार उत्सर्जन उपाकर्म दोनों एक साथ करना युक्त कहा है ॥ ४ ॥ इसलिये श्रावणपूर्णिमा के दिन उत्सर्जन इष्ट है और बह्वृच शाखावालों के लिये उपाकर्म में श्रवण

नक्षत्र इष्ट है ॥ ५ ॥ चतुर्दशी, पौर्णमासी अथवा प्रतिपत् तिथि के दिन या जिस किसी दिन श्रवण नक्षत्र हो उस दिन बह्वृचों (ऋग्वेदियों) का उपाकर्म होता है ॥ ६ ॥ यजुर्वेदियों का पूर्णिमा में और सामवेदियों का हस्त नक्षत्र में उपाकर्म होता है। गुरु शुक्र के अस्त रहने पर भी उपाकर्म सुखपूर्वक करे ॥ ७ ॥

पौर्णमास्यां प्रतिपद्दिवसेऽपि वा ॥ यत्र वा श्रवणर्क्षं स्यद्बह्वृचानां तु तद्दिने ॥ ६ ॥ यजुषां पौर्णमास्यां स्यात्सामगानां तु हस्तभे ॥ शुक्रगुर्वोरस्तमये उपाकर्म चरेत्सुखम् ॥७॥ आरम्भः प्रथमो न स्यादिति शास्त्रविदां मतम् ॥ ग्रहसंक्रान्तदुष्टे तु काले कालान्तरे भवेत् ॥ ८ ॥ पञ्चम्यां हस्तयुक्तायां पूर्णायां वा नभस्यके ॥ स्वस्वगृह्यानुसारेण उत्सर्जनमुपाकृतिः ॥ ९ ॥ मलमासे तु सम्प्राप्ते शुद्धमासि तु सा भवेत् ॥ नित्यं कर्मद्वयं चेदं प्रत्यब्दं नियमाचरेत् ॥ १० ॥ उपाकर्मसमाप्तौ तु संस्थितेषु द्विजातिषु ॥ अर्पणीयः सदा दीपो योषिद्भिस्तत्र

गुरु शुक्र के अस्त में प्रथम उपाकर्म का आरम्भ न करे यह शास्त्रज्ञों का मत है और ग्रहण संक्रान्ति आदि के योग से दुष्टकाल होने पर अन्य समय में करना चाहिये ॥ ८ ॥ हस्त नक्षत्र युक्त पञ्चमी या भाद्रपद पूर्णिमा के दिन अपने गृह्यसूत्रानुसार उत्सर्जन उपाकर्म को करे ॥ ९ ॥ मलमास के होनेपर शुद्धमास में करे। ये दोनों उत्सर्जन उपाकर्म नित्यकर्म हैं, इनको प्रतिवर्ष नियम से करे ॥ १० ॥ उपाकर्म के समाप्त होने पर द्विजातियों

के रहते ही उस सभा में स्त्रियाँ सभादीप अर्पण करें ॥११॥ उस दीपक का आचार्य ग्रहण करे अथवा दूसरे ब्राह्मण को देवे। प्रथम सुवर्ण या चांदी या ताम्बा के पात्र में ॥१२॥ १ सेर गेहूँ रखकर उसके ऊपर गेहूँ के पिसान का दीपक बनाकर रक्खे और उस दीपक को जलावे ॥१३॥ घृत या तेल से युक्त कर तीन बत्ती, दक्षिणा ताम्बूल के साथ ब्राह्मण को देवे ॥१४॥

संसदि ॥ ११ ॥ आचार्यः प्रतिगृह्णाति दद्याद्वान्यद्द्विजातये ॥ सौवर्णे राजते वापि पात्रे ताम्रमयेऽपि वा ॥ १२ ॥ प्रस्थमात्रं तु गोधूमा दीपं तत्पिष्टसम्भवम् ॥ दीपपात्रं संनिधाय ज्वालयेत्तत्र दीपकम् ॥१३॥ आज्येन वाथ तैलेन वर्तित्रयसमन्वितम् ॥ सदक्षिणं सताम्बूलं ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥१४॥ दीपं सम्पूज्य विप्रं च मन्त्रमेतमुदीरयेत् ॥ सदक्षिणं सताम्बूलः सभादीपोऽयमुत्तमः ॥ १५ ॥ अर्पितो देवदेवस्य मम सन्तु मनोरथाः ॥ सभादीपप्रदानेन पुत्रपौत्रादिकं कुलम् ॥ १६ ॥ सर्वं ह्युज्ज्वलतां याति वर्धते यशसा सह ॥ स्वरङ्गनाभिः सदृशं रूपं जन्मान्तरे लभेत् ॥ १७ ॥ सौभाग्यं चैव लभते भर्तुः प्रियतरा भवेत् ॥ एवं

दीपक और विप्र की पूजा करके इस मन्त्र को कहे कि यह उत्तम सभादीप दक्षिणा ताम्बूल के सहित ॥१५॥ देवदेव के लिये दिया, इस सभादीप के प्रदान से मेरे मनोरथ पूर्ण होवें और पुत्रपौत्रादि समस्त कुल ॥१६॥ उज्ज्वल-हो, यश के वृद्धि को प्राप्त हो, इस प्रकार प्रार्थना करने से जन्मान्तर में देवाङ्गनाओं के समान रूप मिलता है ॥१७॥ सौभाग्य को

पाती है और पति को अधिक प्रिय होती है। इस प्रकार पाँच वर्ष तक करके उद्यापन को करे ॥१८॥ यथाशक्ति भक्ति-
पूर्वक ब्राह्मण को दक्षिणा देवे, हे विप्र ! यह उत्तम सभादीप का महात्म्य आपसे कहा ॥१९॥ और उसी रात्रि में श्रवण-
कर्म कहा है, तदनन्तर उसीके पास सर्पबलि को करे ॥२०॥ इन दोनों कर्म को अपने २ गृह्यसूत्र को देखकर करे और

कृत्वा पञ्चवर्षं तत उद्यापनं चरेत् ॥ १८ ॥ विप्राय दक्षिणां दद्याद्यथाशक्ति च भक्तितः ॥ सभादीपस्य माहात्म्यमेतत्ते कथितं शुभम् ॥ १९ ॥ श्रवणाकर्मसंस्था च तस्यामेव निशि स्मृता ॥ तदुत्तरं सर्पबलिस्तत्रैव च विधीयते ॥ २० ॥ इदं संस्थाद्वयं कुर्यात्स्वस्वगृह्यमवेक्ष्य च ॥ हयग्रीवस्यावतारस्तस्यामेव तिथौ मतः ॥ २१ ॥ हयग्रीवजयन्त्यास्तु अतोऽत्रैव महोत्सवः ॥ उपासनावतां तस्य नित्यस्तु परिकीर्तितः ॥ २२ ॥ श्रावण्यां श्रवणे पूर्वं जातो हयशिरा हरिः ॥ जगाम सामवेदं तु सर्वकिल्बिषनाशनम् ॥ २३ ॥ सिन्धूनदीवितस्तायां प्रवृत्तस्तत्र सङ्गमे ॥ श्रवणर्क्षे ततस्तत्र स्नानं सर्वार्थसिद्धिदम् ॥ २४ ॥ तत्र सम्पूजयेद्विष्णुं

उसी तिथि में हयग्रीव भगवान् का अवतार कहा है ॥२१॥ इसलिये इस दिन हयग्रीवजयन्ती का महोत्सव करे। हयग्रीव
के उपासकों के लिए यह नित्यकर्म (अवश्यकर्तव्य) है ॥२२॥ श्रावणपूर्णिमा के दिन श्रवणनक्षत्र में हयग्रीव भगवान् ने
प्रथम जन्म धारण किया और उस समय समस्त पापनाशक सामवेद का गान किया ॥ २३ ॥ सिन्धु और वितस्ता नदी
के सङ्गम में श्रवणनक्षत्र में जन्म लेकर गान किया था इसलिये उस सङ्गम में स्नान समस्त कार्य की सिद्धि को देता है

॥ २४ ॥ वहां पर शार्ङ्गधनुष चक्र गदाधारी विष्णु भगवान् का पूजन करे और सामवेद का श्रवण करे तथा ब्राह्मणों का पूजन अवश्य करे ॥ २५ ॥ और उसी जगह स्वजनों के साथ खेलकूद तथा भोजन करे और उसी जगह स्त्रियाँ पतिप्राप्ति के लिये जलक्रीड़ा को करें ॥ २६ ॥ अपने २ देश तथा गृह में भी महोत्सव को करे और हयग्रीव का पूजन करे तथा

शङ्खचक्रगदाधरम् ॥ श्रोतव्यान्यथ सामानि पूज्या विप्राश्च सर्वथा ॥ २५ ॥ क्रीडितव्यं च भोक्तव्यं तत्रैव स्वजनैः सह ॥ जलक्रीडा च कर्तव्या नारीभिर्भर्तृलब्धये ॥ २६ ॥ स्वस्वदेशे स्वस्वगृहे अपि कुर्यान्महोत्सवम् ॥ पूजयेच्च हयग्रीवं जपेन्मन्त्रं च तं शृणु ॥ २७ ॥ प्रणवादिर्नमःशब्दस्ततो भगवते इति ॥ धर्मायाथ चतुर्थ्यन्तं योज्य चात्मविशोधनम् ॥ २८ ॥ पुनरन्ते नमःशब्दो मन्त्रश्चाष्टादशाक्षरः ॥ सर्वसिद्धिकरश्चायं षट्प्रयोगैकसाधकः ॥ २९ ॥ पुरश्चरणमेतस्य अक्षराणां तु संख्यया ॥ लक्षं वाथ सहस्रं वा कलौ तु स्याच्चतुर्गुणम् ॥ ३० ॥

जप करे। उस मन्त्र को आप सुनिये ॥ २७ ॥ आदि में प्रणव (ओं) शब्द को बाद भगवते कहकर धर्माय ो कहें तदनन्तर चतुर्थ्यन्त आत्मविशोधन (आत्मविशोधनाय) शब्द को जोड़े ॥ २८ ॥ और पुनः अन्त में नमः ो कहे। इस प्रकार यह अष्टादश (१८) अक्षर का मन्त्र (ॐ नमो भगवते धर्माय आत्मविशोधनाय नमः) स्त सिद्धि को करने वाला, वश्य मोहनादि षट् प्रयोगों का साधक यह एक ही मन्त्र है ॥ २९ ॥ इसका पुरश्चरण अक्षर

संख्या के अनुसार १८ लाख अथवा १८ हजार कहा है परन्तु कलि में चतुर्गुण करना चाहिये ॥ ३० ॥ ऐसा करने से हयग्रीव भगवान् प्रसन्न होकर उत्तम कामना को देते हैं। इसी पूर्णिमा के दिन रक्षाबन्धन कहा गया है ॥ ३१ ॥ रक्षाबन्धन समस्त रोगों का और समस्त अशुभों का नाशक है। हे मुनिशार्दूल ! इस विषय में आप पुरातन इतिहास को

एवं कृते हयग्रीवस्तुष्टः सत्कामदो भवेत् ॥ एतस्यामेव पूर्णायां रक्षाबन्धनमिष्यते ॥ ३१ ॥
सर्वरोगोपशमनं सर्वाशुभविनाशनम् ॥ शृणु त्वं मुनिशार्दूल इतिहासं पुरातनम् ॥ ३२ ॥
इन्द्राण्या यत्कृतं पूर्वमिन्द्रस्य जयसिद्धये ॥ देवासुरमभूद्युद्धं पुरा द्वादशवार्षिकम् ॥३३॥ शक्रं
दृष्ट्वा तदा श्रान्तं देवी प्राह सुरेश्वरम् ॥ अद्य भूतदिनं देव प्रातः सर्वं भविष्यति ॥३४॥ अहं
रक्षां विधास्यामि तेनाजेयो भविष्यसि ॥ इत्युक्त्वा पौर्णमास्यां सा पौलोमी कृतमङ्गला
॥ ३५ ॥ बबन्ध दक्षिणे पाणौ रक्षां मोदप्रदां ततः ॥ बद्धरक्षस्ततः शक्रः कृतस्वस्त्ययनो

सुनिये ॥३२॥ प्रथम इन्द्राणी ने इन्द्र की जयसिद्धि के लिये जो कुछ किया है। हे विप्र ! प्रथम बारह वर्ष तक लगातार देवासुर संग्राम हुआ ॥ ३३ ॥ उस समय इन्द्राणी ने सुरेश्वर इन्द्र को श्रान्त (थका) देखकर कहा कि हे देव ! आज चतुर्दशी का दिन है इसलिये कल्ह प्रातःकाल सब अच्छा होगा ॥३४॥ मैं रक्षा को करूंगी, जिसके करने से आप अजेय होंगे। यह कहकर इन्द्रणी ने पूर्णिमा के दिन मङ्गलादि करके ॥ ३५ ॥ मोद (हर्ष) को देनेवाली रक्षा को दहिने हाथ

में बाँध दी, बाद रक्षा बाँधकर इन्द्र ने ब्राह्मणों के साथ स्वस्तिवाचन को किया ॥३६॥ और दानवों की सेना पर चढ़ाई की, प्रतापशाली इन्द्र क्षणभर में ही दानवों को जीतकर तीनों जगत् में पुनः विजयी हुये ॥ ३७ ॥ हे मुनीश्वर ! आपसे यह रक्षा का प्रभाव वर्णन किया । यह जय सुख पुत्र आरोग्य धन को देने वाला है ॥ ३८ ॥ सनत्कुमारजी बोले कि हे

द्विजैः ॥३६॥ दुद्राव दानवानीकं क्षणाज्जिग्ये प्रतापवान् ॥ वासवो विजयी भूत्वा पुनरेव जगत्त्रये ॥३७॥ एष प्रभावो रक्षायाः कथितस्ते मुनीश्वर ॥ जयदः सुखदश्चैव पुत्रारोग्य-धनप्रदः ॥ ३८ ॥ सनत्कुमार उवाच—क्रियते केन विधिना रक्षाबन्धः सुरोत्तम ॥ कस्यां तिथौ कदा देव एतन्मे वक्तुमर्हसि ॥ ३९ ॥ यथायथा हि भगवन्विचित्राणि प्रभाषसे ॥ तथातथा न मे तृप्तिर्बह्वर्थाः शृण्वतः कथाः ॥ ४० ॥ ईश्वर उवाच—सम्प्राप्ते श्रावणे मासि पौर्णमास्यां दिनोदये ॥ स्नानं कुर्वीत मतिमान् श्रुतिस्मृतिविधानतः ॥४१॥ सन्ध्याजपादि

सुरोत्तम शिवजी ! किस विधि से किस तिथि में और किस समय रक्षाबन्धन को करे, हे देव ! यह सब आप मुझसे कहिये ॥ ३९ ॥ हे भगवन् ! जैसे २ आप विचित्र कथा को कहते हैं तैसे २ अनेकार्थ से युक्त कथाओं के सुनने से मुझे तृप्ति नहीं होती है ॥ ४० ॥ शिवजी बोले कि हे सनत्कुमारजी ! श्रावण मास की पूर्णिमा के दिन प्रातःकाल के समय बुद्धिमान् वेद स्मृति के विधान से स्नान को करे ॥ ४१ ॥ सन्ध्या जप आदि करके पितर देवता

ऋषियों का तर्पण करके बाद सुवर्ण पात्र की रक्षा बनावे ॥ ४२ ॥ उस रक्षापात्र को सुवर्णसूत्र से बाँध कर मोती आदि से भूषित कर निर्मल रेशमी सूत्र के बने ॥ ४३ ॥ विचित्र ग्रन्थि से युक्त, पदगुच्छों से शोभित, सर्षप अक्षतों को अन्दर गर्भ में रखकर मनोहर बनावे ॥ ४४ ॥ वहाँ प्रथम कलश स्थापित कर उस पर

सम्पाद्यपितॄन्देवानृषींस्तथा ॥ तर्पयित्वा ततः कुर्यात्स्वर्णपात्रविनिर्मिताम् ॥४२॥ हैमसूत्रैश्च सम्बद्धां मौक्तिकादिविभूषिताम् ॥ कौशेयतन्तुभिः कीर्णैर्विचित्रैर्मलवर्जितैः ॥४३॥ विचित्रग्रन्थिसंयुक्तां पदगुच्छैश्च राजिताम् ॥ सिद्धार्थैश्चाक्षतैश्चैव गर्भितां सुमनोहराम् ॥ ४४ ॥ संस्थाप्य कलशं तत्र पूर्णपात्रे तु तां न्यसेत् ॥ उपविश्यासने रम्ये सुहृद्भिः परिवारितः ॥४५॥ वेश्यानर्तनगानादिकृतकौतुकमङ्गलः ॥ ततः पुरोधसा कार्यो रक्षाबन्धः समन्त्रकः ॥४६॥ येन बद्धो बली राजा दानवेन्द्रो महाबलः ॥ तेन त्वामनुबध्नामि रक्षे मा चल मा चल ॥४७॥ ब्राह्मणैः क्षत्रियैर्वैश्यैः शूद्रैश्चैवान्यमानवैः ॥ रक्षाबन्धः प्रकर्तव्यो द्विजान्सम्पूज्य यत्नतः ॥४८॥

पूर्णपात्र रखकर उसके ऊपर रक्षा को रक्खे और अपने सुन्दर आसन पर सुहृद् बान्धवों के साथ बैठकर ॥ ४५ ॥ वेश्याओं का नाच गान वाद्य आदि कौतुक मङ्गल को करे, बाद पुरोहित मन्त्र पूर्वक रक्षाबन्धन को करे ॥ ४६ ॥ मन्त्र—जिस बन्धन से दानवेन्द्र, महाबली राजा बली को बाँधा उससे आपको बांधता हूँ हे रक्षे! तुम

कभी चलायमान न होना, ॥ ४७ ॥ ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और अन्य मनुष्य भी प्रथम ब्राह्मणों का पूजन करके अवश्य रक्षावन्धन को करें ॥ ४८ ॥ जो इस विधि से रक्षावन्धन को करता है वह समस्त दोषों से रहित होकर वर्ष पर्यन्त सुखी रहता है ॥ ४६ ॥ जो विधानवेत्ता मनुष्य इस शुद्ध श्रावण मास में रक्षावन्धन को करता है वह पुत्र

अनेन विधिना यस्तु रक्षाबन्धनमाचरेत् ॥ स सर्वदोषरहितः सुखी संवत्सरं भवेत् ॥ ४६ ॥ यः श्रावणे विमलमासि विधानविज्ञो रक्षाविधानमिदमाचरते मनुष्यः ॥ आस्ते सुखेन परमेण स वर्षमेकं पुत्रैश्च पौत्रसहितः ससुहृज्जनश्च ॥ ५० ॥ भद्रायां च न कर्तव्यो रक्षाबन्धः शुचिव्रतैः ॥ बद्धा रक्षा तु भद्रायां विपरीतफलप्रदा ॥ ५१ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये उपाकर्मोत्सर्जनश्रावणीकर्मसर्पबलिसभादीपहय-श्रीवजयन्तीरक्षाबन्धविधिकथनं नामैकविंशोऽध्याय ॥ २१ ॥

पौत्र सुहृद् जनों के सहित एक वर्ष परम सुख से वास करता है ॥ ५० ॥ परन्तु भद्रा में रक्षावन्धन कर्म को नहीं करे, यदि पवित्र व्रत को करने वाले भद्रा में रक्षावन्धन को करते हैं तो उसका विपरीत (उलटा) फल होता है ॥ ५१ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये व्या. आ. 'विद्यारत्न' पं. माधवप्रसादव्यासकृतायां भाषा-टीकायां श्रावणीकर्म-सर्पवलि-सभादीप हयग्रीवजयन्ती-रक्षावन्धन-विधिकथनं नामैकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥

शिवजी बोले कि हे मुनिश्रेष्ठ ! श्रावण शुक्लपक्ष में चतुर्थी के दिन समस्त कार्यों के फल को देने वाला सङ्कष्ट हरण नामक व्रत होता है ॥ १ ॥ सनत्कुमार जी बोले हे देवदेव ! किस विधान से व्रत और पूजन करना होता है तथा उद्यापन कब करना चाहिये, यह सब मुझसे विस्तार से कहिये ॥ २ ॥ शिव जी बोले कि हे विप्र !

ईश्वर उवाच—श्रावणे बहुले पक्षे चतुर्थ्यां मुनिसत्तम ॥ व्रतं सङ्कटहरणं सर्वकाम-फलप्रदम् ॥ १ ॥ सनत्कुमार उवाच—क्रियते केन विधिना किं कार्यं किं च पूजनम् ॥ उद्यापनं कदा कार्यं तन्मे वद सुविस्तरम् ॥ २ ॥ ईश्वर उवाच—चतुर्थ्यां प्रातरुत्थाय दन्तधावनपूर्वकम् ॥ आह्यं व्रतमिदं पुण्यं सङ्कष्टहरणं शुभम् ॥ ३ ॥ निराहारोऽस्मि देवेश यावच्चन्द्रोदयो भवेत् ॥ भोक्ष्यामि पूजयित्वा त्वां सङ्कष्टात्तारयस्व माम् ॥ ४ ॥ एवं सङ्कल्प्य वैधात्रः स्नात्वा कृष्णतिलैः शुभैः ॥ विधाय चाह्निकं सर्वं पश्चात्पूज्यो गणाधिपः ॥ ५ ॥ त्रिभिर्माषैस्तदर्धेन तृतीयांशेन वा पुनः ॥ यथाशक्त्याऽथवा हैमीं

चतुर्थी के दिन प्रातःकाल उठकर दन्तधावन आदि कृत्य को कर इस शुभ पुण्यप्रद सङ्कष्टहरण नामक व्रत को ग्रहण करे ॥ ३ ॥ और यह कहे कि हे देवेश ! मैं आज चन्द्रोदय तक निराहार रहूँगा और आपका पूजन कर भोजन करूँगा आप मेरा सङ्कष्ट से उद्धार करें ॥ ४ ॥ हे वैधात्र ! इस तरह सङ्कल्प कर कृष्ण तिलों से

स्नान कर और समस्त आह्निक (नित्य) कर्म को कर गणाधिप का पूजन करे ॥ ५ ॥ और बुद्धिमान् तीन मासा, डेढ़ मासा, एक मासा अथवा अपने शक्ति के अनुसार सुवर्ण की प्रतिमा बनावे ॥ ६ ॥ सुवर्ण के अभाव में चाँदी की, चाँदी के अभाव में ताम्बा की प्रतिमा बनावे। सर्वथा दरिद्र हो तो सुन्दर मिट्टी की प्रतिमा बनानी चाहिये ॥ ७ ॥ परन्तु धन की शठता न करे, क्योंकि धनशाठ्य करने से कार्य नष्ट हो जाता है। प्रथम सुन्दर

प्रतिमां कारयेद् बुधः ॥ ६ ॥ हेमाभावे तु रूप्यस्य ताम्रस्यापि यथासुखम् ॥ सर्वथा तु दरिद्रेण कर्तव्या मृन्मयी शुभा ॥ ७ ॥ वित्तशाठ्यं न कर्तव्यं कृते कार्यं विनश्यति ॥ रम्येऽष्टदलपद्मे तु कुम्भं वस्त्रयुतं न्यसेत् ॥ ८ ॥ जलपूर्णं तत्र पूर्णपात्रे देवं प्रपूजयेत् ॥ षोडशैरुपचारैस्तु मन्त्रैर्वैदिकतान्त्रिकैः ॥ ९ ॥ मोदकान्कारयेद्विप्र तिलयुक्तान्दशोत्त-मान् ॥ देवाग्रे स्थापयेत्पञ्च पञ्च विप्राय दापयेत् ॥ १० ॥ पूजयित्वा तु तं विप्रं भक्ति-भावेन देववत् ॥ दक्षिणां तु यथाशक्ति दत्त्वा च प्रार्थयेत्ततः ॥ ११ ॥ विप्रवर्य नम-

अष्टदल कमल के ऊपर वस्त्र के साथ घटस्थापन करे॥८॥ और जल से पूर्ण करे, उस पर पूर्णपात्र रखकर प्रतिमा स्थापित कर षोडशोपचार से वैदिक या तान्त्रिक मन्त्रों द्वारा पूजन करे ॥ ९ ॥ हे विप्र ! तिलयुक्त उत्तम दश मोदक बनावे। उनमें से पाँच गणाधिप के लिए अर्पण करे और पाँच ब्राह्मण को देवे ॥ १० ॥ उस ब्राह्मण की भक्तिभाव से देवतावत्

पूजन कर यथशक्ति दक्षिणा देकर ब्राह्मण की प्रार्थना करे ॥११॥ और यह कहे कि हे विप्रश्रेष्ठ ! हे देव ! आपको नमस्कार है, और आपके लिये इन पाँच मोदकों को फल दक्षिणा के सहित देता हूँ ॥१२॥ द्विजश्रेष्ठ ! आप ग्रहण करें और आपत्ति से मेरा उद्धार करें तथा मैंने जो कुछ द्रव्यहीन कम या अधिक किया है ॥१३॥ हे विप्ररूप गणेश्वर ! वह

स्तुभ्यं मोदकांस्ते ददाम्यहम् ॥ सफलान्पञ्चसंख्याकान्देव दक्षिणया युतान् ॥ १२ ॥ आपदुद्धरणार्थाय गृहाण द्विजसत्तम ॥ अन्यूनमतिरिक्तं वा द्रव्यहीनं मया कृतम् ॥१३॥ तत्सर्वं पूर्णतां यातु विप्ररूप गणेश्वर ॥ ब्राह्मणान्भोजयेच्चैव स्वाद्वन्नेन यथासुखम् ॥१४॥ चन्द्रायार्घ्यं प्रदातव्यं शृणु तन्मन्त्रमादितः ॥ १५ ॥ क्षीरसागरसम्भूत सुधारूप निशाकर ॥ गृहाणार्घ्यं मया दत्तं गणेशप्रीतिवर्धन ॥१६॥ एवंकृते विधाने तु प्रसन्नः स्याद्गणाधिपः ॥ ददाति वाञ्छितान्कामांस्तस्मात्तद्व्रतमाचरेत् ॥ १७ ॥ विद्यार्थी लभते विद्यां

सब पूर्णता को प्राप्त होवे। और स्वादयुक्त अन्नों से यथासुख ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥१४॥ तथा चन्द्रमा को अर्घ्य देवे, उस अर्घ्यमन्त्र को आदर पूर्वक सुनिये ॥१५॥ हे क्षीरसागरसम्भूत ! हे सुधारूप ! हे निशाकर ! हे गणेशप्रीतिवर्धन ! मुझसे दिये गये अर्घ्य को आप ग्रहण करें ॥१६॥ इस प्रकार विधान से व्रत करने पर गणाधिप प्रसन्न होते हैं और इच्छित कामों को देते हैं इसलिये इस व्रत को करे ॥१७॥ विद्यार्थी विद्या को, धनार्थी धन को, पुत्रार्थी पुत्र को प्राप्त

करता है मोक्षार्थी गति को कार्यार्थी कार्य को पाता है और रोगी रोग से मुक्त हो जाता है ॥ १८ ॥ आपत्ति में मग्न व्याकुल चित्तवाले, चिन्ता से ग्रस्त मनवाले और सुहृद जनों के वियोगी मनुष्यों के ॥१६॥ समस्त सङ्कष्ट को हरने वाला, समस्त अभीष्ट फल को देने वाला, पुत्रपौत्र आदि को देने वाला और समस्त सम्पत्ति को करने वाला यह व्रत है ॥२०॥

धनार्थी लभते धनम् ॥ पुत्रार्थी पुत्रमाप्नोति मोक्षार्थी लभते गतिम् ॥ कार्यार्थी
कार्यमाप्नोति रोगी रोगाद्विमुच्यते ॥१८॥ आपत्सु वर्तमानानां नृणां व्याकुलचेतसाम् ॥
चिन्तया ग्रस्तमनसां वियोगः सुहृदां तथा ॥ १६ ॥ सर्वसङ्कष्टहरणं सर्वाभीष्टफलप्रदम् ॥
पुत्रपौत्रादिजननं सर्वसम्पत्करं नृणाम् ॥ २० ॥ पूजने च जपे चैव मन्त्रं ते कथयाम्यहम् ॥
तारोत्तरं नमः शब्दं हेरम्बं मदमोदितम् ॥२१॥ चतुर्थ्यन्तं प्रशस्तं च संकष्टस्य निवारणम् ॥
स्वाहान्तं च वदेन्मन्त्रमेकविंशतिवर्णकम् ॥२२॥ इन्द्रादिलोकपालांश्च समन्तादर्चयेत्सुधीः ॥

पूजन और जप में विहित मन्त्र को आपसे कहता हूँ । प्रथम ओंकार शब्द बाद नमः शब्द और हेरम्ब शब्द के बाद मद-मोदित शब्द ॥ २१ ॥ तदनन्तर सङ्कष्ट निवारण शब्द चतुर्थ्यन्त बनाकर अन्त में स्वाहा शब्द को कहे इस प्रकार २१ अक्षर का (ओं नमो हेरम्बाय मदमोदिताय सङ्कष्टनिवारणाय स्वाहा) मन्त्र हुआ ॥२२॥ तथा बुद्धिमान दश दिशाओं में

इन्द्रादि दश दिक्पालों का पूजन करे। और हे विप्र! मोदक बनाने का दूसरा प्रकार भी आपसे कहता हूं ॥२३॥ घृत में पके तिलयुक्त मूङ्ग के मोदक गिरी के टुकड़ों को डार कर बनावे और उन मोदकों को गणेश को अर्पण करे ॥२४॥ बाद दूर्वा के अङ्कुरों को लेकर पृथक् २ नामपदों से गणनाथ का पूजन करे। हे विप्र! उन नामों को आप मुझसे सुनिये

मोदकानां प्रकारं च अन्यं ते कथयाम्यहम् ॥ २३ ॥ पक्वमुद्गतिलैर्युक्ता मोदका घृतपाचिताः ॥ अर्पणीया गणेशाय नारिकेलेन गर्भिताः ॥२४॥ ततो दूर्वाङ्कुरान्गृह्णन्नेभिर्नामपदैः पृथक् ॥ पूजयेद्गणनाथं च तानि नामानि मे शृणु ॥ २५ ॥ गणाधिप नमस्तेऽस्तु उमापुत्राघनाशन ॥ एकदन्तेभवक्रेति तथा मूषकवाहन ॥ २६ ॥ विनायकेशपुत्रेति सर्वसिद्धिप्रदायक ॥ विघ्नराज स्कन्दगुरो सर्वसङ्कष्टनाशन ॥ २७ ॥ लम्बोदर गणाध्यक्ष गौर्यङ्गमलसम्भव ॥ धूम्रकेतो भालचन्द्र सिन्दूरासुरमर्दन ॥ २८ ॥ विद्यानिधान विकट शूर्पकर्णेति

॥ २५ ॥ हे गणाधिप! आपको नमस्कार है, हे उमापुत्र! हे अघनाशन! हे एकदन्त! हे इभवक्त्र! हे मूषकवाहन! ॥ २६ ॥ हे विनायक! हे ईशपुत्र! हे सर्वसिद्धिप्रदायक! हे विघ्नराज! हे स्कन्दगुरो! हे सर्वसङ्कष्टनाशन! ॥ २७ ॥ हे लम्बोदर! हे गणाध्यक्ष! हे गौर्यङ्गमलसम्भव! हे धूम्रकेतो! हे भालचन्द्र! हे सिन्दूरासुरमर्दन! ॥ २८ ॥ हे विद्यानिधान! हे विकट! हे शूर्पकर्ण आपको नमस्कार है। इन २१ नामों से गणेश जी का पूजन

करे ॥ २९ ॥ और भक्ति से नम्र होकर प्रसन्नचित्त से गणेश देव की प्रार्थना करे तथा यह कहे कि हे विघ्नराज ! हे उमापुत्र ! हे अघनाशन ! आपको नमस्कार है ॥ ३० ॥ आज मैंने जिस उद्देश्य से यथाशक्ति पूजन किया है उससे मुझपर आप शीघ्र प्रसन्न हों और मेरे हृदय की समस्त कामनाओं को पूर्ण करें ॥ ३१ ॥ हे प्रभो !

चैव हि ॥ पूजयेद्गणपं चैवमेकविंशतिनामभिः ॥ २९ ॥ प्रार्थयेच्च ततो देवं भक्तिनम्रः प्रसन्नधीः ॥ विघ्नराज नमस्तेऽस्तु उमापुत्राघनाशन ॥ ३० ॥ यदुद्दिश्य कृतं मेऽद्य यथाशक्ति प्रपूजनम् ॥ तेन तुष्टो ममाद्याशु हृत्स्थान्कामान्प्रपूरय ॥ ३१ ॥ विघ्नान्नाशय मे सर्वान्विविधोपस्थितान्प्रभो ॥ त्वत्प्रसादेन कार्याणि सर्वाणीह करोम्यहम् ॥ ३२ ॥ शत्रूणां बुद्धिनाशं च मित्राणामुदयं कुरु ॥ ततो होमं प्रकुर्वीत शतमष्टोत्तरं तथा ॥ ३३ ॥ मोदकैर्वायनं दद्याद्व्रतसम्पूर्णहेतवे ॥ लड्डुकैर्मोदकैर्वापि सप्तभिः फलसंयुतम् ॥ ३४ ॥ गणेशप्रीणनार्थाय

मेरे अनेक प्रकार के उपस्थित समस्त विघ्नों का नाश करें। हे प्रभो ! मैं आपके प्रसाद से समस्त कार्यों को करता हूँ ॥३२॥ मेरे शत्रुओं का नाश और मित्रों का उदय करें। इस प्रकार प्रार्थना कर अष्टोत्तरशत (१०८) आहुति देवे ॥३३॥ तथा व्रतपूर्ति के लिये मोदकों का वायन देवे। सात लड्डू मोदक, फलों से युक्त कर कहे कि ॥ ३४ ॥ मैं गणेश के

प्रीत्यर्थ ब्राह्मण को देता हूँ। तदनन्तर पवित्र कथा को सुनकर अच्छी तरह अर्घ्य को देवे ॥३५॥ हे सत्तम! इस मन्त्र से चन्द्रमा को पाँचबार अर्घ्य देवे ॥३६॥ यह कहे कि क्षीरसागर से प्रादुर्भूत! हे अत्रिगोत्र में जन्म धारण करनेवाले! हे शशिन्! रोहिणी के साथ मुझसे दिये हुए इस अर्घ्य को आप ग्रहण करें ॥३७॥ तदनन्तर क्षमा प्रार्थना कर यथाशक्ति ब्राह्मणों को भोजन करावे और जो देवता, ब्राह्मणों के अर्पण से शेष हो उसको स्वयं भोजन करे ॥३८॥ और मौन

ब्राह्मणाय ददाम्यहम् ॥ कथां श्रुत्वा ततः पुण्यां दद्यादर्घ्यं प्रयत्नतः ॥ ३५ ॥ चन्द्राय पञ्चवारं तु मन्त्रेणानेन सत्तम ॥ ३६ ॥ क्षीरोदार्णवसम्भूत अत्रिगोत्रसमुद्भव ॥ गृहाणार्घ्यं मया दत्तं रोहिण्या सहितः शशिन् ॥ ३७ ॥ ततः क्षमापयेद्देवं शक्त्या विप्रांश्च भोजयेत् ॥ स्वयं भुञ्जीत तच्छेषं यदेव ब्राह्मणार्पितम् ॥ ३८ ॥ सप्तग्रासान्मौनयुक्तो ह्यशक्तस्तु यथासुखम् ॥ इत्थं कुर्यान्त्रिमासेषु चतुर्ष्वपि विधानतः ॥ ३९ ॥ उद्यापनं पञ्चमे च कुर्याद्धीमान्प्रयत्नतः ॥ सौवर्णं वक्रतुण्डं च शक्त्या कुर्याद्विचक्षणः ॥ ४० ॥ पूर्वोक्तेन विधानेन पूजये-

होकर सात ग्रास भोजन करे। यदि ऐसा न कर सके तो यथासुख भोजन करे। इस तरह तीन या चार मास पर्यन्त विधान से व्रत करे ॥३९॥ और पांचवें मास में बुद्धिमान् अच्छी तरह उद्यापन करे। विद्वान् प्रथम वक्रतुण्ड की प्रतिमा यथाशक्ति बनावे ॥४०॥ भक्तिमान् मनुष्य पूर्वोक्त विधान से पूजन करे और चन्दन सुगन्ध अनेकविध पुष्पों से पूजन करे

॥४१॥ एकाग्रचित्त होकर नारियल फल से अर्घ्य देवे और गणेशभक्त ब्राह्मण को फल सहित वायन का दान कर देवे ॥४२॥ सूप पायस दक्षिणा के साथ गणेश की सुवर्ण प्रतिमा लाल वस्त्र से वेष्टित कर ब्राह्मण को देवे ॥४३॥ और व्रत-पूर्त्ति के निमित्त एक आढ़क (५ सेर) तिल देवे तथा क्षमाप्रार्थना कराकर कहे कि इससे विघ्नेश प्रसन्न होवें ॥४४॥

द्भक्तिमान्नरः ॥ चन्दनेन सुगन्धेन पुष्पैर्नानाविधैः शुभैः ॥ ४१ ॥ नारिकेलफलेनैव दद्या-दर्घ्यं समाहितः ॥ दद्याद्भक्ताय विप्राय वायनं फलसंयुतम् ॥४२॥ शूर्पपायससंयुक्तं रक्तव-स्त्रेण वेष्टितम् ॥ सौवर्णं गणपं तस्मै दद्याच्चैव सदक्षिणम् ॥ ४३ ॥ तिलानामाढकं दद्या-द्व्रतसम्पूर्णहेतवे ॥ ततः क्षमापयेद्देवं विघ्नेशः प्रीयतामिति ॥ ४४ ॥ इत्थमुद्यापनं कृत्वा हयमेधफलं लभेत् ॥ सर्वकार्याणि सिध्यन्ति मनोऽभिलषितान्यपि ॥ ४५ ॥ पुरा कल्पे गते स्कन्दे पार्वत्या वै कृतं किल ॥ चतुर्ष्वपि च मासेषु मम वाक्येन सत्तम ॥ ४६ ॥ पञ्चमे मासि दृष्टस्तु कार्तिकेयो ह्यपर्णया ॥ समुद्रपानवेलायां ह्यगस्त्येन पुरा कृतम् ॥४७ ॥ त्रिषु

इस प्रकार उद्यापन करने से हयमेध यज्ञ के फल को पाता है। और मनोभिलषित समस्त कार्य्य सिद्ध होते हैं ॥४५॥ हे श्रेष्ठ! पहले कल्प में मेरी आज्ञा से पार्वतीजी ने चार मास तक इस व्रत को किया था ॥४६॥ बाद पाँचवे मास में पार्वती ने कार्तिकेय को पुत्ररूप में देखा। और अगस्त्य ऋषि ने समुद्र पान करने के समय इस व्रत को किया ॥४७॥

तब गणेशजी के प्रसाद से तीन मास में ही सिद्धी मिल गई थी। हे विप्रेन्द्र ! दमयन्ती ने छः मास तक इस व्रत को किया ॥४८॥ राजा नल का अन्वेषण करते समय व्रत करने से ही राजा नल को पुनः देखा। और जिस समय चित्रलेखा द्वारा अनिरुद्ध को बाणासुर के नगर में ले जानेपर ॥४९॥ अनिरुद्ध कहां गये और कौन ले गया, इस तरह जब कामदेव अर्थात् प्रद्युम्न व्याकुल

मासेषु विघ्नेशप्रसादात्सिद्धिमाप सः ॥ षण्मासावधि विप्रेन्द्र दमयन्त्या कृतं त्विदम् ॥ ४८ ॥ नलमन्वेषयन्त्या च ततो दृष्टो नलोऽभवत् ॥ नीतेऽनिरुद्धे बाणस्य नगरं चित्रलेखया ॥ ४९ ॥ क गतः केन नीतोऽसावित्यभूद्व्याकुलः स्मरः ॥ प्रद्युम्नं पुत्रशोकार्तं प्रीत्या रुक्मिण्यभाषत ॥ ५० ॥ शृणु पुत्र प्रवक्ष्यामि यद्भूतं मामके गृहे ॥ राक्षसेन पुरानीते बालके त्वयि खण्डिते ॥ ५१ ॥ त्वद्वियोगजदुःखेन हृदयं मम दारितम् ॥ कदा द्रक्ष्याम्यहं पुत्रमुखमत्यन्तसुन्दरम् ॥ ५२ ॥ अन्यस्त्रीणां सुतान्दृष्ट्वा मम चेतो विदीर्यते ॥ मम पुत्रो

होगये तब उस समय रुक्मिणी ने प्रेम से यह कहा कि ॥५०॥ हे पुत्र ! जिस व्रत को मैं कहती हूँ उसको सुनो। पहले मेरे सौरी के गृह से जन्म के समय जब राक्षस ने तुम्हारा हरण किया था ॥५१॥ उस समय तुम्हारे वियोग से मेरा हृदय फट गया कि मैं अति सुन्दर पुत्रमुख को कब देखूँगी ॥५२॥ दूसरी स्त्रियों के पुत्रों को देखकर मेरा हृदय फटने लगता

था कि हाय ! अवस्था के अनुसार यह मेरा ही पुत्र न होवे ॥५३॥ इस तरह चिन्ता से आकुल दशा में मग्न मुझको बहुत वर्ष बीत गये। तब दैवयोग से मेरे गृह लोमश मुनि आये ॥५४॥ उन्होंने समस्त चिन्तानाशक व्रत का विधिवत् उपदेश किया था तब मैंने चार मास तक सङ्कष्टचतुर्थी का व्रत किया ॥५५॥ उसी व्रत के प्रभाव से तुमने संग्राम में शम्बर का वध किया और अपने गृह को आये। इसलिये हे पुत्र! तुम इस व्रत को समझकर करोगे तो पुत्र का

भवेन्नासौ वयसा मे न मानतः ॥ ५३ ॥ इति चिन्ताकुलाया मे गतान्यब्दानि भूरिशः ॥ ततो मे दैवयोगेन लोमशो मुनिरागतः ॥ ५४ ॥ तेनोपदिष्टं विधिवत्सर्वचिन्ताहरं व्रतम् ॥ सङ्कटाख्यचतुर्थ्यास्तु चतुर्वारं मया कृतम् ॥ ५५ ॥ तत्प्रसादात्त्वमायातो हत्वा शम्बरमाहवे ॥ ज्ञात्वा प्रकुरु पुत्र त्वं ततो ज्ञास्यसि नन्दनम् ॥ ५६ ॥ प्रद्युम्नेन कृतं विप्र गणनाथस्य तोषणम् ॥ श्रुतो बाणासुरपुरेऽनिरुद्धो नारदात्ततः ॥ ५७ ॥ गत्वा बाणासुरपुरं युद्धं कृत्वा सुदारुणम् ॥ कृशानुरेतसा सार्द्धं जित्वा बाणासुरं रणे ॥ ५८ ॥ आनीतः स्नुषया सार्धम-

पता चलेगा ॥५६॥ हे विप्र ! ऐसा रुक्मिणी के कहने पर गणनाथ को प्रसन्न करने वाले व्रत को प्रद्युम्न ने किया तब बाणासुर के नगर में अनिरुद्ध हैं यह समाचार नारदजी से मालूम हुआ ॥५७॥ उस समय बाणासुर के नगर में जाकर दारुण युद्ध किया और अग्नि के सहित बाणासुर को संग्राम में जीतकर ॥५८॥ हे मुने! पुत्रवधू के साथ अनिरुद्ध को ले

आये। अर्थात् बाणासुर की कन्या के साथ अनिरुद्ध का विवाह करके ले आये। अब अन्य देवता असुरों ने भी गणेश के प्रसन्नार्थ इस व्रत को किया ॥५९॥ इस व्रत के समान समस्त सिद्धि का देने वाला संसार में दूसरा व्रत नहीं है और न तप दान तीर्थ ही कहीं पर है ॥६०॥ विशेष कहने से क्या है? कार्यसिद्धि के लिये दूसरा उपाय नहीं है। इस लिये इस व्रत को अभक्त नास्तिक शठ को उपदेश नहीं करना चाहिये ॥६१॥ पुत्र शिष्य श्रद्धालु साधु को उपदेश करना चाहिये

निरुद्धस्तदा मुने ॥ अन्यैर्देवासुरैः पूर्वं कृतं विघ्नेशतुष्टये ॥ ५९ ॥ अनेन सदृशं लोके सर्वसिद्धिकरं व्रतम् ॥ तपो दानं च तीर्थं च विद्यते नात्र कुत्रचित् ॥ ६० ॥ बहुनात्र किमुक्तेन नास्त्यन्यत्कार्यसिद्धये ॥ नोपदेश्यं त्वभक्ताय नास्तिकाय शठाय च ॥ ६१ ॥ देयं पुत्राय शिष्याय श्रद्धायुक्ताय साधवे ॥ ६२ ॥ मम प्रियोऽसि विप्रर्षे धर्मिष्ठ विधिनन्दन ॥ कार्यकर्तासि लोकानामुपदिष्टमतस्तव ॥ ६३ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे चतुर्थीव्रतकथनं नाम द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

॥६२॥ हे विप्रर्षे! हे धर्मिष्ठ! हे विधिनन्दन! तुम मेरे प्रिय हो और लोकों के कार्यकर्ता हो इसलिये तुमको उपदेश किया है ॥ ६३ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे व्या. आ. 'विद्यारत्न' पं० माधवप्रसादव्यासकृतायां भाषाटीकायां चतुर्थीव्रतकथनं नाम द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

ईश्वर उवाच ॥ कृष्णाष्टम्यां नभोमासि वृषे चन्द्रे निशीथके ॥ देवक्यजीजनत्कृष्णं योगेऽस्मिन्वसुदेवतः ॥ १ ॥ सिंहराशिगते सूर्ये कर्तव्यः सुमहोत्सवः ॥ सप्तम्यां लघुभुक्कुर्याद्दन्तधावनपूर्वकम् ॥ २ ॥ उपवासस्य नियमः स्वपेद्रात्रौ जितेन्द्रियः ॥ केवलेनोपवासेन कृष्णजन्मदिनं नयेत् ॥ ३ ॥ सप्तजन्मकृतात्पापान्मुच्यते नात्र संशयः ॥ उपावृत्तस्तु पापेभ्यो यस्तु वासो गुणैः सह ॥ ४ ॥ उपवासः स विज्ञेयः सर्वभोगविवर्जितः ॥ ततोऽष्टम्यां तिलैः स्नात्वा नद्यादौ विमले जले ॥ ५ ॥ सुदेशे शोभनं कुर्याद्देवक्याः सूतिका-

शिवजी बोले कि हे विप्रेन्द्र ! श्रावण मास के कृष्णपक्ष की अष्टमी के दिन वृष के चन्द्रमा में अर्धरात्रि के समय वसुदेव से इस योग के आने पर देवकी ने कृष्ण को पैदा किया ॥१॥ सिंहराशि के सूर्य होने पर इस तरह महोत्सव को करे, प्रथम सप्तमी के दिन दन्तधावनपूर्वक लघु भोजन करे ॥२॥ रात्रि में जितेन्द्रिय होकर शयन करे, प्रातःकाल होने पर उपवास का नियम ग्रहण करे और केवल उपवास करके कृष्णजन्म दिन को व्यतीत करे ॥ ३ ॥ तो सात जन्म के कृत पाप से अवश्य मुक्त हो जाता है। पापों से पृथक् होकर गुणों के साथ जो वास है ॥४॥ उस समस्त भोग से रहित वास को उपवास कहते हैं। अष्टमी के दिन शुद्ध नदी जल में तिलों के साथ स्नान करे ॥ ५ ॥ सुन्दर देश में शोभमान

देवकी का सूतिका गृह बनावे और अनेक वर्ण के वस्त्र कलश फलों से शोभित करे ॥ ६ ॥ पुष्प दीपमाला चन्दन अगरु धूप से वासित करे और कृष्णचरित्र तथा गोकुल को वहाँ पर लिखे ॥७॥ और वाद्य-शब्द नृत्य गान आदि मङ्गल को करे तथा उसके मध्य भाग में षष्ठी देवी के साथ कृष्ण की प्रतिमा स्थापित करे ॥८॥ सुवर्ण चाँदी ताम्बा पीतल मिट्टी

गृहम् ॥ नानावर्णैः सुवासोभिः शोभितं कलशैः फलैः ॥ ६ ॥ पुष्पैर्दीपावलीभिश्च चन्दना-
गरुधूपितम् ॥ हरिवंशस्य चरितं गोकुलं तत्र लेखयेत् ॥ ७ ॥ युक्तं वादित्रनिनदैर्नृत्यगी-
तादिमङ्गलैः ॥ षष्ठ्या देव्याधिष्ठितां च तन्मध्ये प्रतिमां हरेः ॥ ८ ॥ काञ्चनीं राजतीं ताम्रीं
पैत्तलीं मृन्मयीं तु वा ॥ वार्क्षीं मणिमयीं वापि वर्णकैर्लिखितां यथा ॥ ९ ॥ सर्वलक्षणस-
म्पन्नां पर्यङ्के चाष्टशल्यके ॥ प्रसूतां देवकीं तत्र स्थापयेन्मञ्चकोपरि ॥१०॥ सुप्तं बालं तत्र
हरिं पर्यङ्के स्तनपायिनम् ॥ यशोदां तत्र चैकस्मिन्प्रदेशे सूतिकागृहे ॥११॥ प्रसूतां कन्यकां चैव

काष्ठ या मणि की प्रतिमा अनेक रङ्गों से लिखी हुई ॥९॥ समस्त लक्षणों से सम्पन्न प्रतिमा को अष्ट शल्य वाली शय्या पर प्रसूत पुत्रवाली देवकी की प्रतिमा स्थापित करे ॥१०॥ शय्या पर शयन करते हुए स्तनपान कर रहे हों और सूतिकागृह के पास एक तरफ यशोदा को लिखे तथा यशोदा के समीप ॥११॥ प्रसूत कन्या को लिखे और कृष्ण के समीप हाथ जोड़े

कृष्णपार्श्वे तु संलिखेत् ।। कृताञ्जलिपुटान्देवान्यक्षविद्याधरामरान् ।। १२ ।। वसुदेवं च तत्रैव
खड्गचर्मधरं स्थितम् ।। कश्यपो वसुदेवोऽयमदितिश्चैव देवकी ।। १३ ।। शेषो बली यशोदापि
अदित्यंशाद्बभूव ह ।। नन्दः प्रजापतिर्दक्षो गर्गश्चापि चतुर्मुखः ।। १४ ।। गोप्यश्चाप्सरसः
सर्वा गोपाश्चापि दिवौकसः ।। कालनेमिश्च कंसोऽयं नियुक्तास्तेन चासुराः ।। १५ ।। गोधे-
नुकुञ्जराश्वाश्च दानवाः शस्त्रपाणयः ।। लेखनीयाश्च तत्रैव कालियो यमुनाह्रदे ।। १६ ।।
इत्येवमादि यत्किञ्चिच्चरितं हरिणा कृतम् ।। लेखयित्वा प्रयत्नेन पूजयेद्भक्तितत्परः ।। १७ ।।

हुए देवता यक्ष विद्याधर अमरों को लिखे ।।१२।। तथा पास में ही खड्ग चर्मधारी वसुदेव को लिखे । वसुदेव में कश्यप की, देवकी में अदिति की ।।१३।। बलदेव में शेष की भावना करे और यशोदा अदिति के अंश से पैदा हुई हैं तथा नन्दजी साक्षात् दक्षप्रजापति हैं और गर्ग साक्षात् ब्रह्माजी हैं ।।१४।। तथा सब गोपियाँ अप्सरा हैं और गोप देवता हैं । कालनेमि राक्षस का अवतार कंस है और उस कंस के भेजे हुए असुरदल ।।१५।। तथा वृषासुर, धेनुकासुर, कुवलयापीड, केशी आदि शस्त्रधारी दानव और यमुनाह्रद में कालिय नाग को लिखे ।।१६।। इत्यादि जो कुछ चरित्र कृष्ण भगवान् ने किया है उसको लिखकर भक्तितत्पर होकर अच्छी तरह पूजन करे ।।१७।। षोडशोपचार 'देवकी कान्तयुक्ता' मन्त्र से देवकी का

पूजन करे ॥१८॥ निरन्तर वेणु वीणा नाद पूर्वक गायनादि द्वारा किन्नरों से स्तुति की गई और भृङ्गार आदर्श (दर्पण) दूर्वा दधि और कलश धारण किये किन्नरों से सेव्यमान शय्या पर अपने स्थान में स्थित अति प्रसन्न मुख पुत्रवती वह देवमाता देवी विजयसुत [कृष्ण] युक्त और वसुदेव के साथ शय्यापर विराजमान हैं ॥१९॥ वाद विधि जाननेवाला

उपचारैः षोडशभिर्देवकी चेति मन्त्रतः ॥ १८ ॥ गायद्भिः किन्नराद्यैः सततपरिणता वेणुवीणानिनादैर्भृङ्गार्यादर्शदूर्वादधिकलशकरैः किन्नरैः सेव्यमाना ॥ पर्यङ्के स्वासनस्था मुदिततरमुखी पुत्रिणी सम्यगास्ते सा देवी दिव्यमाता विजयसुतसुता देवकी कान्तयुक्ता ॥ १९ ॥ प्रणवादिनमोन्तैश्च पृथङ्नामानुकीर्तनैः ॥ कुर्यात्पूजां विधिज्ञस्तु सर्वपापापनुत्तये ॥ २० ॥ देवक्या वसुदेवस्य वासुदेवस्य चैव हि ॥ बलदेवस्य नन्दस्य यशोदायाः पृथक् पृथक् ॥ २१ ॥ चन्द्रोदये शशाङ्काय अर्घ्यं दद्याद्धरिं स्मरन् ॥ क्षीरोदार्णवसम्भूत अत्रिगोत्रसमुद्भव ॥ नमस्ते

समस्त पापनाश के लिये आदि में प्रणव और अन्त में नमः पद जोड़कर चतुर्थ्यन्त पृथक् २ नाम कीर्तन कर पूजन करे ॥२०॥ देवकी, वसुदेव, वासुदेव, बलदेव, नन्द, यशोदा का पृथक् पूजन करे ॥२१॥ चन्द्रोदय होनेपर हरि भगवान् का स्मरण कर चन्द्रमा को अर्घ्य देवे और यह कहे कि हे क्षीरसमुद्र से प्रादुर्भूत ! हे अत्रि गोत्र में जन्म लेने वाले ! आपको

नमस्कार है, हे रोहिणीकान्त ! मेरे अर्घ्य को आप ग्रहण करें ॥२२॥ देवकी के साथ वसुदेव का, यशोदा के साथ नन्द का, रोहिणी के साथ चन्द्रमा का, कृष्ण के साथ बलदेव का ॥२३॥ विधिवत् पूजन कर किस दुर्लभ वस्तु को नहीं पाता है ? अर्थात् सभी वस्तु मिलती हैं। एक करोड़ एकादशी के समान कृष्णजन्माष्टमी का व्रत होता है ॥२४॥ इस

रोहिणीकान्त अर्घ्यं नः प्रतिगृह्यताम् ॥ २२ ॥ देवक्या वसुदेवं च नन्दं चैव यशोदया ॥ रोहिण्या च सुधारश्मिं बलं च हरिणा सह ॥ २३ ॥ सम्पूज्य विधिवद्देही किं नाप्नोति सुदुर्लभम् ॥ एकादशीकोटिसंख्या तुल्या कृष्णाष्टमी तथा ॥२४॥ एवं सम्पूज्य तद्रात्रौ प्रभाते नवमीदिने ॥ यथा हेरस्तथा कार्यो भगवत्या महोत्सवः ॥ २५ ॥ ब्राह्मणान्भोजयेद्भक्त्या दद्याद्वै गोधनादिकम् ॥ यद्यदिष्टतमं तत्र कृष्णो मे प्रीयतामिति ॥२६॥ नमस्ते वासुदेवाय गोब्राह्मणहिताय च ॥ शान्तिरस्तु शिवं चास्तु इत्युक्त्वा तं विसर्जयेत् ॥२७॥ ततो बन्धु-

तरह रात्रि में पूजन कर नवमी के दिन प्रातःकाल योगमाया भगवती का कृष्ण के समान महोत्सव करे ॥२५॥ बाद भक्ति से ब्राह्मणों को भोजन कराकर जो इष्ट वस्तु और गौ धन आदि का दान कर कहे कि इस व्रत से मुझ पर श्रीकृष्ण भगवान् प्रसन्न हों ॥२६॥ गौ ब्राह्मण के प्रतिपालक वासुदेव को मैं नमस्कार करता हूँ। मुझे शान्ति मिले और मेरा

कल्याण हो, इस तरह कह कर विसर्जन करे ॥२७॥ बाद मौन पूर्वक बन्धुजनों के साथ स्वयं भोजन करे । जो मनुष्य देवी और कृष्ण भगवान् का महोत्सव करता है ॥२८॥ वह प्रतिवर्ष विधिवत् पूजन करने से यथोक्त फल को पाता है और पुत्र सन्तान आरोग्य अतुल सौभाग्य को पाता है ॥२९॥ इस लोक में धर्मबुद्धि होकर अन्त में वैकुण्ठ को जाता है । अब उद्यापन विधि को कहूँगा, किसी पवित्र दिन में विधि पूर्वक करे ॥३०॥ उद्यापन के पहिले दिन एक बार भोजन कर

जनैः सार्धं स्वयं भुञ्जीत वाग्यतः ॥ एवं यः कुरुते देव्याः कृष्णस्य च महोत्सवम् ॥ २८ ॥
प्रतिवर्षं विधानेन यथोक्तं लभते फलम् ॥ पुत्रसन्तानमारोग्यं सौभाग्यमतुलं भवेत् ॥ २९ ॥
इह धर्ममतिर्भूत्वा अन्ते वैकुण्ठमाप्नुयात् ॥ उद्यापनमथो वक्ष्ये पुण्येऽह्नि विधिपूर्वकम् ॥३०॥
पूर्वेद्युरेकभक्ताशी स्वपेद्विष्णुं स्मरन्हृदि ॥ प्रातःसन्ध्यादि सम्पाद्य ब्राह्मणैः स्वस्ति वाचयेत्
॥ ३१ ॥ आचार्यं वरयित्वा तु ऋत्विजश्चैव पूजयेत् ॥ पलेन वा तदर्धेन तदर्धार्धेन वा पुनः
॥ ३२ ॥ प्रतिमां कारयेत्पश्चाद्वित्तशाठ्यविवर्जितः ॥ मण्डपे मण्डले देवान्ब्रह्माद्यान्स्थापयेद्

हृदय से विष्णु भगवान् का स्मरण कर शयन करे, प्रातःकाल सन्ध्या आदि नित्यकर्म को कर ब्राह्मणों से स्वस्तिवाचन करावे ॥३१॥ और आचार्य का वरण कर ऋत्विजों का पूजन करे । एक पल, आधा पल, चौथाई पल सुवर्ण की ॥३२॥ प्रतिमा बनवावे, धन का लोभ न करे । मण्डप में सर्वतोभद्र मण्डल पर बुद्धिमान् ब्रह्मादि देवता की स्थापना करे ॥३३॥

बाद उस पर ताम्बा या मिट्टी का घट स्थापन करे और उस घट पर चांदी या गांस का पूर्णपात्र रक्खे ॥३४॥ वस्त्र से आच्छादन कर उस पूर्णपात्र पर गोविन्द भगवान् की स्थापना कर विद्वान् वैदिक या तान्त्रिक मन्त्रों से षोडशोपचार पूजन करे ॥३५॥ बाद देवकी के सहित हरि भगवान् को अर्घ्य देवे । शंख में शुद्ध जल पुष्प फल चन्दन को रखकर ॥३६॥

बुधः ॥३३॥ तत्र संस्थापयेत्कुम्भं ताम्रं मृन्मयमेव वा ॥ तस्योपरि न्यसेत्पात्रं राजतं वैणवं तु वा ॥३४॥ वाससाऽऽच्छाद्य गोविन्दं तत्र सम्पूजयेद्बुधः ॥ उपचारैः षोडशभिर्मन्त्रैर्वैदिकतान्त्रिकैः ॥३५॥ ततोऽर्घ्यं हरये दद्याद्देवकीसहिताय च ॥ शङ्खे कृत्वा जलं शुद्धं सपुष्पफलचन्दनम् ॥ ३६ ॥ जानुभ्यामवनीं गत्वा नारिकेलफलान्वितम् ॥ जातः कंसवधार्थाय भूभारोत्तारणाय च ॥३७॥ कौरवाणां विनाशाय दैत्यानां निधनाय च ॥ गृहाणार्घ्यं मया दत्तं देवक्या सहितो हरे ॥ ३८ ॥ चन्द्रायार्घ्यं ततो दद्यात्पूर्वोक्तविधिना सुधीः ॥३९॥ नमस्तुभ्यं जगन्नाथ देवकीतनय प्रभो ॥ वसुदेवात्मजानन्त त्राहि मां भवसागरात् ॥ ४० ॥

और नारियल फल से युक्त कर अपने घुटनों के बल से पृथिवी में स्थित होकर कहे कि हे हरे ! आपका अवतार कंसवध के लिये भूभार हटाने के लिये ॥३७॥ कौरव दल के नाश के लिये और दैत्यों के नाश के लिये हुआ है, देवकी के साथ आप मुझ से दिये इस अर्घ्य को ग्रहण करें ॥३८॥ बाद पूर्वोक्त विधान से बुद्धिमान् चन्द्रमा को अर्घ्य देवे ॥३९॥ और यह

कहे कि हे जगन्नाथ ! हे देवकीतनय ! हे प्रभो ! हे वसुदेवात्मज ! हे अनन्त ! आपको नमस्कार है, आप भवसागर से उद्धार कर मेरी रक्षा करें ॥४०॥ इस तरह देवेश की प्रार्थना कर रात्रि में जागरण करे, बाद दूसरे दिन प्रातःकाल स्नान कर जनार्दन भगवान् का पूजन करे ॥४१॥ भक्तिपूर्वक मूलमन्त्र से पायस तिल घृत की १०८ आहुति देवे और पुरुष सूक्त से आहुति देवे ॥४२॥ और 'इदं विष्णुः' इस मन्त्र से घृत की आहुति देवे तथा पूर्णाहुति देकर हवनशेष कार्य

इत्थं सम्प्रार्थ्य देवेशं रात्रौ जागरणं चरेत् ॥ प्रत्यूषे विमले स्नात्वा पूजयित्वा जनार्दनम् ॥४१॥ पायसेन तिलाज्यैश्च मूलमन्त्रेण भक्तितः ॥ अष्टोत्तरशतं हुत्वा ततः पुरुषसूक्ततः ॥४२॥ मन्त्रेणेदं विष्णुरिति जुहुयाद्वै घृताहुतीः ॥ होमशेषं समाप्याथ पूर्णाहुतिपुरःसरम् ॥ ४३ ॥ आचार्यं पूजयेत्पश्चाद्भूषणाच्छादनादिभिः ॥ गामेकां कपिलां दद्याद्व्रतसम्पूर्तिहेतवे ॥ ४४ ॥ पयस्विनीं सुशीलां च सवत्सां सगुणां तथा ॥ स्वर्णशृङ्गीं रौप्यखुरां कांस्यदोहनिकायुताम् ॥ ४५ ॥ मुक्तापुच्छां ताम्रपृष्ठीं स्वर्णघण्टासमन्विताम् ॥ वस्त्रच्छन्नां दक्षि-

को समाप्त करे ॥४३॥ बाद भूषण आच्छादन आदि से आचार्य का पूजन करे और व्रतपूर्ति के लिये एक कपिला गौ का दान करे ॥४४॥ दूध देने वाली सुशीला सवत्सा गुणसम्पन्ना स्वर्ण सींग वाली चांदी के खुरवाली दोहन के लिये कांस्यपात्र वाली ॥४५॥ मोती की पूँछ वाली, ताम्बे की पीठ वाली, कण्ठ में सुवर्ण घण्टा वाली, वस्त्र से आच्छादित और

दक्षिणा युक्त गौ का दान करने से व्रत पूर्ण होता है ॥४६॥ कपिला गौ के अभाव में अन्य गौ का दान करे। बाद ऋत्विजों को यथायोग्य दक्षिणा देवे ॥४७॥ बाद आठ ब्राह्मणों को भोजन कराकर समाहित चित्त से दक्षिणा और जलपूर्ण ८ कलश का दान देवे ॥४८॥ और उन ब्राह्मणों से आज्ञा लेकर बन्धुओं के साथ भोजन करे। हे ब्रह्मपुत्र !

णाढ्यामेवं सम्पूर्णतामियात् ॥४६॥ कपिलाया अभावेऽपि गौरन्यापि प्रदीयते ॥ ततः प्रदद्यादृत्विग्भ्यो दक्षिणां च यथार्हतः ॥४७॥ ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चादष्टौ तभ्यश्च दक्षिणाम् ॥ कलशाञ्जलसम्पूर्णान्दद्याच्चैव समाहितः ॥ ४८ ॥ प्राप्यानुज्ञां तथा तेभ्यो भुञ्जीत सह बन्धुभिः ॥ एवंकृते ब्रह्मपुत्र व्रतोद्यापनकर्मणि ॥ ४९ ॥ निष्पापस्तत्क्षणादेव जायते विबुधोत्तमः ॥ पुत्रपौत्रसमायुक्तो धनधान्यसमन्वितः ॥ भुक्त्वा भोगांश्चिरं कालमन्ते वैकुण्ठमाप्नुयात् ॥ ५० ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे कृष्णजन्माष्टमीव्रतकथनं नाम त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥

इस तरह व्रतोद्यापन कर्म करने से ॥४९॥ उसी क्षण में पाप रहित हो जाता है और देवश्रेष्ठ होता है तथा पुत्र पौत्र धन धान्य से युक्त होकर इस लोक में चिरकाल पर्यन्त सुख भोगकर अन्त में वैकुण्ठ को जाता है ॥५०॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे व्या. आ. 'विद्यारत्न' पं० माधवप्रसादव्यासकृतायां भाषाटीकायां कृष्णजन्माष्टमीव्रतकथनं नाम त्रयोविंशोऽध्यायः ॥२३॥

शिवजी बोले कि हे ब्रह्मपुत्र ! पहिले कल्प में दैत्यों के भार से पीड़ित अति दीन विह्वल होकर पृथिवी ब्रह्मा के शरण में गई ॥१॥ पृथिवी के मुख से वृत्तान्त को सुनकर देवगणों के साथ ब्रह्मा क्षीरसागर को गये और अनेक स्तुति से हरि भगवान् की स्तुति की ॥२॥ ब्रह्मा के मुख से सब प्रार्थना सुनकर दिशाओं में भगवान् प्रादुर्भूत हुए और भगवान् ने यह कहा कि हे देवता लोग ! भय मत करो, देवकी के पेट में वसुदेव के द्वारा ॥३॥ मैं अवतार धारण

ईश्वर उवाच ॥ पुरा कल्पे ब्रह्मपुत्र दैत्यभारप्रपीडिता ॥ ब्रह्माणं शरणं प्राप पृथ्वी दीनातिविह्वला ॥१॥ वृत्तान्ते तन्मुखाच्छ्रुत्वा ब्रह्मा देवगणैः सह ॥ क्षीरार्णवे हरिं गत्वा तुष्टाव स्तुतिभिर्बहु ॥२॥ प्रादुरासीत्ततो दिक्षु श्रुत्वा सर्वं विधेर्मुखात् ॥ मा भैष्ट देवा देवक्या जठरे वसुदेवतः ॥३॥ अवतीर्णो भविष्यामि हरिष्ये भूमिवेदनाम् ॥ भवन्तु यादवा देवा इत्युक्त्वाऽन्तर्दधे विभुः ॥४॥ देवक्या जठरे जातो वसुदेवेन गोकुले ॥ स्थापितः कंसभीतेन ववृधे तत्र कंसहा ॥ ५ ॥ आगत्य मथुरां पश्चात्कंसः सगणमाहनत् ॥ ततः सर्वे पौरजनाः

करूँगा और पृथिवी की वेदना दूर करूँगा तथा देवता लोग पृथिवी पर जाकर यादव रूप से प्रकट होवें । ऐसा कहकर विष्णु भगवान् अन्तर्हित हो गये ॥४॥ बाद देवकी के गर्भ में प्रकट होने पर वसुदेव ने कंस के भय से भगवान् को गोकुल में रक्खा, उस गोकुल में जाकर भगवान् बढ़े ॥५॥ बाद मथुरा में आकर सब गणों के साथ कंस का वध किया, तदनन्तर

समस्त पुरवासी जनों ने आदर से प्रार्थना की ॥६॥ कि हे कृष्ण! हे कृष्ण! हे महायोगिन्! हे भक्तों को अभय देनेवाले। हे देव! हे शरणागतवत्सल! हम सब आपको प्रणाम करते हैं, हम लोगों की रक्षा करें ॥७॥ हे देव! हम लोग आपसे कुछ प्रार्थना करेंगे उसको आप कहने के योग्य हैं। हे देव! आपके जन्मदिन का ज्ञान किसी को नहीं हुआ ॥८॥ जानकर हम सब लोग उस दिन वर्द्धापन उत्सव को करेंगे। इस तरह कृष्ण भगवान् में उनकी भक्ति श्रद्धा और अपने में सौहृद

प्रार्थयामासुरादरात् ॥ ६ ॥ कृष्ण कृष्ण महायोगिन् भक्तानामभयप्रद ॥ प्रणवन्नास्त्राहि नो देव शरणागतवत्सल ॥ ७ ॥ किञ्चिद्विज्ञापये देव एतन्नो वक्तुमर्हसि ॥ तव जन्मदिने कृत्यं न ज्ञातं केनचित्क्वचित् ॥ ८ ॥ ज्ञात्वा च तद्दिने सर्वे कुर्मो वर्द्धापनोत्सवम् ॥ तेषां दृष्ट्वा च तां भक्तिं स्वस्मिन्श्रद्धां च सौहृदम् ॥ ९ ॥ कृत्यं जन्मदिने तेभ्यः कथयामास केशवः ॥ श्रुत्वा तेऽपि तथा चक्रुर्विधानात्तेन तद्व्रतम् ॥१०॥ वरांश्च बहुधा प्रादाद्भगवान्व्रतकारिणे ॥ अत्रैवोदाहरन्तीममितिहासं पुरातनम् ॥११॥ अङ्गदेशोद्भवो राजा मितजिन्नाम नामतः ॥

भाव को देखकर ॥९॥ जन्मदिन में होनेवाले कृत्य को केशव ने उनसे कह दिया और उन लोगों ने सुनकर उस विधि से व्रत को किया ॥१०॥ तथा भगवान् ने व्रत करने वाले को बहुत से वरों को दिया। इस विषय में यहाँ पर एक पुरातन इतिहास को लोग कहते हैं ॥११॥ अङ्ग देश में होने वाला मितजित नाम का एक राजा हुआ उसका लड़का महासेन

नाम का हुआ वह सत्य से विजय लाभ करने वाला और सत् मार्ग में स्थित था ॥ १२ ॥ और वह सर्वज्ञ राजा विधिवत् प्रजा को प्रसन्न रखता हुआ पालन करता था। इस तरह समय यापन करते राजा का दैवयोग से ॥ १३ ॥ पाखण्डियों के साथ बहुत वर्ष पर्यन्त सहवास हो गया उन पाखण्डियों के सहयोग से राजा अधर्म में

तस्य पुत्रो महासेनः सत्यजित्सत्पथे स्थितः ॥१२॥ पालयामास सर्वज्ञो विधिवद्रञ्जयन्प्रजाः ॥
तस्यैवं वर्तमानस्य कदाचिद्दैवयोगतः ॥ १३ ॥ पाखण्डैः सह संवासो बभूव बहुवासरम् ॥
तत्संसर्गात्स नृपतिरधर्मे निरतोऽभवत् ॥ १४ ॥ वेदशास्त्रपुराणानि निनिन्द बहुशो नृपः ॥
वर्णाश्रमगते धर्मे विद्वेषं परमं गतः ॥ १५ ॥ एवं बहुतिथे काले प्रयाते मुनिसत्तम ॥
कालेन निधनं प्राप्तो यमदूतवशं गतः ॥१६॥ बद्ध्वा पाशैर्नीयमानो यमदूतैर्यमोऽन्तिकम् ॥
पीडितस्ताड्यमानोऽसौ दुष्टसङ्गतियोगतः ॥१७॥ नरके पातितः प्राप यातनां बहुवत्स-

निरत हो गया ॥ १४ ॥ और वेद शास्त्र पुराणों की बहुत निन्दा करने लगा तथा वर्णधर्म आश्रम धर्म के साथ अधिक द्वेष करने लगा ॥ १५ ॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! इस तरह समय बीत जाने पर काल के वश होकर यमदूत के वश हुआ ॥ १६ ॥ यमदूतों ने पाशबन्धन में बांधकर यमराज के पास ले जाकर दुष्ट सङ्गति के कारण राजा को बहुत कष्ट दिया और मारा पीटा भी ॥ १७ ॥ बाद नरक में गिराकर बहुत वर्ष पर्यन्त यातना दी। राजा नरकयातना भोगकर

पापशेष से पिशाच योनि में गया ।।१८।। और क्षुधा तृषा से पीडित मारवार देश में भ्रमण करता हुआ किसी वैश्य के देह में स्थित होकर ।।१९।। उसके साथ पुण्य मथुरा पुरी को गया, जब मथुरा के समीप पहुँचा तब उस मथुराके रक्षकों के द्वारा उस वैश्य के शरीर से पृथक् कर दिया गया ।।२०।। वह वैश्य शरीर से पृथक् होकर वन में और ऋषियों के आश्रमों में भ्रमण करता हुआ दैवयोग से कृष्णजन्माष्टमी के दिन ।।२१।। व्रती मुनिजनों से और द्विजों से की जाती

रम् ।। भुक्त्वा पापस्य शेषेण पैशाचीं योनिमास्थितः ।। १८ ।। क्षुधातृष्णासमाक्रान्तो भ्रमन्स
मरुधन्वसु ।। कस्यचित्त्वथ वैश्यस्य देहमाविश्य संस्थितः ।। १९ ।। सह तेनैव संयातो
मथुरां पुण्यदां पुरीम् ।। समीपे रक्षकैस्तस्य तस्माद्देहाद्बहिष्कृतः ।। २० ।। बभ्राम विपिने
सोऽथ ऋषीणामाश्रमेषु च ।। कदाचिद्दैवयोगेन हरेर्जन्माष्टमीदिने ।। २१ ।। क्रियमाणां
महापूजां व्रतिभिर्मुनिभिर्द्विजैः ।। रात्रौ जागरणं चैव नामसङ्कीर्तनादिभिः ।। २२ ।। ददर्श
सर्वं विधिवच्छुश्रावाथ हरेः कथाम् ।। निष्पापस्तत्क्षणादेव शुद्धो निर्मलमानसः ।। २३ ।।
प्रेतदेहं समुत्सृज्य विष्णुलोके विमानगः ।। यमदूतैः परित्यक्तो दिव्यभोगसमन्वितः ।।२४।।

हुई महापूजा को तथा नाम कीर्तन आदि के द्वारा रात्रि में जागरण को देखा ।।२२।। विधिवत् सब कार्यों को देखकर हरि भगवान् की कथा को सुना, जिससे उसी क्षण में पापरहित हो गया और शुद्ध निर्मल मन वाला हो गया ।।२३।। तथा उसी समय प्रेत देह त्यागकर विमान पर सवार होकर विष्णुलोक को गया और यमदूतोंसे रहित होकर दिव्य भोग

से युक्त हो गया ॥ २४ ॥ इसी व्रत के प्रभाव से विष्णु का सान्निध्य मुक्ति फल को पाया। हे विप्र! यह सर्वलोक में होने वाला पुराणों में नित्य व्रत कहा है ॥२५॥ तत्त्वदर्शी मुनियों ने इस व्रत को विधिवत् करने को कहा है और यह व्रत समस्त कामनाओं को देनेवाला है। इस व्रत को करके समस्त कामनाओं को प्राप्त करता है ॥२६॥ इस तरह जो इस

विष्णुसान्निध्यमापन्नो व्रतस्यास्य प्रभावतः ॥ नित्यमेतद्व्रतं चैव पुराणे सार्वलौकिकम् ॥२५॥ कथ्यते विधिवत्सम्यङ्मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥ सार्वकामिकमेवैतत्कृत्वा कामानवाप्नुयात् ॥२६॥ एवं यः कुरुते कृष्णजन्माष्टम्यां व्रतं शुभम् ॥ भुक्त्वेह विविधान्भोगान्शुभान्कामानवाप्नुयात् ॥२७॥ तत्र देवविमानेन वर्षलक्षं विधेः सुत ॥ भोगान्नानाविधान्भुक्त्वा पुण्यशेषादिहागतः ॥ २८ ॥ सर्वकामसमृद्धस्तु सर्वाशुभविवर्जितः ॥ कुले नृपतिवर्याणां जायते मदनोपमः ॥ २९ ॥ यस्मिन्सदैव विषये लिखितं स्यात्परार्पितम् ॥ कृष्णजन्मोप-

कृष्णजन्माष्टमी का व्रत करता है वह इस लोकमें विविध प्रकारके भोगोंको भोगकर शुभ कामनाओंको प्राप्त करता है॥२७॥ हे ब्रह्मपुत्र! वह वैकुण्ठ लोक में देवविमान से लाख वर्ष पर्यन्त नाना प्रकार के सुखभोगोंको भोगकर पुण्यशेषसे यहां इस मनुष्यलोक में आता है ॥२८॥ समस्त कामनाओं से समृद्ध और समस्त अशुभों से रहित तथा राजश्रेष्ठ के कुल में कामदेव के सदृश रूपवान् होकर जन्म लेता है ॥२९॥ जिस देश में कृष्णजन्माष्टमी व्रतविधि लिखकर दूसरे को अर्पण किया

जाय और समस्त शोभा से युक्त कृष्णजन्माष्टमी के दिन सामग्री एकत्रित की जाय ॥३०॥ और उस स्थान में विश्वसृट् भगवान् व्रत तथा उत्सव के साथ पूजित होवें तो वहाँ कभी भी शत्रु का भय नहीं होवे ॥३१॥ और उस देश में मेघ इच्छानुसार वृष्टि करता है तथा पत्थर टीडी आदि का कभी भय नहीं होता और जिस गृह में श्रीकृष्ण भगवान् का

करणं सर्वशोभासमन्वितम् ॥ ३० ॥ पूज्यते विश्वसृट् तत्र व्रतैरुत्सवसंयुतैः ॥ परचक्रभयं तत्र न कदाचिद्भविष्यति ॥ ३१ ॥ पर्जन्यः कामवर्षी स्यादीतिभ्यो न भयं क्वचित् ॥ गृहे वा पूजयेद्यस्तु चरितं देवकीजनः ॥ ३२ ॥ तत्र सर्वसमृद्धं स्यान्नोपसर्गाद्भयं भवेत् ॥ संसर्गेणापि यो भक्त्या व्रतं पश्येदनाकुलः ॥ सोऽपि पापविनिर्मुक्तः प्रयाति हरिमन्दिरम् ॥३३॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे कृष्णजन्माष्टमीव्रत-कथनं नाम चतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥

पूजन होता है ॥३२॥ वहाँ समस्त समृद्धि होती है और भूत प्रेतादि का भय नहीं होता है तथा जो संसर्गवश भक्ति से सावधान चित्त से इस कृष्णजन्माष्टमी व्रत को देखता है वह भी पापरहित होकर हरिमन्दिर को जाता है ॥३३॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये व्या. आ. 'विद्यारत्न' पं० माधवप्रसादव्यासकृतायां भाषा-टीकायां कृष्णजन्माष्टमीव्रतकथनं नाम चतुर्विंशोऽध्यायः ॥२४॥

शिवजी बोले कि हे मुनिश्रेष्ठ ! श्रावणमास की अमावास्या के दिन समस्त सम्पत्ति को देनेवाला श्रेष्ठ पिठोर व्रत होता है ॥१॥ समस्त वस्तु का अधिष्ठान होने से गृह को पीठ कहते हैं उस गृह में पूजोपयोगी वस्तुमात्र के समूह को आर कहते हैं ॥२॥ हे मुनीश्वर ! इसलिये इस व्रत का पिठोर व्रत नाम हुआ है, अब आपको इसका व्रत विधान कहूँगा,

ईश्वर उवाच ॥ अथ वक्ष्ये मुनिश्रेष्ठ पिठोरव्रतमुत्तमम् ॥ अमायां श्रावणे मासि सर्वसम्पत्प्रदायकम् ॥ १ ॥ सर्वाधिष्ठानमेतद्यद्गृहं पीठं ततो मतम् ॥ आरस्तत्र समूहः स्याद्वस्तुमात्रस्य पूजने ॥ २ ॥ पिठोरमिति संज्ञास्य व्रतस्यातो मुनीश्वर ॥ तत्प्रकारं च वक्ष्येऽहं सावधानमनाः शृणु ॥ ३ ॥ कुड्ये विलिख्य ताम्रेण कृष्णेनाऽथ सितेन वा ॥ धातुना तत्र ताम्रे तु पीतेन विलिखेत्सुधीः ॥४॥ शुक्लेन वाथ कृष्णेन पूर्ववच्चैव संलिखेत् ॥ सितपीतेन रक्तेन कृष्णेन हरितेन वा ॥ ५ ॥ मध्ये शिवं शिवायुक्तं लिङ्गं वा मूर्तिमेव वा ॥ विस्तीर्णं

आप सावधान होकर सुनिये ॥३॥ प्रथम दीवार को ताम्रवर्ण या कृष्ण या श्वेत वर्ण रङ्ग से पोतकर बुद्धिमान उस ताम्रवर्ण पर पीत रङ्ग से वक्ष्यमाण वस्तु को लिखे ॥४॥ अथवा शुक्ल, कृष्ण श्वेत, पीत, लाल, काला, हरा रङ्ग से लिखे ॥५॥ प्रथम मध्यभाग में पार्वती के साथ शिवजी का लिङ्ग या मूर्ति को लिखे और चारो तरफ भीत पर समस्त संसार के वस्तु

को लिखे ॥ ६ ॥ चतुःशाला युक्त रसोई घर, देवमन्दिर, शय्या गृह, सात कोशगृह (खजाना), और जन्दर स्त्रियों के रहने का गृह ॥ ७ ॥ प्रासाद अटारी आदि शोभायुक्त, शालवृक्ष से युक्त, ईंट, पाषाण (पत्थर) सुरखी चूना से मजबूत बंधे और सुशोभित बनावे ॥८॥ चित्र विचित्र द्वार छादिवार से युक्त करे। बकरी गो भईस घोड़ा ऊँट हाथी ॥९॥

कुड्यमालिख्य सर्वसंसारमालिखेत् ॥ ६ ॥ चतुःशालासमायुक्तं पाकागारं सुरालयम् ॥
शय्यागृहं सप्तकोशांस्तथान्तः स्त्रीनिकेतनम् ॥७॥ प्रासादाट्टालिकाशोभं शालवृक्षसमुद्भवम् ॥
इष्टकाभिश्च पाषाणैश्चूर्णनद्धैः सुशोभनम् ॥८॥ द्वाराणि च विचित्राणि वलभीचेष्टिकास्तथा ॥
अजा गावो महिष्यश्च अश्वा उष्ट्रा मतङ्गजाः ॥ ९ ॥ गन्त्रीरथप्रभृतयः शकटानां प्रभेदकाः ॥
स्त्रियो बालाश्च वृद्धाश्च तरुण्यः पुरुषास्तथा ॥१०॥ पालक्यान्दोलिका चैव मञ्चका बहुरूपकाः ॥ ११ ॥ हैमानि रौप्यानि च ताम्रकाणि सैसानि लौहानि च मृन्मयानि ॥
रङ्गप्रसूतानि च पैत्तलानि पात्राणि नानाविधिकारकाणि ॥ १२ ॥ यावन्तः कशिपूभेदा

गमन शील रथ आदि, अनेक विध शकट बाल वृद्ध, जवान स्त्रियाँ और पुरुष ॥ १० ॥ पालकी, झूला, अनेक मंचान (कुर्सी मचिया) ॥११॥ सुवर्ण चांदी ताम्बा सीसा लोहा मिट्टी रङ्ग चढे हुये अर्थात् कलई के बने पीतल अनेक प्रकार

के बने हुये पात्र ॥१२॥ और जितने खाट खटोले पीढ़ा शय्या आदि तकिया मसलन्द आदि भेद हैं और मार्जार (बिल्ली) शुभ मैना आदि अन्य भी पक्षी ॥१३॥ पुरुषों के और स्त्रियों के अनेक अलङ्कार आस्तरण (बिछावन) गलीचा आदि ॥१४॥ और जितने यज्ञ के पात्र हैं स्तम्भ, दण्ड, मन्थन के लिये तीन रज्जू, दूध, नवनीत, दधि, मठा, तक्र, घी तेल,

उपबर्हणजातयः ॥ मार्जाराः सारिकाश्चैव शुभा अन्येऽपि पक्षिणः ॥ १३ ॥ पुरुषाणामलङ्काराः स्त्रीणां चैवाप्यनेकशः ॥ यानि चास्तरणानीह तथा प्रावरणानि च ॥ १४ ॥ यज्ञपात्राणि यावन्ति स्तम्भदण्डौ च मन्थने ॥ रज्जुत्रयं च तद्धेतु दुग्धं च नवनीतकम् ॥ दधि तक्रं तथा मस्तु आज्यं तैलं तिलांस्तथा ॥ १५ ॥ गोधूमशालितुवरीयवयावनालवार्तानलं च चणका मसुराः कुलित्थाः ॥ मुद्गप्रियङ्गुतिलकोद्रवकातसीतिश्यामाकमाषचवला इति धान्यवर्गाः ॥ १६ ॥ दृषदं चोपलं चुल्लिं तथा सम्मार्जनीमपि ॥ पुरुषाणां च वस्त्राणि नारीणां चैव सर्वशः ॥ १७ ॥ वेणुजन्य च शूर्पादि तथा तृणभवानि च ॥ उलूखलं च मुसलं यन्त्रं

तिल ॥१५॥ गेहूँ, चावल, अरहर, यव, यावनाल (मक्का), चना, मसूर, कुलथी, मूङ्ग, कङ्गुनी, तिल, कोंदो, कातसी, सामा, उरद, चावल आदि धान्यवर्ग कहे हैं ॥१६॥ सीलिया, लोढा, चूल्हा, झाड़ू और स्त्री पुरुषों के सभी वस्त्र ॥१७॥

घास के तृण के बने सूप आदि, उलूखल (ओखरी), मूसल, चक्की ॥१८॥ पङ्खा, चामर, छत्र (छाता), जूता, दो खड़ाऊँ, दासी, दास, भृत्य, पोष्य, पशु, भक्ष्य, तृण आदि ॥१९॥ धनुष, बाण, शतघ्नी (तोप), खड्ग, भाला, शक्ति, चर्मपाश, अङ्कुश, गदा, त्रिशूल, भिन्दिपाल ॥२०॥ तोमर, मुद्गर, परशु (फरसा), पट्टिश, भुशुंडी, परिघ, चक्र, यन्त्र आदि

दलयुगान्वितम् ॥१८॥ व्यजनं चामरं छत्रमुपानत्पादुकाद्वयम् ॥ दास्यो दास्या भृत्यपोष्याः पशुभक्ष्यं तृणादिकम् ॥१९॥ धनुर्बाणशतघ्न्यश्च खड्गाः कुन्ताश्च शक्तयः ॥ चर्मपाशाङ्कुशगदात्रिशूलं भिन्दिपालकाः ॥२०॥ तोमरो मुद्गरश्चैव परशुः पट्टिशस्तथा ॥ भुशुण्डी परिघश्चैव चक्रं यन्त्रादिकं च यत् ॥२१॥ जलयन्त्रा मषीपात्रं लेखनी पुस्तकादिकम् ॥ फलजातं सर्वमपि छुरिका कर्तरी तथा ॥२२॥ नानाविधानि पुष्पाणि बिल्वश्च तुलसी तथा ॥ दीपिकाश्चैव दीपाश्च तथा तत्साधनानि च ॥२३॥ शाकं नानाविधं भक्ष्यं पक्वान्नानां च या भिदा ॥ लेख्यं तच्चैव सकलमनूक्तमपि चैव हि ॥२४॥ कियल्लेख्यं

॥२१॥ जलयन्त्र (फुहारा), मषीपात्र (दावात), कलम, पुस्तक, समस्त फल, छूरी, सरौता ॥२२॥ अनेक प्रकार के पुष्प, बिल्वपत्र, तुलसी, दीपक, दीपक रखने को दीवट ॥२३॥ नाना प्रकार के शाक, भक्ष्य, पक्वान्न के भेद और जो नहीं कहा है उन सबों को लिखे ॥२४॥ संसार के वस्तुओं को लिखने के सम्बन्ध में कहां तक हम कहेंगे । क्योंकि

एक-एक पदार्थ के शत सहस्रों भेद कहे हैं ॥२५॥ भित्ती में समस्त वस्तुजात को लिखकर उनका पूजन करे। नाना प्रकार के गन्ध, पुष्प, धूप, चन्दन आदि अर्पण करे ॥२६॥ ब्राह्मण, बाल, सोहागिनों को भोजन करावे और पार्वती शिवजी से प्रार्थना करे कि हे साम्ब ! व्रत पूर्ण फलप्रद होवे ॥२७॥ हे शिव ! हे साम्ब ! हे दयासिन्धो ! हे गिरीश ! हे

जनेनात्र वक्तव्यं वा मया कियत् ॥ एकैकस्य पदार्थस्य भेदाः शतसहस्रशः ॥२५॥ उपचारैः षोडशभिः सर्वेषां पूजनं भवेत् ॥ नानाविधश्च गंधः स्यात्पुष्पधूपोऽपि चन्दनम् ॥२६॥ ब्राह्मणान्भोजयेद्बालान्सुवासिन्यश्च पुष्कलान् ॥ प्रार्थयेच्च शिवं साम्बं व्रतं सम्पूर्णमस्त्विति ॥२७॥ शिव साम्ब दयासिन्धो गिरीश शशिशेखर ॥ व्रतेनानेन सन्तुष्टः प्रयच्छास्मान्मनोरथान् ॥२८॥ एवं कृत्वा पञ्चवर्षं तत उद्यापनं चरेत् ॥ आज्येन बिल्वपत्रैश्च होमः स्याच्छिवमन्त्रतः ॥२९॥ ग्रहहोमः पुरा कार्यः पूर्वेद्युरधिवासनम् ॥ अष्टोत्तरसहस्रं वा शतमष्टोत्तरं तु वा ॥३०॥ होमसंख्या भवेद्वत्स आचार्यं पूजयेत्ततः ॥ भूयसीं

शशिशेखर ! इस व्रत से प्रसन्न होकर मेरे मनोरथों को पूर्ण करें ॥२८॥ इस प्रकार पांच वर्ष व्रत करके उद्यापन को करे और घी बिल्वपत्र की आहुति शिवमन्त्र पढ़ कर देवे ॥२९॥ एक दिन पहले अधिवासन पूर्वक ग्रहहोम करे। एक हजार आठ (१००८) अथवा एक सौ आठ (१०८) आहुति देवे ॥३०॥ हे वत्स ! ऐसा करने से हवन-संख्या पूर्ण कही गई है।

बाद आचार्य का पूजन करे और भूयसी दक्षिणा देकर स्वयं भोजन करे ॥३१॥ इष्ट मित्र बन्धु बान्धव कुटुम्ब जनों के साथ बैठ कर बुद्धिमान् भोजन करे। इस तरह पिठोरव्रत करने से समस्त कामना को पाता है। जो-जो इस लोक में इष्ट वस्तु है वह सब प्राप्त करता है ॥३२॥ हे वत्स! यह उत्तम पिठोरव्रत मैंने आपसे कहा। यह समस्त काम समृद्धि को देनेवाला है इसके समान दूसरा व्रत नहीं है ॥३३॥ श्री शिवजी को प्रीतिकर ऐसा व्रत न हुआ और न होवेगा।

दक्षिणां दद्यात्स्वयं भोजनमाचरेत् ॥३१॥ इष्टबन्धुजनैः सार्धं कुटुम्बसहितो बुधः ॥ एवं कृते विधाने तु सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥ यद्यदिष्टतमं लोके तत्सर्वं लभते नरः ॥३२॥ एतत्ते कथितं वत्स पिठोरव्रतमुत्तमम् ॥ व्रतेनानेन सदृशं सर्वकामसमृद्धिदम् ॥३३॥ शिवप्रीतिकरं चैव न भूतं न भविष्यति ॥ भित्तौ यद्यल्लिखेद्वस्तु तत्तदाप्नोति निश्चितम् ॥३४॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे अमावास्यायां पिठोरव्रतकथनं नाम पञ्चविंशोऽध्यायः ॥२५॥

हे वत्स! भित्ती में जो-जो वस्तु लिखता है वह-वह वस्तु उसको अवश्य मिलती है ॥३४॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ईश्वरसनत्कुमारसंवादे श्रावणमासमाहात्म्ये व्या. आ. 'विद्यारत्न' पं० माधवप्रसादव्यासकृतायां भाषाटीकायां पिठोरव्रतकथनं नाम पञ्चविंशोऽध्यायः ॥२५॥

शिवजी सनत्कुमारजी से बोले कि हे वत्स ! श्रावणमास अमावास्या के दिन जो कुछ कर्तव्य है और प्रसङ्गवश जो कुछ स्मरण हो गया है उसको भी मैं आपसे कहूँगा ॥१॥ प्रथम महाबली पराक्रमी जगद्विध्वंसक देवतोच्छेदकारी (देव-विध्वंसक) अनेक दुष्ट दैत्यों के साथ ॥२॥ नन्दीश्वर पर सवार होकर मैंने बहुत बार युद्ध किया परन्तु महाबली महा-

ईश्वर उवाच ॥ यत्कर्तव्यं नभोमासि अमावास्यादिने भवेत् ॥ प्रसङ्गतश्च यच्चान्यत्स्मृतं तदपि ते ब्रुवे ॥१॥ पुरा नानाविधैर्दैत्यैर्महाबलपराक्रमैः ॥ जगद्विध्वंसकैर्दुष्टैर्देवतोच्छेदकारिभिः ॥२॥ संग्रामा बहवो जाता आरुह्य वृषभं शुभम् ॥ महासत्त्वो महावीर्यो न कदाचिज्जहौ च माम् ॥३॥ अन्धकासुरयुद्धे तु तेन छिन्नतनुः कृतः ॥ भिन्नत्वग्रुधिरस्रावी प्राणमात्रावशेषितः ॥४॥ तथापि धैर्यमालम्ब्य यावद्धन्मि च तं खलम् ॥ उवाह तावन्मां नन्दी तस्य तज्ज्ञातवानहम् ॥५॥ हत्वा तमन्धकं दैत्यं तुष्टोऽहं नन्दिनं

पराक्रमी नन्दीश्वर ने संग्राम में कभी मुझको नहीं छोड़ा ॥३॥ जब अन्धकासुर के युद्ध में अन्धकासुर ने नन्दीश्वर के शरीर को छिन्न-भिन्न कर दिया और शरीर के भेदन से रुधिर बहने लगा तथा प्राणमात्र शेष रह गया ॥४॥ फिर भी जब तक मैं दुष्ट अन्धकासुर के वध करने में लगा रहा तब तक धैर्य धारण कर नन्दीश्वर ने मेरा वहन किया और मैंने नन्दीश्वर

के उस साहस को देखा ॥५॥ तो मैं अन्धक का वध कर नन्दीश्वर से प्रसन्न होकर बोला कि हे सुव्रत ! अर्थात् स्वव्रत के पालक ! तुम्हारे इस कर्म से मैं प्रसन्न हूँ तुम मुझसे वर मांगो ॥६॥ और तुम्हारे घाव अच्छे हो जांय, तुम नीरोग और बलवान् होवो तथा पहले से भी अधिक बल वीर्य रूप की वृद्धि होवे ॥ ७ ॥ हे सुव्रत ! जिस-जिस वर को तुम मांगोगे उस-उस को मैं अवश्य दूँगा ॥८॥ नन्दीश्वर बोले हे देवदेव ! हे महेश्वर ! मुझको कुछ भी मांगना नहीं है, हे महेश्वर !

तदा ॥ कर्मणा ते प्रसन्नोऽस्मि वरं वरय सुव्रत ॥ ६ ॥ व्रणास्ते प्रशमं यान्तु निरोगो बल-
वान्भव ॥ पूर्वस्मादपि ते वीर्यं रूपं चापि विवर्धताम् ॥ ७ ॥ यं यं वरं यांचसे त्वं तं तं
दास्याम्यसंशयम् ॥ ८ ॥ नन्दिकेश्वर उवाच ॥ ममास्ति याचनीयं न देवदेव महेश्वर ॥
ममोपरि प्रसन्नोऽसि किं वैभवमतः परम् ॥ ९ ॥ तथापि भगवन्याचे लोकोपकृतये शिव ॥
अद्यामा श्रावणस्यास्ति यस्यां तुष्टो भवान्मम ॥ १० ॥ एतस्यां वृषभाः पूज्या गोभिर्युक्ताः
सुमृन्मयाः ॥ अद्यैवामादिने जन्म कामधेनूपमं भवेत् ॥ ११ ॥ अतोऽप्यस्यां वरं देहि भव-

आप मुझपर प्रसन्न हैं अब इससे बढ़कर वैभव क्या होगा ॥ ९ ॥ फिर भी हे भगवन् ! हे शिव ! लोकोपकार के वास्ते मैं आपसे माँगता हूँ, आज श्रावण की अमावास्या के दिन आप मुझपर प्रसन्न हुए हैं ॥१०॥ इस लिये आज के दिन गौओं के साथ मिट्टी के बैलों की पूजा होनी चाहिये और आज अमावस्या के दिन कामधेनु के समान जन्म होवे ॥११॥

और भी इस अमावास्या को वर देवें कि यह अमावास्या इच्छित वर को देनेवाली हो, और आज के दिन भक्ति से प्रत्यक्ष गौ बैल की पूजा करें ॥१२॥ गेरु आदि धातु को शरीर में लगाकर अच्छी तरह भूषित करें और सींगों में सुवर्ण चांदी पट्टा आदि लगाकर भूषित करें ॥१३॥ तथा दोनों सींगों में रेशमी गुच्छों को बाधैं और चित्र विचित्र अनेक वर्ण के रङ्ग से चित्रित वस्त्र को पीठ पर ॥१४॥ आच्छादित करें तथा कण्ठ में सुन्दर मधुर शब्द वाले घण्टा को बाँधे और दिन

त्वेषेच्छितप्रदा ॥ प्रत्यक्षं वृषभा गावः पूजनीयाश्च भक्तितः ॥ १२ ॥ धातुभिर्गैरिकाद्यैश्च भूषणीयाः प्रयत्नतः ॥ शृङ्गेषु स्वर्णरौप्यादिपट्टिकाबन्धशोभनम् ॥१३॥ कौशेयगुच्छान्महतः शृङ्गयोरपि बन्धयेत् ॥ पृष्ठं नानाविधैर्वर्णैश्चित्रितेन सुवाससा ॥१४॥ आच्छादयेद्गले घण्टां बध्नीयाद्रम्यशब्दिताम् ॥ दिनाष्टांशे बहिर्नीत्वा सायं ग्रामं प्रवेशयेत् ॥ १५ ॥ पिण्यातकं च नैवेद्यं अन्यं नानाविधं च यत् ॥ अर्पयेत्तस्य भवतु गोधनं वृद्धिगं सदा ॥ १६ ॥ गावो यत्र गृहे न स्युः श्मशानसदृशं च तत् ॥ पञ्चामृतं पञ्चगव्यं न भवेद्गोरसं विना ॥ १७ ॥

के अष्टम भाग (चार घड़ी दिन रह जाने पर) में ग्राम के बाहर ले जाय, बाद सायंकाल पुनः ग्राम में ले आवे ॥१५॥ खली बिनौले आदि का नैवेद्य और अनेक प्रकार का अन्न अर्पण करे। जो कोई इस कृत्य को करे, उसके यहाँ सदा गौ धन की वृद्धि होवे ॥१६॥ जहां पर गौ न होवें वह स्थान श्मशान के सदृश कहा जाय और गोरस के बिना पञ्चामृत तथा

पञ्चगव्य की सिद्धि नहीं हो ॥१७॥ और गोबर के लेपन विना गृह अत्यन्त पवित्र नहीं हो तथा पिपीलिका (चिऊँटी) आदि जीवों का उपद्रव विशेष होता रहे ॥ १८ ॥ जहां गोमूत्र का प्रोक्षण नहीं हो वहां ये उपद्रव होते रहें। हे सुरो-त्तम ! हे महादेव ! गोरस के विना भोजन का रस ही क्या है ? ॥१६॥ हे प्रभो ! यदि प्रसन्न हैं तो ये सभी वर मुझको देवें। उस समय नन्दी के वचनों को सुनकर मैं अधिक प्रसन्न हुआ ॥ २० ॥ और मैने यह कहा कि हे वृषश्रेष्ठ !

सम्मार्जनं पूततमं गोमयेन विना न हि ॥ पिपीलिकादिजन्तूनामुपसर्गाश्च तत्र हि ॥१८॥
प्रोक्षणं यत्र गोमूत्रान्न भवेच्च सुरोत्तम ॥ भोजनस्य महादेव को रसो गोरसं विना ॥१६॥
एतेऽन्येऽपि वरा देयाः प्रसन्नोऽसि यदि प्रभो ॥ इति नन्दिवचः श्रुत्वा तुष्टोऽहमधिकं तदा
॥२०॥ सर्वमस्तु वृषश्रेष्ठ यथा ते याचितं तथा ॥ अन्यच्च शृणु भो नदिन् नामास्य तु
दिनस्य यत् ॥ २१ ॥ न वाह्यते यो वृषभः केनचित्कर्मणि क्वचित् ॥ तृणमश्नन्पिबन्नीरं
तूष्णीं यो वर्धते वृषः ॥२२॥ महावीरश्च बलवान् पोल इत्युच्यते हि सः ॥ तन्नाम्नेदं दिनं

आपने जो कुछ मांगा है वह सब पूर्ण होवे, हे नन्दिन् ! और भी सुनिये। आज के दिन का जो नाम है ॥ २१ ॥ जो बैल किसी कर्म में न लगाया जाय और वह बैल तृण खाता तथा जल पीता इच्छानुसार विचरता है ॥ २२ ॥ वह महावीर बलवान् पोल नामसे कहा जाता है और हे नन्दिन् ! उसके नाम से आज का दिन भी (पोल नाम से) प्रसिद्ध

होगा ॥ २३ ॥ पोला दिन में इष्ट बन्धुजनों के साथ महान् उत्सव करे। हे वत्स ! उस दिन के लिये इन श्रेष्ठ वरों को मैंने दिया, इसलिये यह दिन लोगों से पोला नाम से श्रेष्ठ दिन समझा जायगा ॥ २४ ॥ आज के दिन समस्त कामना को देने वाला बैलों का महान् उत्सव करे। इसके बाद आज के दिन कुशग्रहण की विधि कहूँगा ॥२५॥ श्रावण अमा-

नन्दिन् पोला इति भविष्यति ॥ २३ ॥ तत्रोत्सवो महान्कार्य इष्टबन्धुजनैः सह ॥ इति दत्ता मया धत्स्व वराः श्रेष्ठा हि तद्दिने ॥ तेन श्रेष्ठदिनं चैतत्पोलासंज्ञं मतं जनैः ॥ २४ ॥ अत्रोत्सवो महान्कार्यो वृषाणां सर्वकामदः ॥ अतः परं प्रवक्ष्यामि अस्यामेव कुशग्रहम् ॥ २५ ॥ नभोमासस्य दर्शे तु शुचिर्दर्भान्समाहरेत् ॥ अयातयामास्ते दर्भा विनियोज्याः पुनः पुनः ॥२६॥ कुशाः काशा यवा दूर्वा उशीराश्च सकुन्दकाः ॥ गोधूमा व्रीहयो मौञ्ज्या दश दर्भाः सबल्वजाः ॥ २७ ॥ विरिञ्चिना सहोत्पन्न परमेष्ठीनिसर्गज ॥ नुद पापानि सर्वाणि दर्भ स्वस्तिकरो भव ॥२८॥ एवं सन्मन्त्रमुच्चार्य ततः पूर्वोत्तरामुखः ॥ हुंफट्कारेण

वास्या के दिन पवित्र होकर कुशा को उखाड़ करले आने से वे कुशा पुनः पुनः काम में लाये जाने पर भी पवित्र और ताजा बने रहते हैं ॥२६॥ कुश काश यव दूर्वा उसीर (खश) कूदक गोधूम (गेहूँ) चावल मूँज और वल्व (घास) ये दश दर्भ के भेद हैं ॥ २७ ॥ हे ब्रह्मा के स्वभाव से उत्पन्न दर्भ ! आप ब्रह्मा के साथ उत्पन्न हो, हे दर्भ ! मेरे सब

पापों को नाश करो और स्वस्तिकर हो ॥२८॥ इस तरह मन्त्र को कहकर पूर्व उत्तर के मध्य ईशान कोण को मुख कर 'हुं, फट्' मन्त्र से एक नार उखाड कर कुशों को उखाड़े ॥ २९ ॥ जिन कुशों का अग्रभाग हो और वे सूखे न हों ऐसे हरित वर्ण के कुशा पितृकर्म में और जड़रहित कुशा देवकार्य में तथा जपादि कर्म में रक्खे ॥ ३० ॥ दैव पित्र्य कर्म में सात पत्र के कुशा उत्तम कहे हैं और बीच के पत्र न हों, ऐसे अग्रभाग सहित प्रादेश (१२ अङ्गुल) प्रमाण के कुश पवित्र

मन्त्रेण सकृच्छित्त्वा समुद्धरेत् ॥ २९ ॥ अच्छिन्नाग्रा अशुष्काग्राः पत्रे तु हरिताः स्मृताः ॥ अमूला देवकार्येषु प्रयोज्याश्च जपादिषु ॥ ३० ॥ सप्तपत्राः कुशाः शस्ता दैवे पित्र्ये च कर्मणि ॥ अनन्तगर्भिणौ साग्रौ प्रादेशौ च पवित्रके ॥ ३१ ॥ चतुर्भिर्दर्भपिञ्जूलैः पवित्रं ब्राह्मणस्य तु ॥ एकैकं न्यूनमुद्दिष्टं वर्णे वर्णे यथाक्रमम् ॥३२॥ सर्वेषां वा भवेद् द्वाभ्यां पवित्रं ग्रन्थिशोभितम् ॥ इदं तु धारणार्थं स्यात्पवित्रं कथितं तव ॥३३॥ दर्भद्वयं तु सर्वेषां भवेदुत्पवनाय च ॥ पञ्चाशता भवेद्ब्रह्मा तदर्धेन तु विष्टरः ॥ ३४ ॥ निष्काश-

में ग्राह्य हैं ॥३१॥ चार कुश का पवित्र ब्राह्मण के लिये कहा है और इतर क्षत्रियादि वर्ण के लिए क्रम से एक-एक कुश कम कर देवे ॥३२॥ अथवा सभी ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्रके लिये दो दर्भ का शोभन ग्रन्थियुक्त पवित्र बनावे, ऐसा धारण योग्य पवित्र का विधान मैंने तुमसे कहा ॥३३॥ और उत्पवन कर्म के लिये सभी वर्णों का पवित्र दो दर्भ का होता है तथा पचास

दर्भ का ब्रह्मा और २५ दर्भ का विष्टर कहा है ॥३४॥ आचमन के समय पवित्र को हाथ से नहीं निकालना चाहिये। विकिर, अग्निकरण और पाद्य कर्म के अन्त में पवित्र का त्याग कर दे ॥३५॥ दर्भ के समान पुण्य फलदाता दूसरा नहीं है और दर्भ का ना पवित्र पापनाशक है तथा जितने दैव पित्र्य कर्म हैं वे सब दर्भ के अधीन हैं ॥३६॥ ऐसे दर्भों का अमावास्या के दिन ग्रहण करे तो वे दर्भ सदा ताजे बने रहते हैं। इससे अधिक श्रावण अमावास्या का वर्णन

नीयं नो हस्तादाचमे तु पवित्रकम् ॥ विकिरेऽग्नौ कृते चैव कृते पाद्ये तु सन्त्यजेत् ॥३५॥ नास्ति दर्भसमं पुण्यं पवित्रं पापनाशनम् ॥ दर्भाधीनानि कर्माणि दैवपित्र्याणि सर्वशः ॥३६॥ तादृग्विधानां दर्भाणाममायां ग्रहणं भवेत् ॥ अयातयामता चैव किं वर्ण्याऽमा नभस्यतः ॥३७॥ इत्येतत्कथितं कृत्यममायां श्रावणे तु यत् ॥ अन्यच्च श्रावणे कृत्यं तच्चापि कथयामि ते ॥३८॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे अमायां वृषभपूजनं कुशग्रहणं नाम षड्विंशतितमोऽध्यायः ॥२६॥

क्या करें ॥३७॥ हे वत्स ! यह श्रावण अमावास्या के दिन का कृत्य कहा और जो श्रावण मास का कृत्य है उसको भी मैं कहता हूँ ॥३८ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे व्या. श्रा. 'त्रिद्यागल' पं. माधवप्रसादव्यासकृतायां भाषाटीकायां अमायां वृषभपूजनं कुशग्रहणं नाम षड्विंशतितमोऽध्यायः ॥ २६ ॥

शिवजी सनत्कुमारजी से बोले कि हे वत्स ! अब इसके बाद श्रावणमास में कर्क सिंह संक्रान्ति का होना और उसमें जो कुछ कृत्य कहा है उसको भी मैं आपसे कहता हूँ ॥१॥ कर्क संक्रान्ति से लेकर सिंह की संक्रान्ति तक समस्त नदी रजस्वला हो जाती हैं इसलिये उस समय उन नदियों में स्नान नहीं करना चाहिये, परन्तु समुद्र से सम्बन्ध रखने वाली नदियों में यह दोष नहीं होता है ॥२॥ कुछ महर्षियों का कहना है कि कर्क संक्रान्ति से लेकर दक्षिण दिशा को

ईश्वर उवाच ॥ अथातः श्रावणे कर्कसिंहसंक्रान्तिसम्भवः ॥ प्राप्ते तत्र हि यत्कृत्यं तच्चापि कथयामि ते ॥१॥ सिंहकर्कटयोर्मध्ये सर्वा नद्यो रजस्वलाः ॥ तासु स्नानं न कुर्वीत वर्जयित्वा समुद्रगाः ॥२॥ अगस्त्योदयपर्यन्तं केचिदूचुर्महर्षयः ॥ यावन्नोदेति भगवान्दक्षिणाशाविभूषणः ॥३॥ तावद्रजोवहा नद्य अल्पतोयाः प्रकीर्तिताः ॥ या शोषमुपगच्छन्ति ग्रीष्मे तु सरितो भुवि ॥४॥ तासु प्रावृषि न स्नायाद्पूर्णे दशवासरे ॥ धेनुः सहस्राण्यष्टौ च गतिर्यासां स्वतो न हि ॥५॥ न ता नदीशब्दवाच्या गर्तास्ते परिकीर्तिताः ॥ प्रारम्भे

भूषित करने वाले अगस्त्य भगवान् के उदय तक नदी रजस्वला रहती हैं ॥ ३ ॥ ग्रीष्म ऋतु में पृथिवी की जो नदी सूख जाती हैं वे थोड़े जलवाली नदी तबतक रजस्वला रहती हैं ॥ ४ ॥ जिन नदियों की स्वतः गति आठ हजार धनुष (३२००० हाथ) नहीं है उन नदियों में कर्क संक्रान्ति से लेकर दस दिन तक वर्षा ऋतु में स्नान नहीं करे ॥ ५ ॥

ऐसी नदियों को नदी नहीं कहना इनको गर्त (गड्ढा) शब्द से कहना । और कर्क संक्रान्ति के आरम्भ काल में महानदी रजस्वला होती हैं ॥ ६ ॥ जैसे तीन दिन स्त्रियां अशुद्ध रहकर चतुर्थ दिन शुद्ध होती हैं वैसे ही महानदी भी तीन दिन आरम्भ में अशुद्ध रहकर बाद शुद्ध हो जाती हैं । हे मुने ! उन महानदियों को मैं कहूँगा, आप सावधान होकर सुनिये ॥७॥ गोदावरी, भीमरथी, तुङ्गभद्रा, वेणिका, तापी और पयोष्णी ये ६ नदी विन्ध्य पर्वत के दक्षिण में हैं ॥८॥ भागीरथी,

कर्कसंक्रान्तेर्महानद्यो रजस्वलाः ॥६॥ त्रिदिनं तु चतुर्थेऽह्नि शुद्धाः स्युर्योषितो यथा ॥ महानदीः प्रवक्ष्यामि शृणुष्वावहितो मुने ॥७॥ गोदावरी भीमरथी तुङ्गभद्रा च वेणिका ॥ तापी पयोष्णी विन्ध्यस्य दक्षिणे षट् प्रकीर्तिताः ॥८॥ भागीरथी नर्मदा च यमुना च सरस्वती ॥ विशोका च वितस्ता च मध्यस्योत्तरतोऽपि षट् ॥६॥ द्वादशैता महानद्यो देवर्षिक्षेत्रसम्भवाः ॥ महानद्यो देविका च कावेरी वञ्जरा तथा ॥१०॥ कृष्णा रजस्वला एताः कर्कटादौ त्र्यहं नृप ॥ कर्कटादौ रजोदुष्टा गौतमी वासरत्रयम् ॥११॥ चन्द्रभागा

नर्मदा, यमुना, सरस्वती, विशोका और वितस्ता ये ६ महानदी विन्ध्य पर्वत के उत्तर में हैं ॥ ६ ॥ ये बारह महानदी देवर्षि क्षेत्र से प्रादुर्भूत हैं और देविका, कावेरी, वञ्जरा और ॥ १० ॥ कृष्णा ये चार महानदी कर्क संक्रान्ति होनेपर एक दिन रजस्वला होती हैं और गौतमी नदी कर्क संक्रान्ति से तीन दिन रजस्वला होती हैं ॥११॥ चन्द्रभागा, सती, सिन्धु,

शरयू, नर्मदा, गङ्गा, यमुना, प्लक्षजाला और सरस्वती ॥ १२ ॥ ये नौ नदी और नद नाम से प्रसिद्ध जो शोण, सिन्धु, हिरण्य, कोकिल, आहित, घर्घर ॥१३॥ शतद्रु ये सात पावन नद हैं । वे रजस्वला नहीं होते हैं । धर्मरूप जलवाली गङ्गा यमुना और सरस्वती ॥१४॥ सभी अवस्था में गुप्त रजोदोष वाली होती हैं, इसलिये ये सदा पवित्र हैं और जो नदी के

सती सिन्धुः शरयूर्नर्मदा तथा ॥ गङ्गा च यमुना चैव प्लक्षजाला सरस्वती ॥ १२ ॥ रजसा नाभिभूयन्ते ये चान्ये नदसंज्ञिताः ॥ शोणः सिधुर्हिरण्याख्यः कोकिलाऽऽहित-घर्घरा ॥ १३ ॥ शतद्रुश्च नदा सप्त पावनाः परिकीर्तिताः ॥ गङ्गा धर्मद्रवः पुण्या यमुना च सरस्वती ॥ १४ ॥ अन्तर्गता रजोदोषाः सर्वावस्थासु चामलाः ॥ अपामयं रजोदोषो न भवेत्तीरवासिनाम् ॥ १५ ॥ जलं रजोदुष्टमपि गङ्गातोयेन पावनम् ॥ अजा गावो महिष्यश्च योषितश्च प्रसूतिकाः ॥ १६ ॥ भूमेर्नवोदकं चैव दशरात्रेण शुध्यति ॥ अभावे कूपवापीनामन्यासां च पयोऽमृतम् ॥ १७ ॥ रजोदुष्टेऽपि वयसि ग्रामभोगो न दुष्यति ॥

तटवासी हैं उनको यह रजस्वलाजन्य दोष नहीं लगता है ॥१५॥ रजोदुष्ट भी जल गङ्गाजल के मिल जाने से पावन हो जाता है । बकरी गो महिष (भैंस) प्रसूति स्त्री ॥ १६ ॥ पृथिवी पर का नूतन जल दश रात्रि के बाद शुद्ध होता है । जहाँ कूप बावली नहीं हो वहाँ नदियों का जल अमृत तुल्य है ॥ १७ ॥ रजोदूषित काल में भी ग्रामवासियों को दोष

नहीं होता और दूसरे के द्वारा जल निकालने पर भी रजोदोष नहीं होता है ॥१८॥ उपाकर्म (श्रावणीकर्म), उत्सर्ग, प्रातःस्नान, विपत्ति, चन्द्रग्रहण, सूर्यग्रहण काल में रजोदोष नहीं होता है ॥१९॥ इसके बाद सिंहसंक्रान्ति के होनेपर गोप्रसव का फल कहूँगा। सिंह के सूर्य होनेपर जिसकी गौ प्रसूता होती है ॥ २० ॥ उसकी ६ मास में अवश्य मृत्यु

अन्येन चोद्धृते नीरे रजोदोषो न विद्यते ॥ १८ ॥ उपाकर्मणि चोत्सर्गे प्रातःस्नाने विपत्सु च ॥ चन्द्रसूर्यग्रहे चैव रजोदोषो न विद्यते ॥ १९ ॥ अतः परं प्रवक्ष्यामि सिंहे गोप्रसवो यदि ॥ भानौ सिंहगते चैव यस्य गौः सम्प्रसूयते ॥ २० ॥ मरणं तस्य निर्दिष्टं षड्भिर्मासैर्न संशयः ॥ तत्र शान्तिं प्रवक्ष्यामि येन सम्पाद्यते सुखम् ॥ २१ ॥ प्रसूतां तत्क्षणादेव तां गां विप्राय दापयेत् ॥ ततो होमं प्रकुर्वीत घृताक्तै राजसर्षपैः ॥ २२ ॥ आहुतीनां घृताक्तानां तिलानां जुहुयात्ततः ॥ सहस्रेण व्याहृतिभिरष्टसंख्याधिकेन च ॥२३॥ सोपवासः प्रयत्नेन दद्याद्विप्राय दक्षिणाम् ॥ सिंहराशौ गते सूर्ये गोप्रसूतिर्यदा भवेत् ॥२४॥

हो जाती है, इसलिये उस समय कर्तव्य शान्ति को मैं कहूँगा जिसके करने से सुख होता है ॥२१॥ जिस समय गौ प्रसूता हो उसी क्षण में उस गौ को ब्राह्मण के लिये दे देवे और बाद पीली सरसों घी से हवन करे ॥२२॥ और एक हजार आठ आहुति घृत तिल की व्याहृति मन्त्र से देवे ॥२३॥ तथा उपवास करे और विप्र को दक्षिणा अवश्य देवे। जब सिंह

राशि के सूर्य होनेपर गौ प्रसूता हो ॥२४॥ तब कुछ अनिष्ट अवश्य होता है उसके शान्त्यर्थ शान्ति को करे। 'अस्यावामा' सूक्त से और 'तद्विष्णोः' मन्त्र से ॥२५॥ एक सौ आठ आहुति तिल घृत की देवे और मृत्युञ्जय विधान से दस हजार आहुति देवे ॥ २६ ॥ श्रीसूक्त या शान्तिसूक्त से स्नान करे। इस तरह गोप्रसव शान्ति करने से किसी तरह का भय

तदाऽनिष्टं भवेत्किंचित्तच्छान्त्यै शान्तिकं चरेत् ॥ अस्यावामेति सूक्तेन तद्विष्णोरिति मन्त्रतः ॥२५॥ जुहुयाच्च तिलाज्येन शतमष्टोत्तराधिकम् ॥ मृत्युञ्जयविधानेन जुहुयाच्च तथाऽयुतम् ॥२६॥ श्रीसूक्तेन ततः स्नायाच्छान्तिसूक्तेन वा पुनः ॥ एवं कृतविधानेन न भयं जायते क्वचित् ॥२७॥ एवमेव नभोमासि सूयेत वडवा दिने ॥ अत्रापि शान्तिकं कार्यं तदा दोषो विनश्यति ॥२८॥ कर्के सिंहे नभोदानमथ वक्ष्ये शुभप्रदम् ॥ घृतधेनुप्रदानं च कर्कटस्थे दिवाकरे ॥२९॥ ससुवर्णं छत्रदानं शस्तं सिंहे निगद्यते ॥ श्रावणे

नहीं होता ॥२७॥ इसी तरह श्रावण मास में दिन के समय घोड़ी प्रसूता (ब्याती) होती है। तो शान्ति करने से दोष का नाश हो जाता है ॥२८॥ अब श्रावण मास में कर्क या सिंह की संक्रान्ति होने पर शुभप्रद दान को कहूँगा। कर्क की संक्रान्ति में घृतधेनु दान करे ॥२९॥ और सिंह संक्रान्ति में सुवर्ण और छत्र का दान करे तथा श्रावण में वस्त्र का दान सहान

फलदायक कहा है ॥३०॥ श्रावण मास में श्रीधर भगवान् के प्रीत्यर्थ घृत, घृतकुम्भ, घृतधेनु और फलों को विद्वान् ब्राह्मण को देवे ॥३१॥ मेरे प्रसन्नार्थ अन्य भी दान इस मास में करने से अन्य मासों की अपेक्षा अक्षय फल देनेवाले होते हैं ॥३२॥ बारह मासों में ऐसा प्रिय दूसरा मास नहीं है। श्रावण मास के आने के समय मैं प्रतीक्षा किया करता

वस्त्रदानस्य कीर्तितं सुमहत्फलम् ॥३०॥ घृतं च घृतकुम्भाश्च घृतधेनुः फलानि च ॥ श्रावणे श्रीधरप्रीत्यै दातव्यानि विपश्चिते ॥ ३१ ॥ अन्यान्यपि च दानानि मत्तोपाय कृतानि च ॥ अक्षय्यफलदानि स्युरन्यमासेभ्य एव हि ॥ ३२ ॥ द्वादशस्वपि मासेषु नास्ति चैतादृशः प्रियः ॥ आगच्छति नभोमासि प्रतीक्षां च करोम्यहम् ॥३३॥ करिष्यते व्रतं योऽत्र स मे प्रियतरो भवेत् ॥ ब्राह्मणानां विधू राजा सूर्यः प्रत्यक्षदैवतम् ॥३४॥ ममाक्षिणी तयोरत्र संक्रान्ती भवतो यतः ॥ कर्कसंज्ञा सिंहसंज्ञा माहात्म्यं किमतः परम्॥३५॥

हूँ ॥३३॥ जो इस मास में व्रत करेगा वह मेरा अधिक प्रिय होगा। कारण यह है कि चन्द्रमा ब्राह्मणों के राजा और सूर्य प्रत्यक्ष देवता हैं ॥३४॥ सिंहाधिपति सूर्य और कर्काधिपति चन्द्रमा हैं तथा कर्क सिंह संक्रान्ति इस मास में दोनों मेरे नेत्र होते हैं अतएव उसकी कर्कसंज्ञा और सिंहसंज्ञा हुई। इससे अधिक क्या माहात्म्य कहूँ? ॥३५॥ इस मास में

जो एक मास प्रातःस्नान करता है उसको बारह मास में प्रातःस्नान करने का फल मिलता है ॥३६॥ जब श्रावण मास में मनुष्य प्रातःस्नान नहीं करता है तो उसके बारह मास के कृत कार्य निष्फल हो जाते हैं ॥३७॥ हे महादेव ! हे दया-सिन्धो ! श्रावण मास में संयम में स्थित होकर मैं प्रातःस्नान करूँगा, हे प्रभो ! आप निर्विघ्न इस कार्य को सम्पन्न करें॥३८॥

प्रातः स्नानं माससमात्रमत्र यः कुरुते नरः ॥ द्वादशस्वपि मासेषु प्रातःस्नानफलं लभेत् ॥३६॥ न करोति नभोमासि प्रातःस्नानं यदा नरः ॥ द्वादशस्वपि मासेषु कृतं निष्फलतामियात् ॥३७॥ महादेव दयासिन्धो श्रावणे मासि संयतः ॥ प्रातःस्नानं करिष्यामि निर्विघ्नं कुरु मे प्रभो ॥३८॥ स्नात्वा शिवं समभ्यर्च्य नभोमाहात्म्यसत्कथाम् ॥ शृणुयात्प्रत्यहं भक्त्या एवं मासं नयेत्सुधीः ॥३६॥ अन्यत्र मासः कृष्णादिरत्र शुक्लादि-रिष्यते ॥ नभोमासकथायास्तु माहात्म्यं केन वर्ण्यते ॥४०॥ सप्तधापि च या वन्ध्या सा

स्नानकर शिवजी का पूजन करके श्रावणमास के माहात्म्य की कथा प्रतिदिन भक्ति से श्रवण करे, इस तरह मास को विद्वान् व्यतीत करे ॥३९॥ अन्यत्र कृष्णादि मास लिया गया है परन्तु श्रावण मास शुक्लादि इष्ट है, हे वत्स ! श्रावणमास के माहात्म्य का वर्णन कौन कर सकता है ? ॥ ४० ॥ सात प्रकार की वन्ध्या कही हैं वे वन्ध्या स्त्री यदि

इस मासव्रत को करती हैं तो उनको सुन्दर पुत्र होता है। विद्यार्थी विद्या को, बलार्थी बल को पाता है ॥ ४१ ॥ रोगी रोग मुक्त, बँधा मनुष्य बन्धन से मुक्त हो जाता है। धनार्थी धन को और धर्मप्रेम को पाता है ॥४२॥ भार्यार्थी स्त्री को पाता है, हे मानद ! विशेष कहने से क्या है ? इस मास में मनुष्य जो-जो कामना करता है वह-वह अवश्य उसको

पुत्रं लभते शुभम् ॥ विद्यार्थी लभते विद्यां बलार्थी लभते बलम् ॥४१॥ रोगी चारोग्य-
माप्नोति बद्धो मुच्येत बन्धनात् ॥ धनं धनार्थी लभते धर्मे चैव रतिर्भवेत् ॥ ४२ ॥
भार्यार्थी लभते भार्यां किं बहूक्तेन मानद ॥ यद्यत्कामयते तत्तत्प्राप्नोत्यत्र न संशयः ॥४३॥
अन्ते मम पुरं प्राप्य मोदते मम सन्निधौ ॥ पूजयेद्वाचकं सम्यग्वासोऽलङ्करणादिभिः ॥४४॥
वाचकस्तोषितो येन तेनाहं तोषितः शिवः ॥ श्रुत्वा श्रावणमाहात्म्यं वाचकं यो न
पूजयेत् ॥४५॥ छिनत्ति रविजस्तस्य कर्णं स बधिरो भवेत् ॥ तस्माच्छक्त्या प्रकुर्वीत

मिलती है ॥४३॥ अन्त में मेरे लोक में आकर मेरे पास आनन्द करता है। और व्यास का पूजन वस्त्र अलङ्कार आदि से अच्छी तरह करे ॥४४॥ जिसने वाचक (व्यास) को प्रसन्न किया उसने शिव को प्रसन्न किया। जो श्रावणमास के माहात्म्य का श्रवण कर व्यास का पूजन नहीं करता है ॥ ४५ ॥ उसके कान को यमराज काट देते हैं और वह बधिर

हो जाता है, इससे यथाशक्ति व्यास का पूजन करे ॥४६॥ जो श्रेष्ठ भक्ति से इस श्रावणमास के माहात्म्य को पढ़ता है या सुनता है या सुनाता है उसको अनन्त पुण्य होता है ॥४७॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमार-

वाचकस्य सुपूजनम् ॥४६॥ इदं श्रावणमाहात्म्यं यः पठेच्छृणुयादपि ॥ श्रावयेद्वापि सद्भक्त्या तस्य पुण्यमनन्तकम् ॥ ४७ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे नदीरजोदोषसिंहगोप्रसवसिंहकर्कटश्रावणस्तुतिवाचकपूजाकथनं नाम सप्तविंशोऽध्यायः ॥२७॥

संवादे व्या. आ. 'विद्यारत्न' पं. माधवप्रसादव्यासकृतायां भाषाटीकायां नदीरजोदोषसिंहगोप्रसवसिंहकर्कटश्रावणस्तुतिवाचकपूजाकथनं नाम सप्तविंशोऽध्यायः ॥२७॥



शिवजी बोले कि हे सनत्कुमारजी ! अब मैं अगस्त्य भगवान् के अर्घ्यविधान को कहूँगा, हे ब्रह्मपुत्र ! जिसके करने से समस्त कामना को प्राप्त करता है ॥१॥ अगस्त्योदय से पूर्वकाल का निश्चय करे, जब समरात्र आठ या दस दिन रात्रि उदय होने में शेष रहे उसके पूर्व सात रात्रि पहले से ॥ २ ॥ प्रतिदिन अर्घ्य देवे, मैं उसकी विधि आपसे

ईश्वर उवाच ॥ अतः परं प्रवक्ष्यामि अगस्त्यार्घ्यविधिं परम् ॥ येन चीर्णेन वैधात्र सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥ १ ॥ कालस्तस्य च विज्ञेयः अगस्त्यस्योदयात्पुरा ॥ सप्तरात्रा-द्भवेद्यावदुदयः सप्तरात्रकम् ॥२॥ दद्यादर्घ्यं प्रत्यहं च तद्विधिं ते वदाम्यहम् ॥ प्रातः शुक्लतिलैः स्नात्वा शुक्लमाल्याम्बरो गृही ॥३॥ स्थापयेदव्रणं कुम्भं सुवर्णादिविनिर्मितम् ॥ पञ्चरत्नसमायुक्तं घृतपात्रेण संयुतम् ॥ ४ ॥ नानाभक्ष्यफलैर्युक्तं माल्यवस्त्रविभूषितम् ॥ ताम्रेण पूर्णपात्रेण उपरिस्थेन भूषितम् ॥५॥ कुम्भोद्भवस्य प्रतिमां तत्र पात्रे निधापयेत् ।

कहता हूँ । प्रातःकाल सफेद तिल से स्नानकर श्वेत वस्त्र माला को धारण कर गृहस्थ ॥ ३ ॥ सुवर्ण आदि के बने छिद्र-रहित घट की स्थापना करे और पञ्चरत्न डालकर घृतपात्र से युक्त करे ॥४॥ नाना प्रकार के भक्ष्य फल से युक्त और माला वस्त्र से भूषित कर उसके ऊपर ताम्र के पूर्णपात्र को रखकर भूषित करे ॥५॥ उसपर अगस्त्य ऋषि की प्रतिमा

स्थापित करे और वह प्रतिमा सुवर्ण की अङ्गुष्ठ प्रमाण की चतुर्भुज होनी चाहिये ॥६॥ तथा प्रतिमा स्थूल और दीर्घ हाथों से युक्त, दक्षिण मुख, जटामण्डलधारी, शान्त और शोभमान ॥७॥ हाथ में कमण्डलुधारी, अनेक शिष्यों से आवृत, कुशा अक्षतधारी और लोपामुद्रा से युक्त हो ॥८॥ उस प्रतिमा में आवाहन कर गन्ध पुष्पादि षोडशोपचारसे पूजन करे, बहुत विस्तार

अङ्गुष्ठमात्रं पुरुषं सौवर्णं च चतुर्भुजम् ॥६॥ पीनात्यायतदोर्दण्डं दक्षिणाभिमुखं मुनिम् ॥
सुशोभनं प्रशान्तं च जटामण्डलधारिणम् ॥७॥ कमण्डलुकरं शिष्यैर्बहुभिः परिवारितम् ॥
यथा दर्भाक्षतधरं लोपामुद्रासमन्वितम् ॥ ८ ॥ आवाहयेत्पूजयेच्च गन्धपुष्पादिभिस्तथा ॥
उपचारैः षोडशभिर्नैवेद्यैर्बहुविस्तरैः ॥ ९ ॥ दध्योदनबलिं दद्याद्भक्तियुक्तेन चेतसा ॥ तत-
श्चार्घः प्रदातव्यस्तस्य चैव विधिं शृणु ॥ १० ॥ सौवर्णे वाथ रौप्ये वा ताम्रे वेणुमयेऽथवा ॥
पात्रे नारिङ्गखर्जूरनारिकेलफलानि च ॥११। कूष्माण्डकारवल्लीनि कदली दाडिमानि च ॥
वृन्ताकबीजपूराणि अक्षोटाः पिस्तकास्तथा ॥ १२ ॥ नीलोत्पलानि पद्मानि कुशदूर्वाङ्कुरा-

से नैवेद्य अर्पण करे ॥९॥ भक्तियुक्त चित्त से दही चावल की बलि देवे। बाद अर्घ्य देवे, हे वत्स ! उसकी विधि सुनिये ॥१०॥ सुवर्ण चाँदी ताम्बा या वैणव पात्र में नारङ्गी, खजूर, नारियल फल ॥११॥ कूष्माण्ड (कोहड़ा) कारवल्ली (करेला) केला, अनार, वृन्ताक (भण्टा), बीजपूर (बिजोरा नीबू), अक्षोट (अखरोट), पिस्ता ॥ १२ ॥ नील कमल, कमल, कुशा,

दूर्वा और अनेक यथासाध्य फल पुष्प ॥ १३ ॥ नाना प्रकार के भक्ष्य पदार्थ, सप्त धान्य, सात अंकुर, पञ्च पल्लव, पञ्च वस्त्र ॥ १४ ॥ इन पदार्थों को रखकर पात्र का अच्छी तरह पूजन करे, घुटनों के बल से पृथिवी में स्थित होकर पात्र को मस्तक में लगाकर ॥१५॥ शिर झुकाकर अगस्त्य मुनि का ध्यान करे और भक्ति श्रद्धा पूर्वक अच्छी तरह अर्घ्य देवे ॥१६॥

स्तथा ॥ अन्यान्यपि च साध्यानि फलानि कुसुमानि च ॥ १३ ॥ नानाप्रकारभक्ष्याणि सप्तधान्यानि चैव हि ॥ सप्ताङ्कुराः पल्लवाश्च पञ्च वस्त्राणि चैव हि ॥ १४ ॥ एतान्पदार्थान् संस्थाप्य पात्रं सम्यक्प्रपूजयेत् ॥ जानुभ्यामवनिं गत्वा तत्पात्रं नम्रमूर्धनि ॥ १५ ॥ धृत्वा वाचमुखो भूत्वा ध्यायेत्कुम्भोद्भवं मुनिम् ॥ दद्यादर्घ्यं प्रयत्नेन श्रद्धाभक्तिपुरःसरम् ॥ १६ ॥ काशपुष्पप्रतीकाश वह्निमारुतसम्भव ॥ मित्रावरुणयोः पुत्र कुम्भयोने नमोऽस्तु ते ॥१७॥ विन्ध्यवृद्धिक्षयकर मेघतोयविषापह ॥ रत्नवल्लभ देवर्षे लङ्कावास नमोऽस्तु ते ॥१८॥ आतापी भक्षितो येन वातापी च महाबलः ॥ लोपामुद्रापतिः श्रीमान्योऽसौ तस्मै नमो

और यह कहे कि काश पुष्प के समान वाले ! हे अग्नि वायु से उत्पन्न ! हे मित्रावरुण के पुत्र ! हे कुम्भयोने ! आपको नमस्कार है ॥१७॥ हे विन्ध्यवृद्धि के नाशक ! हे मेघजल के विषनाशक ! हे रत्नवल्लभ ! हे देवर्षे ! हे लङ्कावास ! आपको नमस्कार है ॥१८॥ जिसने आतापी और महाबली वातापी का भक्षण किया और जो लोपामुद्रा के श्रीमान् पति हैं उनको

नमस्कार है ॥१६॥ जिसके उदय लेने से पाप विलीन हो जाते हैं और आधि (मानसी चिन्ता), व्याधि (रोग) तथा आधिभौतिक आधिदैविक आध्यात्मिक त्रिविध ताप विलीन हो जाते हैं उन अगस्त्य मुनि को नित्य नमस्कार है ॥२०॥ जिसने पहले जलजन्तुओं से पूर्ण समुद्र को सुखा दिया अर्थात् पान कर गये, ऐसे पुत्र शिष्य स्त्रीसहित अगस्त्य मुनि को नमस्कार है ॥२१॥ द्विजाति लोग वैदिक (अगस्त्यस्य नद्यः) मन्त्र से और स्त्री शूद्र पौराण मन्त्र से अगस्त्य मुनिको अर्घ्य देकर

नमः ॥ १६ ॥ येनोदितेन पापानि विलयं यान्ति चाधयः ॥ व्याधयस्त्रिविधास्तापास्तस्मै नित्यं नमो नमः ॥२०॥ यादःपूर्णः सरिन्नाथो येन वै शोषितः पुरा ॥ सपुत्राय सशिष्याय सपत्नीकाय वै नमः ॥ २१ ॥ अगस्त्यस्येदमर्घ्यं वै द्विजातिर्वेदमन्त्रतः ॥ शूद्रः पौराणमन्त्रेण दत्त्वार्घ्यं प्रणमेत्सुधीः ॥ २२ ॥ राजपुत्रि महाभागे ऋषिपत्नि वरानने ॥ लोपामुद्रे नमस्तुभ्यमर्घ्यं मे प्रतिगृह्यताम् ॥ २३ ॥ ततो होमं प्रकुर्वीत अर्घ्यमन्त्रेण मन्त्रवित् ॥ आज्येनाष्टसहस्रं वा शतमष्टोत्तरं तु वा ॥ २४ ॥ कृत्वैवं च ततोऽगस्त्यं प्रणिपत्य विसर्ज-

प्रणाम करे ॥२२॥ और यह कहे कि हे राजपुत्रि ! हे महाभागे ! हे ऋषिपत्नी ! हे वरानने ! हे लोपामुद्रे ! आपको नमस्कार है, इस मेरे अर्घ्य को ग्रहण करें ॥२३॥ बाद मन्त्रवेत्ता अर्घ्य मन्त्र से एक हजार आठ (१००८) अथवा एक सौ आठ (१०८) आहुति घृत की देवे ॥२४॥ इस तरह हवन कर अगस्त्य ऋषि को प्रणाम कर विसर्जन करे, और यह कहे कि

हे अचिन्त्य चरित्र वाले ! हे अगस्त्य ! यथावत् आपका पूजन किया है ॥२५॥ अतः इस लोक और परलोक की कार्यसिद्धि को करके आप यहां से जांय, इस तरह अगस्त्य ऋषि का विसर्जन कर उस प्रतिमा को ब्राह्मण को दे देवे ॥२६॥ ब्राह्मण वेद-वेदाङ्ग का जाननेवाला हो, दरिद्र हो, कुटुम्बी हो ऐसे ब्राह्मण को सत्कार कर देवे और मन में यह भावना करे कि द्विजरूप से अगस्त्य मुनि इसको ग्रहण करें ॥ २७ ॥ और यह कहे कि इसको अगस्त्य ऋषि ग्रहण करते और अगस्त्य

येत् ॥ अचिन्त्यचरितागस्त्य यथागस्त्यः प्रपूजितः ॥ २५ ॥ ऐहिकामुष्मिकं गत्वा कार्य-सिद्धिं व्रजस्व भोः ॥ विसर्जयित्वाऽगस्त्यं तं विप्राय प्रतिपादयेत् ॥ २६ ॥ वेदवेदाङ्गविदुषे दरिद्राय कुटुम्बिने ॥ अगस्त्यो द्विजरूपेण प्रतिगृह्णातु सत्कृतः ॥ २७ ॥ अगस्त्यः प्रतिगृह्णाति अगस्त्यो वै ददाति च ॥ उभयोस्तारकोऽगस्त्यो ह्यगस्त्याय नमो नमः ॥ २८ ॥ मन्त्रद्वयेन दद्यात्तु ब्राह्मणस्य जपेदमुम् ॥ वैदिकं पूर्वविहितं पौराणं शूद्र एव तु ॥ २९ ॥ श्वेतां धेनुं ततो दद्याद्धेमशृङ्गीं पयस्विनीम् ॥ सहवत्सां रौप्यखुरां ताम्रपृष्ठीं सुशोभनाम् ॥३०॥

ऋषि देते हैं तथा दोनों का उद्धार करने वाले अगस्त्य हैं इस लिये अगस्त्य ऋषि को नमस्कार है ॥२८॥ दोनों मन्त्रों को पढ़कर ब्राह्मणादि दान करे। विप्र वैदिक और शूद्र पौराण मन्त्र को पढ़े ॥२९॥ सुवर्ण सींग वाली, दूध देने वाली, वत्सयुक्त, चांदी के खुरवाली, ताम्र पीठवाली, शोभमान श्वेत वर्ण की गौ का दान करे ॥३०॥ और दोहन के लिये कांसे का पात्र, घण्टा

वस्त्र से युक्त कर दान करे। अगस्त्योदय के पूर्व सात दिन तक अर्घ्य दान करके ॥३१॥ सातवें दिन दक्षिणा के साथ धेनु दान करे। इस प्रकार निष्काम होकर सात वर्ष अर्घ्य दान करने से जन्म भय से रहित हो जाता है ॥३२॥ सकाम होकर करने से रूप आरोग्य से युक्त चक्रवर्ती राजा होता है। ब्राह्मण चार वेद ६ शास्त्र का ज्ञाता होता है ॥३३॥ क्षत्रिय

कांस्यदोहनिकायुक्तां घण्टावस्त्रसमन्विताम् ॥ एवं सप्तदिनं दत्त्वा अर्घ्यं प्रागुदयान्मुने ॥३१॥ सप्तमे दिवसे धेनुं प्रदद्याच्च सदक्षिणाम् ॥ एवं कृत्वा सप्तवर्षमकामश्चेन्न जन्मभाक् ॥ ३२ ॥ सकामश्चक्रवर्तित्वं रूपारोग्यसमन्वितः ॥ ब्राह्मणः स्याच्चतुर्वेदसर्वशास्त्रविशारदः ॥ ३३ ॥ क्षत्रियः पृथिवीं सर्वां प्राप्नोत्यर्णवमेखलाम् ॥ वैश्यश्चेद्धान्यनिष्पत्तिं गोधनं चापि विन्दति ॥ ३४ ॥ शूद्राणां धनमारोग्यं सत्यं चैवाधिकं भवेत् ॥ स्त्रीणां पुत्राः प्रजायन्ते सौभाग्यं गृहमृद्धिमत् ॥ ३५ ॥ विधवानां महत्पुण्यं वर्धते विधिनन्दन ॥ कन्या भर्तारमाप्नोति व्याधेर्मुच्येत दुःखितः ॥३६॥ येषु देशेष्वगस्त्यस्य पूजनं क्रियते नरैः ॥ तेषु

समुद्र पर्यन्त पृथ्वी को प्राप्त करता है, वैश्य धान्य सम्पत्ति और गोधन को पाता है ॥३४॥ शूद्र धन आरोग्य सत्य को पाता है, स्त्री-जाति पुत्र सौभाग्य ऋद्धि सम्पन्न गृह को पाती है ॥ ३५ ॥ हे विधिनन्दन! विधवा को महान् पुण्य होता है, कन्या पति को पाती है और दुःखित मनुष्य व्याधि से मुक्त होता है ॥३६॥ जिस देश में मनुष्य अगस्त्य का पूजन

करते हैं उन देशों में मेघ कामवर्षी होते हैं ॥ ३७ ॥ और इति (अति वृष्टि आदि) नहीं होते तथा व्याधि नष्ट हो जाते हैं । जो अगस्त्य के अर्घ्य का पाठ करते हैं और जो श्रवण करते हैं । ३८। वे सभी पाप से मुक्त होकर इस पृथ्वी पर वास करते हैं और हंस युक्त विमान से श्रेष्ठ मनुष्य होकर स्वर्ग को जाते हैं ॥ ३९ ॥ और जो निष्काम होकर जीवन पर्यन्त

देशेषु पर्जन्यः कामवर्षी प्रजायते ॥ ३७ ॥ ईतयः प्रशमं यान्ति नश्यन्ति व्याधयस्तथा ॥ पठन्ति ये त्वगस्त्यस्य अर्घ्यं शृण्वन्ति केचन ॥ ३८ ॥ ते सर्वे पापनिर्मुक्ताश्चिरं स्थित्वा महीतले ॥ हंसयुक्तविमानेन स्वर्गे यान्ति नरोत्तमाः ॥३९॥ यावज्जीवं करिष्यन्ति निष्कामं मुक्तिभागिनः ॥ ४९ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे अगस्त्यार्घ्यविधिर्नामाष्टाविंशोऽध्यायः ॥ २८ ॥

करते हैं वे लोग मुक्ति के भागी होते हैं ॥४०॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे व्या. आ. 'विद्यारत्न' पं० माधवप्रसादव्यासकृतायां भाषाटीकायां अगस्त्यार्घ्यविधिर्नामाष्टाविंशोऽध्यायः ॥ २८ ॥

शिवजी बोले कि हे सनत्कुमारजी ! मैं उक्त व्रतकर्मों के सम्बन्ध में यह कहूँगा कि किस समय क्या करना चाहिये, हे महामुने ! उसको आप सुनिये ॥ १ ॥ श्रावणमास में तिथि किस काल से युक्त होनी चाहिये और किस काल में प्रधान कर्म क्या है ? पूजा और जागरणादि कैसे करना चाहिये ? ॥ २ ॥ कतिपय व्रतों के समय का

ईश्वर उवाच—सनत्कुमार वक्ष्यामि उक्तानां व्रतकर्मणाम् ॥ काले कदा तु किं कार्यं तच्छृणुष्व महामुने ॥ १ ॥ का तिथिः श्रावणे मासि किं कालव्यापिनी भवेत् ॥ ग्राह्या प्रधानं किं तत्र पूजा जागरणादिकम् ॥ २ ॥ तत्तत्कथनकाले तु केषाञ्चित् काल ईरितः ॥ नक्तव्रतस्य कालस्तु उक्तस्तद्व्रतकर्मणि ॥ ३ ॥ प्रधानं रात्रिभुक्तिस्तु भोजनाभावयुग्दिवा ॥ उद्यापनं तु सर्वेषां तत्तद्व्रततिथौ भवेत् ॥ ४ ॥ असम्भवे तु पञ्चाङ्गं शुद्धे स्यादधिवासनम् ॥ द्वितीयदिवसे कुर्याद्धोमादिविधिमादृतः ॥ ५ ॥ धारणा पारणा चैव ह्रासवृद्धी न कारणम् ॥ नभःशुक्लप्रतिपदि सङ्कल्प्योपोषणं चरेत् ॥ ६ ॥

कथन किया है। विशेष रूप से व्रतकर्म में नक्तव्रत का ही समय कहा है ॥ ३ ॥ प्रधान रूप से व्रत में रात्रि भोजन और दिन में भोजनाभाव कहा है और उद्यापन तत्तद् व्रतों की तिथि में होना कहा है ॥ ४ ॥ यदि उक्त तिथि में कारणवश उद्यापन के न होने पर पञ्चाङ्ग द्वारा शुभ समय में एक दिन पहले अधिवासन करके दूसरे दिन विधिवत् हवनादि कर्म को करे ॥ ५ ॥ धारणा पारणा व्रत में तिथिह्रास और वृद्धि कारण नहीं है। तथा श्रावण

शुक्ल प्रतिपत् के दिन सङ्कल्प करके उपवास को करे ॥ ६ ॥ दूसरे दिन भोजन करे इस क्रम से पारण के दिन भोजन में हविष्यान्न (मूङ्ग चावल) ग्रहण करे ॥ ७ ॥ यदि पारणा के दिन एकादशी आ जाय तो तीन उपवास करे। रविवार व्रत पूजन का समय प्रातःकाल ही है ॥ ८ ॥ सोमवार व्रत में सायङ्काल समय प्रधान

द्वितीयदिवसे भुक्तिस्ततोऽन्यस्मिन्नुपोषणम् ॥ एवं क्रमेण कुर्वीत हविष्याशी तु पारणे ॥ ७ ॥ एकादशीपारणाहे उपवासत्रयं तथा ॥ रविवारव्रतार्चायाः कालः स्यात्प्रातरेव हि ॥ ८ ॥ सोमवारे प्रधानः स्यात्सायङ्कालः प्रकीर्तितः ॥ भौमे बुधे गुरौ मुख्यः प्रातःकालश्च पूजने ॥ ९ ॥ शुक्रवारे पूजनं स्यात्कल्ये रात्रौ च जागरः ॥ नृसिंहपूजने मन्दे सायङ्कालश्च पूजनम् ॥ १० ॥ शनिव्रते शनेर्दाने मध्याह्नो मुख्य इष्यते ॥ हनूमतोऽपि मध्याह्नः प्रातरश्वत्थपूजनम् ॥ ११ ॥ रोटकाख्ये व्रते वत्स प्रतिपत्सोमसंयुता ॥ त्रिमुहूर्तोत्तरा सा स्यादन्यथा पूर्वयोगिनी ॥ १२ ॥ औदुम्बरी द्वितीया

है। भौम बुध गुरु के पूजन में प्रातःकाल मुख्य काल कहा है ॥ ९ ॥ शुक्रवार व्रत में प्रातःकाल पूजन का समय और रात्रि में जागरण कहा है। शनिवार के दिन नृसिंह पूजन में सायङ्काल कहा है ॥ १० ॥ शनि के व्रत और दान करने में मध्याह्न मुख्यकाल इष्ट है तथा हनुमान् जी का पूजनकाल मध्याह्न है और अश्वत्थ (पीपल) का पूजन प्रातःकाल में इष्ट है ॥ ११ ॥ हे वत्स ! रोटक व्रत में सोमयुक्त प्रतिपत् तिथि तीन मुहूर्त से अधिक ग्राह्य है

अन्यथा पूर्व की तिथि ग्राह्य है ।। १२ ।। उदुम्बर व्रत में द्वितीया सायङ्काल व्यापिनी और, तृतीयायुक्ता ग्राह्य है दोनों दिन सायङ्काल व्यापिनी होनेपर पूर्ववेधित (प्रतिपद्वेधित) ग्राह्य है ।। १३ ।। स्वर्णगौरी व्रत में चतुर्थीयुक्ता तृतीया ग्राह्य है। और गणेश व्रत में तृतीयाविद्धा चतुर्थी श्रेष्ठ होती है ।। १४ ।। नागों के पूजन में षष्ठीयुक्ता पञ्चमी

तु सायाह्नव्यापिनी मता ।। तृतीयासंयुता ग्राह्या द्वयोश्चेत्पूर्ववेधिता ।। १३ ।। तृतीया स्वर्णगौर्याख्या सा चतुर्थीयुता भवेत् ।। चतुर्थी गणनाथस्य मातृविद्धा प्रशस्यते ।। १४ ।। नागानां पूजने शस्ता षष्ठीयुक्ता च पञ्चमी ।। सूपौदनव्रते षष्ठी सायाह्ने सप्तमीयुता ।। १५ ।। मध्याह्नव्यापिनी ग्राह्या सप्तमी शीतलाव्रते ।। पवित्रारोपणेऽष्टम्यां देव्या रात्रियुता तिथिः ।। १६ ।। कुमारी नवमी नक्तव्यापिनी तु प्रशस्यते ।। आशासंज्ञा तु दशमी सा नक्तव्यापिनी भवेत् ।। १७ ।। त्याज्या विद्धैकादशी तु तत्र वेधं मुने शृणु ।। अरुणोदयवेधस्तु दशम्या वैष्णवान्प्रति ।। १८ ।। आदित्योदय-

श्रेष्ठ है, और सूपौदन व्रत में सायङ्कालव्यापिनी सप्तमीयुक्ता षष्ठी ली गई है ।। १५ ।। शीतलाव्रत में मध्याह्न व्यापिनी सप्तमी ग्राह्य है। देवी के पवित्रारोपण व्रत में रात्रियुक्ता अष्टमी तिथि ली गई है ।। १६ ।। कुमारी-व्रत में रात्रिव्यापिनी नवमी प्रशस्त है, आशा व्रत में रात्रिव्यापिनी दशमी ली गई है ।। १७ ।। और हे मुने ! दशमी विद्धा एकादशी त्याज्य है, उस एकादशी व्रत में वेध को सुनिये। वैष्णवों के यहाँ अरुणोदयकाल के दशमी का वेध

होता है ॥ १८ ॥ और स्मार्तों के यहाँ सूर्योदयकाल में दशमी का वेध होता है यह वेध निन्द्य है। रात्रि के अन्तिम प्रहर का आधा भाग अरुणोदय काल होता है ॥ १९ ॥ इस रीति से द्वादशी तिथि पवित्रारोपण कही है और अनङ्गव्रत में रात्रिव्यापिनी त्रयोदशी तिथि ली गई है ॥ २० ॥ और द्वितीय प्रहरव्यापिनी होने से अधिक

वेधस्तु स्मार्तानां निन्द्य एव सः ॥ अरुणोदयकालस्तु यामार्धं चरमां निशि ॥ १९ ॥ एवं रीत्या यस्य भवेद्द्वादशी सा पवित्रके ॥ त्रयोदशी त्वनङ्गस्य व्रते स्याद्रात्रियोगिनी ॥ २० ॥ द्वितीययामे तत्रापि सा प्रशस्ततरा भवेत् ॥ पवित्रारोपणे शम्भो रात्रिगा स्याच्चतुर्दशी ॥ २१ ॥ अतिप्रशस्ता तत्रापि निशीथव्यापिनी तु या ॥ उपाकर्मणि चोत्सर्गे पूर्णिमा श्रवणं च भम् ॥ २२ ॥ त्रिमुहूर्तं द्वितीयेऽह्नि तदा ग्राह्यं परं दिनम् ॥ नोचेदनुष्ठितः पूर्वं तैत्तिराणां च बह्वृचाम् ॥ २३ ॥ तैत्तिरीयां च यजुषां मुहूर्तत्रयगामपि ॥ उत्तरस्मिन्पूर्वमेव दिनं स्यात्कर्मणि द्वयोः ॥ २४ ॥ मुहूर्तानन्तरं

श्रेष्ठ होती है। शिवजी के पवित्रारोपण में रात्रिव्यापिनी चतुर्दशी ग्राह्य है ॥ २१ ॥ और अर्धरात्रव्यापिनी होने से अधिक श्रेष्ठ है, उपाकर्म और उत्सर्ग में पूर्णिमा तथा श्रवण नक्षत्र ग्राह्य है ॥ २२ ॥ यदि दूसरे दिन तीन मुहूर्त पूर्णिमा है तो दूसरे दिन करना। नहीं तो तैत्तिरीय शाखा वाले ऋग्वेदियों को पूर्व दिन करना चाहिये ॥ २३ ॥ और तैत्तिरीय शाखावाले यजुर्वेदियों को दूसरे दिन तीन मुहूर्त पूर्णिमा रहने पर भी उपाकर्म उत्सर्ग

दोनों कर्म पहले दिन ही करना चाहिये ॥ २४ ॥ प्रथम दिन एक मुहूर्त के बाद पूर्णिमा और श्रवण नक्षत्र का सम्बन्ध होता हो तो तथा दूसरे दिन दो मुहूर्त के अन्दर पूर्णिमा श्रवण नक्षत्र ॥ २५ ॥ समाप्त होता हो तो पहले दिन करना और सामवेदियों को अपराह्णकाल में हस्त नक्षत्र हो तो उपाकर्म उत्सर्ग करना चाहिये ॥ २६ ॥ यदि

पूर्वदिने चेत्सङ्गतिर्भवेत् ॥ पूर्णिमा श्रवणर्क्षं च मुहूर्तद्वितयात् पुरा ॥ २५ ॥ उत्तरस्मिन्समाप्तं चेत्तदा पूर्वदिनं भवेत् ॥ हस्तभं त्वपराह्णे स्याद्ग्राह्यं तत्सामवेदिभि ॥ २६ ॥ दिनद्वये तदा स्याच्चेत्पूर्वमेव दिनं भवेत् ॥ उपाकर्मप्रयोगाऽन्ते कालो दीपस्य संसदः ॥२७॥ श्रवणाकर्मणि प्रोक्तः कालः सर्पबलौ तथा ॥ पर्वणोऽह्नि भवेद्रात्रौ स्वस्वगृह्यानुसारतः ॥ २८ ॥ पौर्णिमाऽत्र प्रशस्ता वा स्यादस्तमययोगिनी ॥ हयग्रीवोत्सवे पूर्णा मध्याह्नव्यापिनी भवेत् ॥ २९ ॥ अपराह्णव्यापिनी स्याद्रक्षाबन्धनकर्मणि ॥ चन्द्रोदयव्यापिनी च

हस्त नक्षत्र दोनों दिन अपराह्णकाल व्यापिनी हो तो पूर्व दिन करना, और उपाकर्म के बाद सभादीप करना इष्ट है ॥ २७ ॥ जो काल श्रावणी-कर्म के लिये कहा है वही सर्पबलि के लिये भी इष्ट है परन्तु रात्रि में अपने २ गृह्यसूत्रानुसार करना चाहिये ॥ २८ ॥ श्रवणाकर्म और सर्पबलि के लिये सूर्यास्तकाल व्यापिनी पूर्णिमा श्रेष्ठ है और हयग्रीव-जयन्ती के लिये मध्याह्न व्यापिनी पूर्णिमा ग्राह्य है ॥ २९ ॥ तथा रक्षाबन्धन

कर्म में अपराह्णकाल व्यापिनी पूर्णिमा ली गई है और सङ्कष्ट चतुर्थी चन्द्रोदय व्यापिनी ग्राह्य है ॥ ३० ॥ जब दोनों दिन चन्द्रोदय व्यापिनी चतुर्थी हो अथवा दोनों दिन न होवे तो पूर्व दिन करना क्योंकि तृतीया के दिन चतुर्थी होने से महान् पुण्य फल को देती है ॥ ३१ ॥ हे वत्स! व्रती मनुष्य गणनाथको प्रसन्न करने

स्यात् सङ्कष्टचतुर्थिका ॥ ३० ॥ उभयत्र यदा सा स्यान्न स्याद्वा पूर्वगा भवेत् ॥ चतुर्थी च तृतीयायां महापुण्यफलप्रदा ॥ ३१ ॥ कर्तव्या व्रतिभिर्वत्स गणनाथसुतोषिणी ॥ गणेश-गौरीबहुलाव्यतिरिक्ताः प्रकीर्तिताः ॥ ३२ ॥ चतुर्थ्यः पञ्चमीविद्धा देवतान्तरपूजने ॥ निशीथव्यापिनी ग्राह्या कृष्णजन्माष्टमी तिथिः ॥३३॥ षट्प्रकारा तु सर्वत्र निर्णये तिथि-रिष्यते ॥ पूर्णव्याप्तिर्द्वयोरह्नोरव्याप्तिरपि केवला ॥ ३४ ॥ अंशतश्च समा व्याप्तिरंशतो वि-षमा तथा ॥ सम्पूर्णव्याप्तिरेकत्र अंशतश्च परेऽहनि ॥३५॥ अंशतो व्याप्तिरेकत्र अव्याप्तिरपरत्र

वाली चतुर्थी का व्रत करें। गणेश-चतुर्थी; गौरी-चतुर्थी, बहुला-चतुर्थी के अतिरिक्त ॥३२॥ चतुर्थी अन्य देवता के पूजन में पञ्चमी विद्धा ली गई है। और श्रीकृष्ण के पूजन में अर्धरात्र व्यापिनी अष्टमी तिथी ली गई है ॥३३॥ तिथि-निर्णय के सम्बन्ध में सर्वत्र ६ प्रकार माने गये हैं, एक तो दोनों दिन पूर्ण व्याप्ति १, दोनों दिन केवल अव्याप्ति २, ॥३४॥ दोनों दिन अंश से सम व्याप्ति ३, और दोनों दिन अंश से विषम व्याप्ति ४, पहले दिन पूर्ण व्याप्ति और दूसरे दिन अंश से व्याप्ति

५, ॥३५॥ पहले दिन अंश से व्याप्ति और दूसरे दिन अव्याप्ति ६, इन ६ पक्षों में तीन पक्षों में जैसे सन्देह नहीं है उस प्रकार को कहते हैं, आप उसको सुनिये ॥३६॥ विषमव्याप्ति में अंशव्याप्ति से अधिकव्याप्ति उत्तम होती है, एक दिन जो तिथि पूर्णा है वही दूसरे दिन अपूर्णा कही जाती है ॥ ३७ ॥ और एक दिन अव्याप्ति तथा दूसरे दिन अंशव्याप्ति है तो

च ॥ पक्षत्रये तु सन्देहो यथा नास्ति तथा शृणु ॥३६॥ अंशतो विषमव्याप्तावधिका व्याप्तिरुत्तमा ॥ एकत्र पूर्णा चान्यत्र सा पूर्णा चोच्यते तिथिः ॥३७॥ अव्याप्तिरंशतो व्याप्तिस्तत्रांशव्याप्तिरुत्तमा ॥ अंशव्याप्तिर्यदा पूर्णा अंशतश्च समा यदा ॥ ३८ ॥ संशयस्तत्र भवति तस्य स्यान्निर्णयो भिदा ॥ क्वचिद्भवेद्युग्मवाक्याद्वारनक्षत्रयोगतः ॥ ३९ ॥ प्रधानद्वययोगेन पारणायोगतः क्वचित् ॥ जन्माष्टम्यां तु सन्देहे त्रिपक्षे तु परा भवेत् ॥ ४० ॥ अष्टम्यन्ते पारणं स्याद्यदि यामत्रयात्पुरा ॥ समाप्येत तदूर्ध्वं चेदष्टम्युषसि पारण ॥४१॥ व्रतं पिठोरीसंज्ञाऽमा मध्याह्नव्यापिनी शुभा ॥ वृषभाणां पूजने तु अमा सायन्तनी भवेत् ॥ ४२ ॥

अंशव्याप्ति उत्तम होती है । जब अंशव्याप्ति हो और वह सम हो तो ॥३८॥ वहाँ सन्देह होता है तो भेदवाक्य से निर्णय करना । कहीं युग्म वाक्य से, कहीं वार नक्षत्र के योग से ॥ ३९ ॥ कहीं प्रधान द्वययोग से, कहीं पारणा योग से, जन्माष्टमी व्रत में सन्देह होने पर इन पक्षों में परा होनी चाहिये ॥४०॥ अष्टमी के अन्त में पारण करना, यदि तीन प्रहर के बाद अष्टमी समाप्त होती है अथवा बाद तक रहती है तो प्रातःकाल में पारण करना ॥४१॥ पिठोर व्रत में अमावास्या

मध्याह्नव्यापिनी शुभ है और वृषमपूजन में सायङ्काल व्यापिनी अमावास्या ली गई है ॥४२॥ और दर्भों के सञ्चय करने में सङ्गवकाल लिया गया है तथा सूर्य की कर्कसंक्रान्ति में ३० घड़ी पूर्व पुण्यकाल माना गया है ॥ ४३ ॥ और सिंह-संक्रान्ति में १६ घड़ी पूर्व और १६ घड़ी पर में पुण्यकाल होता है। कुछ ऋषि लोग सिंह संक्रान्ति के पूर्व १६ घड़ी

दर्भाणां सञ्चये चैव सङ्गवः काल ईरितः ॥ त्रिंशत्पुण्याः पूर्वनाड्यः कर्कसंक्रमणे रवेः ॥ ४३ ॥ पुण्याः षोडश नाड्यस्तु सिंहे पूर्वाः परा अपि ॥ केचिदिच्छन्ति मनुयः पूर्वा एव तु षोडश ॥ ४४ ॥ अगस्त्यार्घ्यस्य कालस्तु व्रत एव प्रकीर्तितः ॥ अयं ते कथितो वत्स कर्मणां कालनिर्णयः ॥४५॥ य इदं शृणुतेऽध्यायं यश्चापि परिकीर्तयेत् ॥ नभोमासि-कृतानां स व्रतानां लभते फलम् ॥४६॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वर-सनत्कुमारसंवादे व्रतनिर्णयकालनिर्णयकथनं नाम एकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥

पुण्यकाल मानते हैं ॥ ४४ ॥ और अगस्त्य ऋषि के अर्घ्य का काल व्रत-विधान के साथ ही कह दिया है। हे वत्स ! यह कर्मों का काल-निर्णय मैंने आपसे कहा ॥ ४५ ॥ जो इस अध्याय को सुनता है और जो इसको कहता है वह श्रावण मास के सभी व्रतों के करने के फल को पाता है ॥ ४६ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे व्या. आ. 'विद्यारत्न' पं० माधवप्रसादव्यासकृतायां भाषाटीकायां व्रतनिर्णयकालनिर्णयकथनं नाम एकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥२९॥

शिवजी सनत्कुमारजी से बोले कि हे वत्स ! मैंने आपसे कुछ श्रावणमास का माहात्म्य कहा है और समस्त मास का वर्णन सैकड़ों वर्ष में भी नहीं हो सकता ॥१॥ मेरी इस प्रिया सती ने दक्षप्रजापति के यज्ञ में शरीर की आहुति दी बाद हिमालय की कन्या होकर इस श्रावणमास का सेवन किया जिससे फिर मुझको प्राप्त किया ॥ २ ॥ इसलिये यह

ईश्वर उवाच—कियत्कियत्ते कथितं माहात्म्यं श्रावणस्य हि ॥ सर्वं वर्णयितुं शक्यं नालं वर्षशतैरपि ॥ १ ॥ प्रियेयं मम कल्याणि हुत्वा दक्षाध्वरे तनुम् ॥ हिमाचलसुता जाता तेनेयं योजिता मया ॥ २ ॥ सेवने श्रावणे मासि तेन मे प्रियकृन्नभः ॥ नातिशीतो नाति चोष्णः श्रावणे मासि भूपतिः ॥३॥ उद्धूलयित्वा स्वतनुं सर्वां श्रौतेन भस्मना ॥ श्वेतेनाथ जलार्द्रेण त्रिपुण्ड्रान् द्वादशांश्चरेत् ॥४॥ भाले वक्षसि नाभौ च बाह्वोः कूर्परयोस्तथा ॥ मणिबन्धद्वये चैव कण्ठे मूर्धनि पृष्ठके ॥ ५ ॥ मानस्तोकेति मन्त्रेण सद्योजातादिमन्त्रतः ॥

मास मुझको अति प्रिय है, इस मास में न तो अत्यन्त शीत और न अत्यन्त ऊष्ण होता है। इस श्रावणमास में जो राजा या प्रजा ॥ ३ ॥ वैदिक मन्त्र से श्वेत भस्म को अपने शरीर में लिप्त करता है अथवा जल मिलाकर द्वादश त्रिपुण्ड्र धारण करता है ॥ ४ ॥ मस्तक, छाती, नाभि, दोनों बाहु दोनों कूर्प, दोनों मणिबन्ध (कन्धा), कण्ठ, शिर और पीठ में ॥ ५ ॥ 'मानस्तोके' मन्त्र से 'सद्योजातादि' मन्त्र से षडक्षर (ओंम् नमः शिवाय) मन्त्र से सर्वाङ्ग में

भस्म लगाकर शोभित करे ॥६॥ और १०८ रुद्राक्ष को शरीर में धारण करे। ३२ रुद्राक्ष कण्ठ में, २२ मस्तक में ॥७॥ १२ दोनों कानों में, २४ दोनो हाथ में, आठ आठ दोनों भुजा में, १ भाल में, और १ शिखा के अग्रभाग में धारण करे ॥८॥ इस तरह १०८ रुद्राक्ष से अपने शरीर को शोभित कर मेरा पूजन करे और पञ्चाक्षर मन्त्र का जप करे, हे

षडक्षरेण मन्त्रेण भस्मना शोभयेत्तनुम् ॥ ६ ॥ धारयेच्चैव रुद्राक्षानष्टाधिकशतं तनौ ॥ द्वात्रिंशद्धारयेत्कण्ठे मूर्ध्नि द्वाविंशतिस्तथा ॥ ७ ॥ कर्णद्वये द्वादशैव चतुर्विंशत्करद्वये ॥ अष्टाष्टभुजयोर्भाले एकमेकं शिखाग्रगम् ॥ ८ ॥ एवं कृत्वा तु मामर्च्य जपेत्पञ्चाक्षरं मनुम् ॥ श्रावणे मासि विप्रेन्द्र सोऽहमेव न संशयः ॥ ९ ॥ ज्ञात्वेमं मत्प्रियं मासं मम तोषाय केशवः ॥ कृष्णाष्टमी च तत्रापि मम प्रियतरा तिथिः ॥ १० ॥ देवक्या जठराच्चस्मिन्दिने प्रादुरभूद्धरिः ॥ एतत्ते कथितं लेशात्किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥११॥ सनत्कुमार उवाच—

विप्रेन्द्र! श्रावण मास में ऐसा करने से वह हम ही हैं अर्थात् उस मनुष्य को साक्षात् शिव समझना, इसमें सन्देह नहीं है ॥ ९ ॥ श्रावण मास को मेरा प्रिय समझकर इस मास में केशव का और मेरा पूजन करे, उसमें कृष्णाष्टमी मुझको अधिक प्रिय तिथि है ॥ १० ॥ इसी दिन देवकी गर्भ से हरि भगवान् प्रादुर्भूत हुए। हे विप्रेन्द्र! यह मैंने श्रावण का लेशमात्र माहात्म्य कहा है अब आप और क्या सुनना चाहते हो? ॥११॥ सनत्कुमार जी बोले कि हे पार्वतीश! श्रावण

मास के जिन कृत्यों को आपने कहा वे सब श्रवणकाल में आनन्द समुद्र में मग्न होने के कारण और बहुत होने के कारण स्मरण नहीं है ॥१२॥ इसलिए हे नाथ ! ठीक ठीक क्रम से आप कहिये जिससे क्रम से मालूम हो जाय और मैं अब सुनकर भक्ति से धारण करूँगा ॥ १३ ॥ शिवजी बोले हे विप्र ! सावधान होकर शुभ अनुक्रमणिका को सुनिये ।

यद्यत्कृतं पार्वतीश नभोमासि त्वयेरितम् ॥ आनन्दाब्धौ निमग्नत्वाद्बहुत्वाच्चावधारणा ॥१२॥ न स्थिता क्रमशो नाथ ब्रूहि सर्वं यथा तथा ॥ श्रुत्वा चाप्यवधानेन धारयिष्यामि भक्तितः ॥ १३ ॥ ईश्वर उवाच—शृणुष्वावहितो भूत्वा अनुक्रमणिकां शुभाम् ॥ आदौ प्रश्नः शौनकस्य ततः सूतस्य चोत्तरम् ॥ १४ ॥ श्रोतुर्गुणास्तव प्रश्ना निरुक्तिः श्रावणस्य च ॥ तस्य स्तुतिः पुनः प्रश्नस्तव विस्तरशो मुने ॥ १५ ॥ मम स्तुतिस्त्वत्कृता च नामनिर्वचनादिना ॥ भूयो ममोत्तरं तत्र उद्देशः क्रमतोऽखिलम् ॥१६॥ विशेषतस्तव प्रश्नस्ततो नक्तव्रते विधिः ॥ रुद्राभिषेककथनं लक्षपूजाविधिस्ततः ॥१७॥ दीपदानं परित्यागः कस्य-

प्रथम शौनक का प्रश्न है बाद सूतजी का उत्तर है ॥१४॥ श्रोता के गुण का कथन और आपके प्रश्न, तदनन्तर श्रावण की निरुक्ति और श्रावण की प्रशंसा, हे मुने ! पुनः विस्तार से आपका प्रश्न हुआ ॥१५॥ बाद आपसे मेरी स्तुति नाम निर्वचनादि सहित की गई । पुनः मेरा उत्तर, जिसमें क्रम से समस्त उद्देश हैं ॥ १६ ॥ तदनन्तर आपका विशेष रूप से

प्रश्न, बाद नक्तव्रत की विधि का कथन, रुद्राभिषेक और लक्ष पूजाविधि का कथन ॥१७॥ दीपदान माहात्म्य, तथा इस श्रावण मास में किसी प्रिय वस्तु का त्याग, रुद्राभिषेक का फल, पञ्चामृत से रुद्राभिषेक का फल ॥ १८ ॥ पृथिवी में शयन का फल, मौन व्रत का फल, धारण पारण की विधि, मासोपवास का कथन ॥ १९ ॥ सोमाख्यान में

चित्प्रियवस्तुनः ॥ फलं रुद्राभिषेकेण तथा पञ्चामृतेन च ॥ १८ ॥ फलं भूशयनस्यापि तथा मौनव्रतस्य च ॥ धारणा पारणा चैव ततो मासोपवासने ॥१९॥ सोमाख्याने ततो लक्ष-रुद्रवर्तिविधिः स्मृतः ॥ कोटिलिङ्गविधाने च व्रतं चानोदनाभिधम् ॥ २० ॥ हविष्याशन-मप्यत्र पत्रावल्यां च भोजनम् ॥ शाकत्यागो भूशयनं प्रातःस्नानं दमः शमः ॥ २१ ॥ स्फटिकादिषु लिङ्गेषु अजाजपफलं ततः ॥ प्रदक्षिणा नमस्काराद् वेदपारायणं तथा ॥२२॥ विधिः पुरुषसूक्तस्य ग्रहयज्ञविधिस्ततः ॥ रविचन्द्रकुजानां च क्रमशो व्रतविस्तरः ॥ २३ ॥

लक्षवर्ति विधि का कथन, कोटिलिङ्ग का विधान, अनोदन व्रत का कथन ॥ २० ॥ हविष्यान्न का भोजन, पत्रावली (पत्तल) पर भोजन, शाक का त्याग, पृथिवी में शयन, प्रातःकाल में स्नान, दम और शम का कथन ॥ २१ ॥ स्फटिक आदि शिवलिङ्ग में पूजन और जप का फल-कथन, प्रदक्षिणा, नमस्कार, वेद का पारायण ॥ २२ ॥ पुरुषसूक्त की विधि, ग्रहयज्ञ की विधि और रवि चन्द्र भौम का क्रम से व्रत का कथन ॥ २३ ॥ बुध गुरु का व्रत, शुक्र के दिन

जीवन्तिका का व्रत, शनि के दिन नृसिंह का व्रत, शनि का और हनुमान् का तथा पीपल का व्रत कथन ॥२४॥ रोटक-व्रत का माहात्म्य, औदुम्बर व्रत का माहात्म्य, स्वर्णगौरी व्रत का और दूर्वागणपति व्रत का कथन ॥ २५ ॥ पञ्चमी के दिन नागव्रत, षष्ठी के दिन सुपौदन व्रत, सप्तमी के दिन देवी का शीतलाव्रत और पवित्रारोपण का विधान ॥२६॥ नवमी

बुधगुर्वोर्व्रतं पश्चाच्छुक्रे जावन्तिकाव्रतम् ॥ शनौ नृसिंहस्य शनेरनिलाश्वत्थयोस्तथा ॥२४॥
रोटकव्रतमाहात्म्यं तत औदुम्बरव्रतम् ॥ स्वर्णगौरीव्रतं पश्चाद्दूर्वागणपतिव्रतम् ॥२५॥ नाग-
व्रतं च पञ्चम्यां षष्ठ्यां सूपौदनव्रतम् ॥ शीतलाख्यं व्रतं देव्याः पवित्रारोपणं ततः ॥ २६ ॥
दुर्गाकुमारीपूजा च आशाव्रतमतः परम् ॥ उभयैकादशी पश्चात्पवित्रारोपणं हरेः ॥ २७ ॥
अनङ्गस्य त्रयोदश्यां ततः शम्भोः पवित्रकम् ॥ उपाकर्मोत्सर्जने च श्रवणाकर्म चैत्र हि
॥ २८ ॥ ततः सर्पबलिर्वाजिग्रीवजन्ममहोत्सवः ॥ सभादीपस्तथा रक्षाबन्धः सङ्कटनाशने
॥ २९ ॥ व्रतं ततः कृष्णजन्माष्टमीव्रतकथानकम् ॥ व्रतं पीठोरसंज्ञं तु पोलासंज्ञं वृष-

को दुर्गाकुमारी का पूजन, बाद दशमी को आशा-व्रत, दोनों एकादशी का व्रत, द्वादशी के दिन विष्णु को पवित्रारोपण ॥२७॥ त्रयोदशी के दिन कामदेव का व्रत, चतुर्दशी के दिन शिव को पवित्रारोपण, पूर्णिमा के दिन उपाकर्म उत्सर्ग और श्रवणाकर्म का विधान कथन ॥२८॥ तथा सर्पबलि, हयग्रीव-जयन्ती का महोत्सव, सभादीप, रक्षाबन्धन और गणेश

का सङ्कष्टनाशन व्रत ॥२६॥ तदनन्तर कृष्णजन्माष्टमी व्रत और कथाविधान, पिठोर व्रत, पोलानामक वृषभ व्रत, ॥३०॥ दर्भ (कुशा) का संग्रह, नदियों का रजस्वला काल कथन, सिंह संक्रान्ति काल में गोप्रसव होने पर शान्ति, कर्क सिंह श्रावण में ॥३१॥ दान स्नान मासमाहात्म्य श्रवण का कथन, व्यास का पूजन, अगस्त्य ऋषि को अर्घ्य का विधान ॥ ३२ ॥

व्रतम् ॥३०॥ दर्भाणां संग्रहश्चैव नदीनां सरजस्कता ॥ सिंहे गोप्रसवे शान्तिः कर्कसिंहनभेषु च ॥ ३१ ॥ दानानि स्नानमाहात्म्यं माहात्म्यश्रवणं तथा ॥ ततो वाचकपूजा च अगस्त्यार्घ्यं ततः परम् ॥३२॥ कर्मणां च व्रतानां च कालनिर्णय ईरितः ॥ एतन्मासि कृतानां स व्रतानां फलभाग्भवेत् ॥ ३३ ॥ सनत्कुमार हृदये धारयस्व क्रमं शुभम् ॥ ३४ ॥ य इमं शृणुतेऽध्यायं माहात्म्यं श्रावणस्य यत् ॥ तत्फलं समवाप्नोति व्रतानां चैव यत्फलम् ॥३५॥ किं बहूक्तेन विप्रर्षे श्रावणो विहितं तु यत् ॥ तस्य चैकस्य कर्तापि मम प्रियतरो भवेत् ॥ ३६ ॥ सूत उवाच—सनत्कुमारः पोत्वैवं शिववाक्यामृतं परम् ॥ श्रुतिद्वारा चाप

कर्म और व्रतों के फल का निर्णय कथन और मासमाहात्म्य श्रवण से मास के समस्त व्रतों के फल का भागी होता है ॥३३॥ हे सनत्कुमार जी ! इस क्रम को आप अपने हृदय में धारण करिये ॥ ३४ ॥ जो इस अध्याय को सुनता है और श्रावणमास के माहात्म्य को सुनता है वह मास के समस्त व्रतों के फल को पाता है ॥३५॥ हे विप्रर्षे ! विशेष कहने से

क्या है। केवल इस श्रावण मास के एक किसी व्रत के करने से वह मेरा अधिक प्रिय हो जाता है ॥३६॥ सूतजी शौनकादि ऋषियों से बोले कि हे शौनकादि ऋषिगण ! सनत्कुमारजी इस शिववाक्य रूप श्रेष्ठ अमृत का कर्णद्वार से पानकर आनन्द को प्राप्त हुये और कृतकृत्य हो गये ॥३७॥ और वह देवर्षिश्रेष्ठ सनत्कुमार जो श्रावणमास की स्तुति तथा शिव का हृदय में

मोदं कृतकृत्यो बभूव ह ॥३७॥ नभोमासं स्तुवन् शम्भुं स्मरन् स्वहृदये शिवम् ॥ शङ्करेणाभ्यनुज्ञातो ययौ देवर्षिसत्तमः ॥ ३८ ॥ इदं रहस्यं परमं नाख्येयं यस्य कस्यचित् ॥ भवतो योग्यतां दृष्ट्वा मयैतत्कथितं प्रभो ॥३९॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे अनुक्रमणिकाकथनं नाम त्रिंशोऽध्यायः ॥३०॥ इति श्रावणमासमाहात्म्यं समाप्तम् ॥ श्रीसाम्बसदाशिवार्पणमस्तु ॥

स्मरण करते शिव की आज्ञा से अपने स्थान को चले गये ॥ ३८ ॥ हे प्रभो ! इस रहस्य को जिस किसी से नहीं कहना चाहिये। हे प्रभो ! मैंने आपकी योग्यता देखकर कही है ॥३९॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे श्रावणमासमाहात्म्ये ईश्वरसनत्कुमारसंवादे न्या. आ. 'विद्यारत्न' पं. माधवप्रसादव्यासकृतायां भाषाटीकायां अनुक्रमणिकाकथनं नाम त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३० ॥

मुद्रक—प० बैकुठनाथ भार्गव, आनन्दसागर प्रेस, गायघाट, बनारस १

इति

श्रावणमासमाहात्म्यम् ।

॥ भाषाटीका सहितं समाप्तम् ॥

प्रकाशक-भार्गवपुस्तकालय, गायघाट, बनारस १. (ब्रांच-कचौड़ीगली, बनारस) ।